Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिसंबर १९७५

सारिका

समाजवादी देशों की कहानियों का खंड

•

राजेंद्र यादव की आत्मरचना

•

अन्य लेखक :
माचवे
उर्मिकृष्ण
स्वदेश दीपक
सविता बैनर्जी
आदि

•

सभी स्थायी स्तंभ

टाइम्स ऑफ इंडिया प्रकाशन
१ रुपया

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीतिए

हिन्द पॉकेट बुक्स
इनामी प्रतियोगिता में भाग लेकर बड़े-बड़े इनाम प्राप्त कीजिए

पहला इनाम : **मोटर साईकल**
दूसरा इनाम : **रेफ्रीजरेटर**
तीसरा इनाम : **टेलिविज़न**
चौथा इनाम : **रिकार्ड प्लेयर**

पांचवां स्थान पाने वाले बीस व्यक्तियों को हिन्द पॉकेट बुक्स द्वारा संचालित घरेलू लाइब्रेरी योजना का सदस्य बनाकर एक वर्ष के लिए प्रत्येक मास 12 रुपये मूल्य की पुस्तकें मुफ्त भेंट की जाएंगी।

आपको क्या करना है?

- सामने के पृष्ठ पर दिए गए छः प्रश्नों के उत्तर देते समय कोष्ठकों □ में ✓ का चिह्न लगाएं।
- केवल दस शब्दों में यह कथन या स्लोगन लिखें कि हिन्द पॉकेट बुक्स आपको क्यों पसन्द हैं।

नियम

1. प्रत्येक प्रतियोगी को हिन्द पॉकेट बुक्स के किसी भी विक्रेता से कोई-सी तीन पुस्तकें खरीदकर कैशमीमो अपने हल के साथ अवश्य भेजना होगा।
2. एक से अधिक हल भी भेजे जा सकते हैं, परन्तु हर हल के साथ तीन हिन्द पॉकेट बुक्स की कैशमीमो अवश्य लगी होनी चाहिए अन्यथा हल पर विचार नहीं किया जाएगा।
3. घरेलू लाइब्रेरी योजना के सदस्य भी इस प्रतियोगिता में भाग ले सकते हैं, परन्तु उन्हें अपनी मासिक किस्त की पुस्तकों के अतिरिक्त तीन पुस्तकें और मंगवानी होंगी।
4. इस प्रतियोगिता में हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि० के कार्यकर्ता भाग नहीं ले सकते।
5. प्रतियोगिता का निर्णय संस्था द्वारा नियुक्त जजों का पेनल करेगा जो सर्वमान्य होगा।

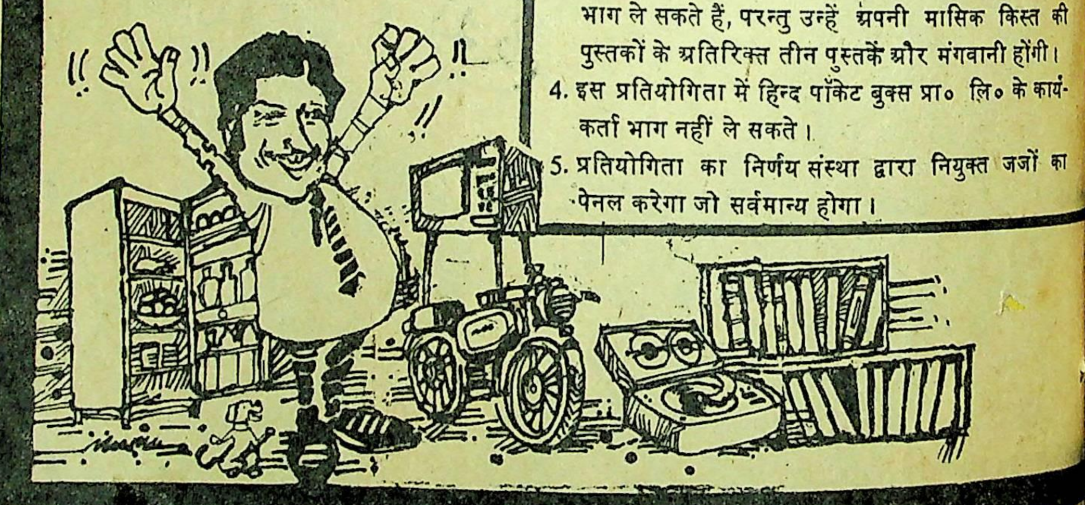

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हल भेजने की अन्तिम तारीख 15 दिसम्बर, 1975

अपना हल भेजने के लिए प्रतियोगिता कूपन यहां से काटें या अपने नगर के पुस्तक-विक्रेता से प्राप्त करें।

प्रतियोगिता कूपन

1. हिन्द पॉकेट बुक्स के संबंध में केवल दस शब्दों में यह कथन (स्लोगन) लिखिए कि हिन्द पॉकेट बुक्स आपको क्यों पसन्द हैं। क्योंकि............

2. हिन्द पॉकेट बुक्स की स्थापना कब हुई थी? ☐ 1957 में ☐ 1958 में ☐ 1960 में
3. हिन्द पॉकेट बुक्स की ओर से प्रकाशित सबसे पहली पुस्तक कौन-सी थी? ☐ गीतांजलि ☐ भ्रमर वाणी ☐ आभा
4. हिन्द पॉकेट बुक्स द्वारा यह विज्ञापन छपने तक कुल कितनी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं? ☐ 850 से 1150 ☐ 1150 से 1800 ☐ 1800 से 2500
5. हिन्द पॉकेट बुक्स किन-किन भाषाओं में प्रकाशित होती हैं? ☐ हिन्दी ☐ अंग्रेजी ☐ पंजाबी ☐ बंगाली ☐ गुजराती ☐ उर्दू
6. क्या हिन्द पॉकेट बुक्स की ओर से सभी प्रकार के ज्ञान-विज्ञान का साहित्य प्रतिमास प्रकाशित होता है? ☐ हां ☐ नहीं

यदि घरेलू लाइब्रेरी योजना के सदस्य हैं तो सदस्यता-नम्बर लिखें............

आपका नाम............ सा·

पता............

इनामों की घोषणा फरवरी के अंतिम सप्ताह के 'धर्मयुग' में की जाएगी।

कैशमीमो सहित अपने हल इस पते पर भेजें—

प्रतियोगिता

हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा. लिमिटिड

जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली- 110032

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपना भविष्य सुनिश्चित करायें

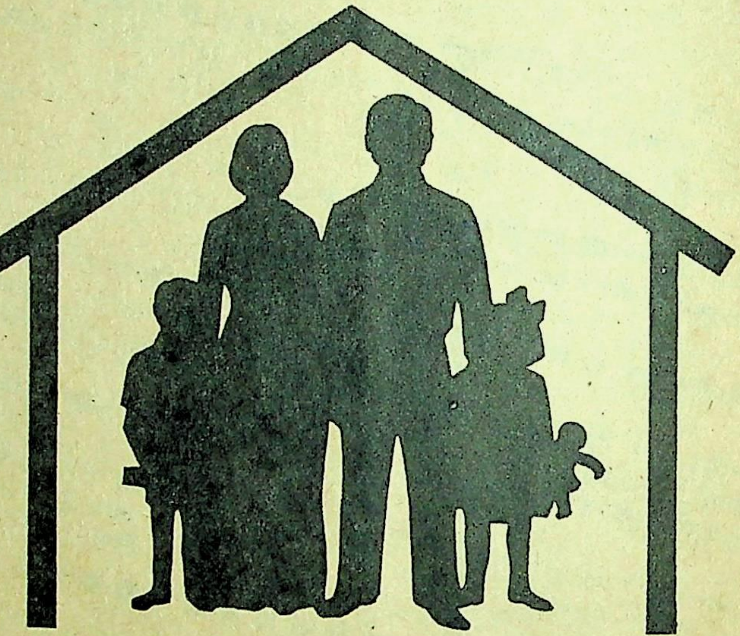

सुरक्षित, सहायक, मित्र-बैंक में बचत की आदत डालें।

आज जो सपना है, कल साकार हो सकता है।

हमारी काउन्टर पर उपलब्ध पुस्तिकाओं से एक अच्छी आदत अपनावें।

दि चार्टर्ड बैंक

अमृतसर, बम्बई, कलकत्ता, कालीकट, कोचीन, दिल्ली, कानपुर, मद्रास, नई दिल्ली, वास्को-डा-गामा

स्टैण्डर्ड एण्ड चार्टर्ड
बैंकिंग ग्रुप का एक सदस्य

sekai/cb/282

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारिका के वार्षिक ग्राहकों के लिए विशेष छूट

'सारिका' के प्रत्येक अंक का मूल्य एक रुपया है. किंतु वर्ष भर के लिए वार्षिक शुल्क मात्र दस रुपये है, यानी साल भर में २ अंक मुफ्त। यदि आप दो साल के लिए ग्राहक बनते हैं, तो शुल्क केवल उन्नीस रुपये है यानी दो वर्षों में ५ अंक मुफ्त, हां, तीन वर्ष के लिए शुल्क केवल सत्ताईस रुपये है.

आपके लिए सारिका की विशेष दरें इस प्रकार हैं:

एक वर्ष — १० रुपये
दो वर्ष — १९ रुपये
तीन वर्ष — २७ रुपये
विदेश में समुद्री डाक से एक वर्ष — २२रुपये

कृपया यह कूपन जरूरी राशि के चेक/ड्राफ्ट/मनी-आर्डर के साथ साथ आज ही भेज दें—

सर्कुलेशन मैनेजर,
सारिका, टाइम्स आफ इंडिया बिल्डिंग, बम्बई-४००००१

कृपया मुझे/हमें निम्न पते पर एक वर्ष/दो वर्षों/तीन वर्षों के लिए 'सारिका' भेजने की व्यवस्था करें. १० रुपये/१९ रुपये/२७ रुपये चेक/ड्राफ्ट/मनीआर्डर द्वारा भेजे जा रहे हैं.

नाम..
....
पता..
....
....
हस्ताक्षर....................................

सामंती युग के अवशेष: देवदासी प्रथा—एक विशिष्ट खंड

पश्चिम महाराष्ट्र और विशेष रूप से गोवा के मंदिरों में देवदासी प्रथा सामंती युग के अवशेष के रूप में अब भी जीवित है. यह प्रथा अंध-विश्वासों के सहारे भारतीय नारी के शोषण का एक घिनौना इतिहास प्रस्तुत करती है. इस अंक में आप देवदासियों से संबंधित कुछ कहानियां, संस्मरण और लेख पढ़ सकेंगे साथ ही अन्य कहानियां भी.

इस अंक के लेखक हैं—
लक्ष्मणराव सरदेसाई, मधु मंगेश कर्णिक, जयवंत दलवी, प्र. श्री. नेरूरकर, शंकरराव खरात, बी. आर. तलाशीकर चंद्रकिरण सौनरेक्सा, मधुकर गंगाधर, हृदय लानी, ए. रमेश चौधरी 'आरिगपूडि', अनीता औलक आदि.
साथ ही—
आद्यकथाकार (मराठी) तथा सभी स्थायी स्तंभ.

सारिका

जनवरी १९७६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारिका

कहानियों और कथा-जगत की संपूर्ण पत्रिका

दिसंबर, १९७५

वर्ष : १५ : पूर्णांक : १७६

समाजवादी देशों की कहानियों का विशिष्ट खंड

कहानियां

शोलोखोव : निशानी (सोवियत) १२

याकोव सीगेल : बहुत दिन बीते (सोवियत) १६

फ्रिजेश कारिथी : एकतरफा प्यार (हंगरी) २४

लायोश बिरो : वियना का हीरा (हंगरी) ३०

आइवो एंद्रिच : जीपा का पुल (यूगोस्लाविया) ३२

मीरोस्लाव क्रलैझः बैरक नंबर पांच (यूगोस्लाविया) ३६

● ●

अन्य कहानियां

सविता बैनर्जी : गलत नंबर ४४

स्वदेश दीपक : एक आधुनिक औरत की मौत ४८

अमरेंद्र 'अमर' : एक और वापसी ६०

उर्मि कृष्ण : नये सफेद गुलाब ६४

सारंग बारोट : चोर ६८

ब्रजकुमार मित्तल : पारदर्शी चेहरा ७२

विकेश निझावन : न चाहते हुए ८०

प्रभाकर माचवे : हमारे भी हैं मेहमां कैसे-कैसे ८४

लघु कथाएं

अपनी-अपनी हैसियत (जर्मन) १८

हीरोइन की तलाश : (रूसी) २१

ज्ञान ही शक्ति है („) २३

आलसी बिल्ली („) २३

ज्ञानवान बटिया पत्थर („) ४

समानता („) २३

वजन (जर्मन) २९

शिव ओम का छुरा ४७

भिक्षा और दान ७५

प्रायश्चित ८३

● ●

स्थायी स्तंभ

पाठकीय ८

गर्दिश के दिन : राजेंद्र यादव ५२

विविधा : ललितमोहन अवस्थी ८६

● ●

गोष्ठी रिपोर्ट

पांचवां समांतर लेखक सम्मेलन ८९

● आमुख : आर. एन. शर्मा

संपादक : कमलेश्वर

● मुख्य उप-संपादक : आनंद प्रकाश सिंह

● उप-संपादक : अवधनारायण मुद्गल, सुदीप

● कार्यालय-सहयोगी : श्रीनाथ पांडेय, देवचंद्र झा, भिकाजी शिर्के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठकीय

सितंबर अंक

● हेमराज काचा, पो–बालंभा जि. जामनगर से लिखते हैं :

'**सारिका**' के ठीक प्रारंभ से ही मैं उसका पाठक रहा हूं. '**सारिका**' के कई रूप देखे-परखे हैं. मेरे खयाल से '**सारिका**' कभी जन-जीवन से अलग नहीं रही.

सितंबर की उर्दू कहानियां तो अत्यंत सुंदर, सरस, रोचक और कलात्मक रहीं. बेदी जी ने '**चश्मे-बद् दूर**' में कमाल कर दिखाया है. सामान्य को असामान्य रूप दे दिया है. '**समानांतर**' की नीलम और अनु को ले कर सुकीर्ति गुप्ता ने अस्तित्व के पहलू को एकदम मार्मिक रूप दे दिया है. . .कि बिना प्रेम का दैहिक-समर्पण ही अस्तित्व का खंडन है. . .महेंद्रनाथ की '**बड़ा आदमी**' हमारे राजनैतिक-सामाजिक परिवेश को कितना उजागर करती है! फालतू आदमी की कहानी '**गिरवी रखी धूप**' मन को कोंचने वाली एक सुंदर कृति है. '**निबंध**' की अनीता की भांति हम सब भी सीमित-असीमित या स्वीकार-नकार की भावना से पीड़ित हैं. ☐

● हरिभक्त, ६६ वल्लभ नगर कालोनी, पंजवाणी भवन, गुमानपुरा कोटा (राज.) से लिखते हैं :

सितंबर की '**सारिका**' में कैमरे से खींचे गये सभी चित्र बहुत पसंद आये एवं कहानियां '**परिंदे पकड़ने वाली गाड़ी**' (गयास अहमद गद्दी), '**कांच का आदमी**' (श्रवणकुमार वर्मा) विशेष पसंद आयीं. मेहरुन्निसा परवेज की कहानियां भी पसंद आती हैं. चंद्रा औलक की '**बोझ**' भी बहुत अच्छी लगी. ☐

● अशोक शर्मा, जीवन बीमा निगम, धमतरी (म. प्र.) से लिखते हैं :

उर्दू कहानियों का विशिष्ट खंड सराहनीय है. सभी कहानियों ने प्रभावित किया, पर गयास अहमद गद्दी की कहानी विशेष रूप से प्रशंसनीय है, एक-एक कर सारे मासूम परिंदे जब खूबसूरत गाड़ी में कैद कर लिये जायेंगे, तब माहौल कितना गमगीन और मनहूस हो जायेगा, यह सोच कर ही दहशत होती है.

इसी तरह श्रवणकुमार वर्मा की कहानी आदमी की असहायता और उसके गुम होते हुए वजूद को रेखांकित करती है.

'**चश्मे-बद् दूर**' और '**बड़ा आदमी**' कथ्य की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण होते हुए भी अनावश्यक रूप से लंबी हो गयी है.

हिंदी खंड की कहानियों को पढ़ कर आज की कथा-लेखिकाओं की कूप-मंडूकता से खीझ होती है. क्या उन्हें 'नारी शरीर के उन्मुक्त प्रदर्शन, पति-पत्नी के चटखते रिश्ते और घर-मोहल्ले की घुटन के अलावा और कुछ कथनीय नहीं दिखाई देता?

लेखिकाओं की इस भीड़ में एक अपवाद हैं, मेहरुन्निसा परवेज, जो इस सीमित दायरे के बाहर भी सोचती हैं. उनकी कहानी '**गिरवी रखी धूप**' इस खंड की श्रेष्ठ कहानी कही जा सकती है, जो गलत अर्थ-व्यवस्था की गर्म धूप से तड़कते हुए नाजुक रिश्तों की मार्मिक टूटन को अभिव्यक्त करती है.

'**निबंध**' पीढ़ी-दर-पीढ़ी बदलते हुए जीवन मूल्यों की कहानी है. लघुकथाओं में '**दुकानदारी**' सबसे ज्यादा सटीक है. ☐

● प्रो. पी. जे. शर्मा. २३८२, गली-जसवंत, कटड़ा दूलो, अमृतसर से लिखते हैं :

हिंदी साहित्य में मेरी रुचि बचपन से ही है! आज दिन तक न जाने कितने ही उपन्यास व पत्रिकाएं पढ़ डालीं, लेकिन जब से मेरे परम मित्र प्रो. एस. डी. साहा ने मेरा ध्यान कहानियों व कथा-जगत की प्रसिद्ध व संपूर्ण पत्रिका '**सारिका**' की तरफ आकर्षित किया है, मैं निस्संदेह कह सकता हूं कि '**सारिका**' जैसी बेजोड़ पत्रिका आज दिन तक पढ़ने का मुझे सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ है! लघुकथाएं '**सारिका**' की मुख्य विशेषता हैं! इतनी बड़ी-बड़ी बातों को लघुकथाओं के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप में कह डालना '**सारिका**' का नया प्रयोग है.

'**सारिका**' की लोकप्रियता का यह प्रत्यक्ष प्रमाण है कि इसे प्राप्त करना ही कठिन है, क्योंकि इसके अंक हाथों-हाथ बिक जाते हैं! ☐

● दिलीपकुमार जागेश्वर, जागेश्वर नगर, कटिहार (बिहार) से लिखते हैं:

सितंबर अंक प्रत्येक दृष्टि से उत्तम था. आम आदमी की कुछ न कर पा सकने की त्रासदी और घुटन उसे कितना असहाय बना जाती है! आर्थिक बिखराव के कारण पैदा हुई दारुण स्थिति ने आज सामान्य जन को कहीं का नहीं रख छोड़ा है. गयास अहमद गद्दी की कहानी '**परिंदा पकड़ने वाली गाड़ी**' इस संदर्भ में कहीं अंदर तक चोट कर गयी है. '**उसकी हत्या**', '**बोझ**' '**समानांतर**' आदि कहानियां आम आदमी के आसपास घूमती हैं. राजेंद्रसिंह बेदी की 'चश्मे-बद् दूर' और महेंद्र नाथ की '**बड़ा आदमी**' बड़े सशक्त ढंग से अपनी-अपनी बातों को रख जाती हैं. ☐

● 'सुधाकर' २७३, गली आर्य समाज, बाजार सीताराम, दिल्ली – ६ से लिखते हैं :

सितंबर अंक में बेदी साहब की कहानी '**चश्मे-बद् दूर**' विशुद्ध हास्य का विशुद्ध उदाहरण. अपनी २३ साल की जिंदगी में इतनी सशक्त हास्य-कहानी या रचना मैंने कभी नहीं पढ़ी थी. बेदी साहब की कहानियों में मैंने अकसर एक अनजाना अधूरापन-सा पाया है. उनकी कहानियां सहज ही प्रश्नात्मक स्थितियां पैदा कर जाती हैं. पर '**चश्मे-बद दूर**' का रोचक प्रस्तुतीकरण, लिखने की शैली, कहने की कला सब कुछ बेदी साहब का लोहा मानने पर मजबूर करते हैं. श्रवणकुमार का दहशत भरा '**कांच का आदमी**' पाठकों को भी अपनी स्थिति से जोड़ने में सफल है. फकीर मोहन सेनापति की '**रेवती**' (प्रथम मौलिक उड़िया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● **रूपचंद ढींगड़ा, सहायक पुस्तकाध्यक्ष, गुरु नानक खालसा कॉलेज, करनाल से लिखते हैं :**

लोग कहते हैं कि जीवन के तीन मुख्य निशान, रोटी, कपड़ा तथा मकान हैं. इनके साथ-साथ आज साहित्य भी एक महत्वपूर्ण निशान बन गया है. साहित्य, समाज का वह महत्वपूर्ण दर्पण है जो समाज की अच्छाइयों तथा बुराइयों को दर्शाता है. साहित्य मनुष्य के अकेलेपन का साथी है. लिखना और पढ़ना साहित्य में ही निहित है. तथा अच्छा साहित्य, पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं में पाया जाता है. इस दृष्टि से मैं **'सारिका'** को अच्छे साहित्य की खान समझता हूं. जब से साहित्य से लगाव हुआ है, बस **'सारिका'** से ही स्वयं को प्रभावित पाता हूं. प्रति मास इसकी कहानियां मेरे हृदय को कचोट डालती हैं क्योंकि वे सभी आम आदमी के आसपास की कहानियां होती हैं. मेरा साहित्य तो 'सारिका' ही है! □

● **रामबहादुर वर्मा, प्रवक्ता, फीरोज गांधी कॉलेज, रायबरेली से लिखते हैं :**

'सारिका' बधाई की पात्र है कि इसने कहानी को ड्राइंगरूम, होटल के कमरों, नंगे जिस्मों, सेक्सजनित कुंठाओं के दायरे से बाहर निकाल कर सामान्यजन के दुख-दर्द के साथ जोड़ा और कहानी को पुनः सही धरातल पर प्रतिष्ठित किया है. कमलेश्वर जी का कथन सही है कि विगत दशकों में जब आम आदमी गरीबी, अभाव और घाटे के भविष्य से जूझ रहा था, हिंदी के कहानीकारों ने उसके लिए जिम्मेदार पूंजीवादी दक्षिणपंथी खेमे को न ठहरा कर व्यक्ति को परिस्थितियों का खिलौना सिद्ध किया. सामाजिक, आर्थिक परिवेश से कट कर संत्रास कुंठा के अलावा उन्हें मिल ही क्या सकता था? कहानीकारों ने सत्य पर झूठ का रंगीन परदा डालने की कोशिश की, पर समांतर कहानी के मैदान में आ जाने से उनकी दशा उस राजकुमारी के समान हो गयी जिसे मलमल की सात परतों में लिपटने के बावजूद भी पिता के सामने जाने पर डांट खानी पड़ी कि वह नंगी क्यों है! कहानी को सामान्य जन के संघर्ष के साथ पुनः जोड़ने का यह पुनीत कार्य **'सारिका'** के सहयोग के बिना कैसे संभव होता?

कहानी) भी समांतर साहित्य का एक अंग प्रतीत होती है.

'सारिका' के सुरुचिपूर्ण वातावरण में दीप्ति जी की कहानी **'निबंध'** दखल देती-सी लगती है.

विशिष्ट लेख **'आज का उर्दू कथा-साहित्य'** व **'चौथा समांतर लेखक सम्मेलन'** दोनों ही विचारशील व महत्वपूर्ण हैं. □

● **राजाराम सिंह, ६८।३१ ए, लोकमन मोहाल, कानपुर से लिखते हैं:**

'आज का उर्दू कथा साहित्य' लेख पढ़ कर आजकल उर्दू कथा साहित्य में क्या लिखा जा रहा है इसका ज्ञान हुआ. वास्तव में **'सारिका'** ही एक ऐसी पत्रिका है, जिसके माध्यम से हम देश-विदेश की भाषाओं के साहित्य की सम्यक जानकारी प्राप्त कर सकते हैं.

इस अंक की उल्लेखनीय कहानियों में मेहरुन्निसा परवेज की **'गिरवी रखी धूप'** और गयास अहमद गद्दी की **'परिंदा पकड़ने वाली गाड़ी'** काफी हद तक प्रभावित करती है. राजेंद्र सिंह बेदी की व्यंग्य कथा **'चश्मे-बद दूर'** भी काफी मनोरंजन करती है. □

अक्तूबर अंक

● **शीलधर सिंह हिंदी विभाग, जामताड़ा कालेज (सं. प.) बिहार से लिखते हैं :**

'सारिका' का अक्तूबर '७५ अंक. **'आत्मरचना'** के अंतर्गत राबिन शा पुष्प' की स्पष्टवादिता एवं निर्भीकता बड़ी पसंद आयी. गर्दिश के दिनों में भी उनके संकल्प की दृढ़ता वस्तुतः अनुकरणीय है. क्रिश्चियन होने के बावजूद शराब और अंग्रेजियत से अंग्रेजों के वक्त में भी नफरत और हिंदी से अपार प्यार कम साहस की बात नहीं. और अपनी अपाहिज मां की सेवा तो हमारी संस्कृति को तरोताजा कर देती है. हम श्रवणकुमार के अस्तित्व को कदापि झुठला नहीं सकते. लेकिन सबसे बड़ी बात तो उनसे हम तब सुनते हैं, जब वे कहते हैं. . . मगर लोग पहले से भी ज्यादा पीने लगे हैं, अधिक अंग्रेजी बोलने लगे हैं और जो हिंदी मैंने बहुत जिद करके सीखी थी, बहुत पीछे छूट गयी है बहुत पीछे, ऐसा लगता है, पुष्पजी ने अपनी कथा-कथा के माध्यम से इस स्वतंत्र राष्ट्र भारत और भारत की राजभाषा हिंदी के दुख-दर्द को वाणी देने का सफल प्रयास किया है, क्या हम कभी इस पर गहराई से सोचते हैं? □

● **पूर्णेन्दु नारायण प्रसाद अधिवक्ता नुरुद्दीनगंज पटना से लिखते हैं :**

'सारिका' का अक्तूबर अंक पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ. उसमें कहानियों का जो चयन किया गया है, वह वास्तव में श्लाघनीय एवम् प्रशंसनीय है. ये कहानियां कहानी-लेखन के मूल तत्वों को तो प्रस्तुत करती ही हैं, साथ-साथ वे समाज की चलती-फिरती विचार धारा तथा विश्व के समसामयिक कथा-साहित्य से पाठकों को अवगत कराती हैं.

इसमें **'आत्मरचना'** शीर्षक के अंतर्गत दी गयी आत्म कहानी बीते हुए युग के सामाजिक और राजनीतिक उथल-पुथल एवम् कशमकश का सजीव चित्र आंखों के सामने ला देती है. **'गुस्ताखियां'** शीर्षक सामयिक और वैयक्तिक चर्चा हृदयग्राहक तो है ही, साथ-साथ यदाकदा हास्य एवम् व्यंग्य से परिमार्जित है. रोमानिया और वेस्ट इंडीज की कहानियां हमारे सामने उन देशों के प्राकृतिक सौंदर्य और समांतर साहित्य प्रस्तुत करती हैं. और इस प्रकार हमें स्थानीय या प्रांतीय घेरे से ऊपर उठा कर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ले जाती हैं. इसमें लघुकथाएं थोड़े समय में हृदय के मर्म पर शाश्वत प्रभाव डालती हैं और जीवन के आदर्शों की ओर प्रेरित करती हैं. जिस क्रम में इनका उद्धरण हुआ है उससे ये नाटक में विदूषक प्रकरण की तरह काम करती हैं.

'सारिका' वास्तव में सजनात्मक साहित्य की एक सुंदर कड़ी है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रीय सम्पत्ति की
चोरी

स्टेशन तथा गाड़ियों में बिजली और अन्य फिटिंग्स को चुराने और नुकसान पहुंचाने से यात्रियों को अत्यंत असुविधा होती है और कष्ट उठाने पड़ते हैं. रेलवे को वहन के लिए दिये गये सामानों के खो जाने से सब को कठिनाइयां होती हैं.

हर साल रेलवे को खोयी हुई फिटिंग्स को फिर से लगाने में अत्यधिक पैसा खर्च करना पड़ता है और चोरी की गई सम्पत्ति से होने वाली क्षतिपूर्ति पर करोड़ों रुपये खर्च करने पड़ते हैं.

रेलवे की सम्पत्ति राष्ट्र की सम्पत्ति है. जिसके नुकसान का भार आपको ही उठाना पड़ता है.

सम्पत्ति की रक्षा में हमारी मदद करें.

●

पश्चिम रेलवे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाजवादी देशों की कहानियों का यह विशिष्ट खंड

इस विशिष्ट खंड की कहानियां तीन समाजवादी देशों की कहानियां हैं, जो उन देशों की मूल भाषाओं या उपभाषाओं से सीधे अनूदित की गयी हैं. इन पांचो लेखकों के नाम हिंदी के प्रबुद्ध पाठकों के लिए अपरिचित नहीं हैं इन कहानियों में से कुछ तो ऐसी हैं जो बिल्कुल विदेशी नहीं लगती, अपने ही आसपास की लगती हैं, हंगरी की दोनों कहानियां ऐसी ही हैं.

हंगेरियाई लेखक फ्रिजेश कारिथी और

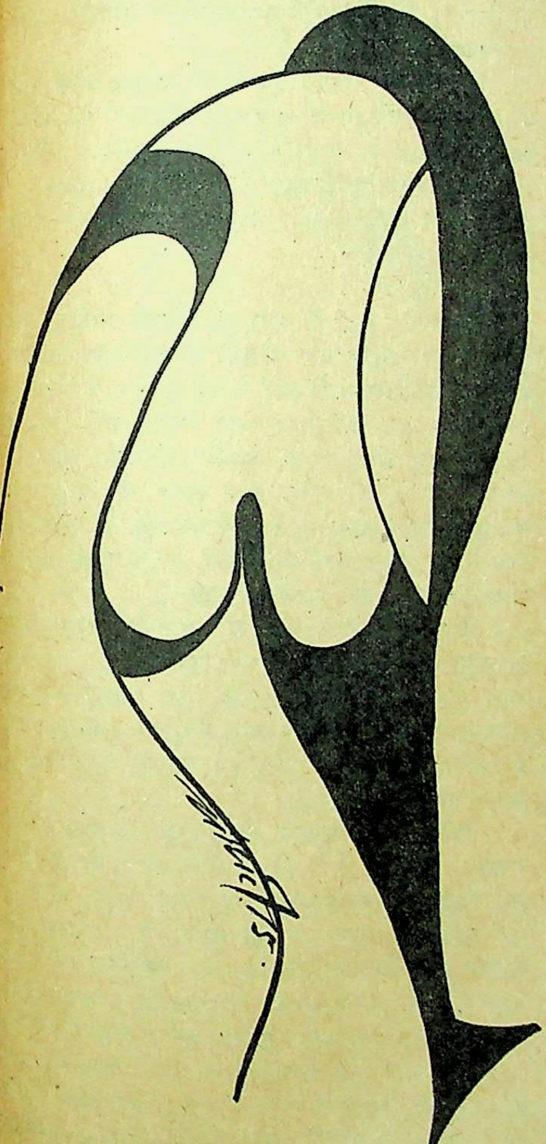

लायोश बिरो पारिवारिक और व्यतिगत मानसिकताओं के प्रख्यात लेखक हैं. इसी तरह सोवियत लेखक शोलोखोव सामाजिक और मानवीय संघर्षों के सिद्धहस्त रचनाकार हैं. शोलोखोव को उनके प्रसिद्ध उपन्यास —'क्वाइट फ्लोज द दोन'— पर नोबल पुरस्कार मिल चुका है. उनकी सभी रचनाओं में अपनी जमीन की सौंधी महक स्पष्ट महसूस होती है.

यूगोस्लाव लेखक आइवो एंद्रिच वहां के एक मात्र लेखक हैं जिन्हें नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया है. यह पुरस्कार उन्हें १९६१ में प्राप्त हुआ. एंद्रिच की रचनाओं का प्रमुख विषय है — तुर्क साम्राज्य के दिनों में उनकी जन्मभूमि बोस्निया. 'बोस्नियन स्टोरी', 'डेविल्स यार्ड' और 'द ब्रिज ऑन द ड्रीना' उनकी रचनाओं के कुछ प्रमुख अंग्रेजी अनुवाद हैं. इतिहास का गहरा रंग और प्रतीकात्मक दृष्टि उनकी रचनाओं में स्पष्ट है, जो इस विशिष्ट खंड में प्रकाशित कहानी 'जीपा का पुल' में भी देखी जा सकती है.

मीरोस्लाव क्रलेंझा योगोस्लाविया की ह्रवाती भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार हैं. उनकी कहानी 'बैरक नं. पांच' क्रलेंझा के कहानी संग्रह–'ह्रवाती देवता — मंगल' से ली गयी है. १९२२ में जब यह संग्रह प्रकाशित हुआ तो इसने न केवल यूगोस्लाविया अपितु चेकोस्लोवाकिया, बुल्गारिया, पोलैंड आदि देशों में भी हलचल मचा दी थी.

मीरोस्लाव क्रलेंझा ने बुडापेस्ट की सैनिक अकादमी में शिक्षा प्राप्त की और प्रथम विश्वयुद्ध में सक्रिय रूप से हिस्सा लिया.

यह कहानी भी उनके उसी अनुभव का परिणाम है. उन्हें कहानियों और कविताओं की अपेक्षा नाटकों, निबंधों और उपन्यासों के कारण अधिक प्रतिष्ठा मिली.

प्रस्तुत विशिष्ट खंड की लगभग सभी कहानियां मानवीय संवेदनाओं की कहानियां हैं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निशानी

• शोलोखोव

जले हुए बारूद की बदबू वाले कुछ कारतूस, एक हड्डी, एक नक्शा, हमले-संबंधी एक रिपोर्ट, तथा तमगे वाली एक लगाम, जिसमें से घोड़े के पसीने की दुर्गंध आ रही है, और रोटी का एक बड़ा-सा टुकड़ा—ये सब चीजें मेज पर पड़ी हैं. और एक खुरदरे-से बेंच पर, जो गीली दीवार की काई से गंदा बना हुआ है, नौजवान स्क्वैड्रन कमांडर निकोलाई बैठा हुआ है. ठंड से सुन्न बनी हुई उसकी अंगुलियों में एक पेंसिल है. मेज पर बहुत पुराने इश्तहार बिखरे पड़े हैं, और उनके पास एक फॉर्म पड़ा है, जो पूर्ण रूप से भरा नहीं गया है. उसमें लिखा हुआ है—'कोशेवोई निकोलाई, स्क्वैड्रन कमांडर. खेत-मजदूर. युवक कम्यूनिस्ट.'

'उम्र' के सामने पेंसिल धीरे-धीरे लिखती है—'१८'.

निकोलाई के कंधे चौड़े हैं, और वह अपनी उम्र से बड़ा दिखाई देता है. उसकी आंखों के गिर्द झुर्रियां पड़ी हुई हैं, और उसकी कमर किसी बूढ़े व्यक्ति की कमर की तरह झुकी हुई है.

फौज में वह अभी 'लड़का और अनाड़ी' समझा जाता है, लेकिन साथ ही उसके बारे में यह भी कहा जाता है कि 'ऐसा कौन है, जिसने डाकुओं की दो टोलियों का सफाया कर डाला हो और अपना एक भी आदमी न मरवाया हो? फिर जिसने किसी अनुभवी नेता की तरह अपने फौजी दस्ते का छह महीने तक नेतृत्व किया हो?'

निकोलाई को किसी सपने की तरह यह याद है कि वह पांच-छह वर्ष का था तो कैसे उसके पिता ने उसे उठा कर अपने फौजी घोड़े पर बैठाया था.

—इसकी गरदन के बालों को पकड़ कर रखना, बेटा, उसने कहा था.

तब उसका पिता जर्मनी के खिलाफ लड़ने के लिए जा रहा था. और फिर ऐसे लापता हो गया था कि लौट कर नहीं आया था.

निकोलाई को अपने पिता से विरसे में घोड़ों का प्यार, बहादुरी और एक बड़ा-सा तिल मिला था, जो उसी की तरह उसकी टांग पर, टखने से कुछ ऊपर दिखाई देता था. पंद्रह साल की उम्र तक वह खेतों में काम करता रहा था. फिर वह लाल फौज में भर्ती हो गया था. पिछली ग्रीष्म ऋतु में जबकि वह दोन नदी में नहा रहा था तो पास में नहा रहे फौजी कमीसार ने उसकी टांग पर के तिल को देख कर कहा था—तुम खुशकिस्मत हो. कहते हैं तिल खुशकिस्मती की निशानी होता है.

—अच्छी बात कही है! निकोलाई ने हंस कर कहा था. मैं बचपन से ही यतीम रहा हूं, और तब से ही मैंने खून-पसीना एक करके जिंदगी बिताई है— यह है मेरी खुशकिस्मती! तभी वह गोता लगा कर दोन के दूसरे किनारे की ओर चला गया था.

वह घर जिसमें निकोलाई ने डेरा लगाया हुआ था, नदी के ऊपर बढ़ी हुई चट्टान पर बना हुआ था.

एक दिन निकोलाई घर से बाहर भूरी घास पर लेटा हुआ था, जो कि ओस के कारण गीली बनी हुई थी. पशुओं के बाड़े में से घर की मालकिन की आवाज सुनाई दे रही थी, जो गाय को टिक कर खड़े होने के लिए कह रही थी. साथ ही गाय के बछड़े के रंभाने और बालटी में दूध दुहे जाने की आवाज सुनाई दे रही थी.

कुछ ही देर के बाद फाटक चीखा और वहां बैठा हुआ कुत्ता भौंका.

—कमांडर घर में हैं? सार्जेंट की आवाज आयी.

—यहां हूं मैं, निकोलाई ने कहा. क्या बात है?

—गांव से एक आदमी ने आ कर बताया है कि सालशक जिले की तरफ से डाकुओं का एक गिरोह इधर आ निकला है और उसने ग्रुशीको स्टेट-फार्म पर कब्जा कर लिया है.

निकोलाई ने उसी समय घर में जा कर अपनी कमर में तलवार बांधते हुए सोचा, एक और गिरोह! और मैं सोच रहा था कि यहां से कहीं जा कर पढ़ूं-लिखूंगा. . . लेकिन अब एक और गिरोह आ गया है. . . अब और खून-खराबा होगा. काश, कहीं मैं शहर जा सकूं! वहां जा कर तालीम हासिल कर सकूं! . . .

★ ★

टीलों पर चूहों से भरी हुई जंगली झाड़ियां फैली हुई हैं, और चारों ओर पक्षियों के पंजों और बिल्लियों की पूंछों के निशान दिखाई दे रहे हैं. दूर चमकती हुई बड़ी सड़क पर अतामान अपने गिरोह को लिये जा रहा है. वह और उसके साथी सोवियत शासन से संतुष्ट नहीं हैं. तीन दिन से वे बाघों की तरह घास-मैदान के उस इलाके में से आगे बढ़ रहे हैं. और तीन दिन से ही निकोलाई कोशेवोई अपने फौजी दस्ते के साथ उसका पीछा करता आ रहा है.

उस गिरोह के आदमी, जो पुराने तजुर्बाकार फौजी हैं, बहुत कठिनाइयों भरा जीवन बिता रहे हैं. पर अतामान हिम्मत नहीं हार रहा है. वह रकाबों पर खड़ा हो कर एक नजर देख कर घास-मैदान का जायजा लेता है, और उस सफर का मीलों में अंदाजा लगाता है, जो जंगल तक फैला हुआ है.

दाढ़ियों वाले कजाक किसान नदी के पास के चरागाहों में जौ बोते हैं. वे जौ की ऐसी शराब बनाते हैं कि वह किसी युवती के आंसुओं से ज्यादा साफ होती है. यह सदियों से चली आ रही लीक है, क्योंकि उनके पिता-पुरखे पीने के शौकीन थे. इसीलिए तो 'दोन कजाक फौज' की मोहर पर एक शराबी कजाक दिखाया गया है. और इसीलिए अतामान हमेशा नशे में होता है.

सात सालों से अतामान ने अपना गांव नहीं देखा है. पहले वह जर्मनों के कब्जे में रहा, फिर उसने वरैंगल की फौज में नौकरी की, फिर कंटीले तारों के पीछे कैद काटी, फिर एक तुर्की जहाज में नौकरी की, और फिर इस गिरोह का मुखिया बन गया. अब उसका दिल सख्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

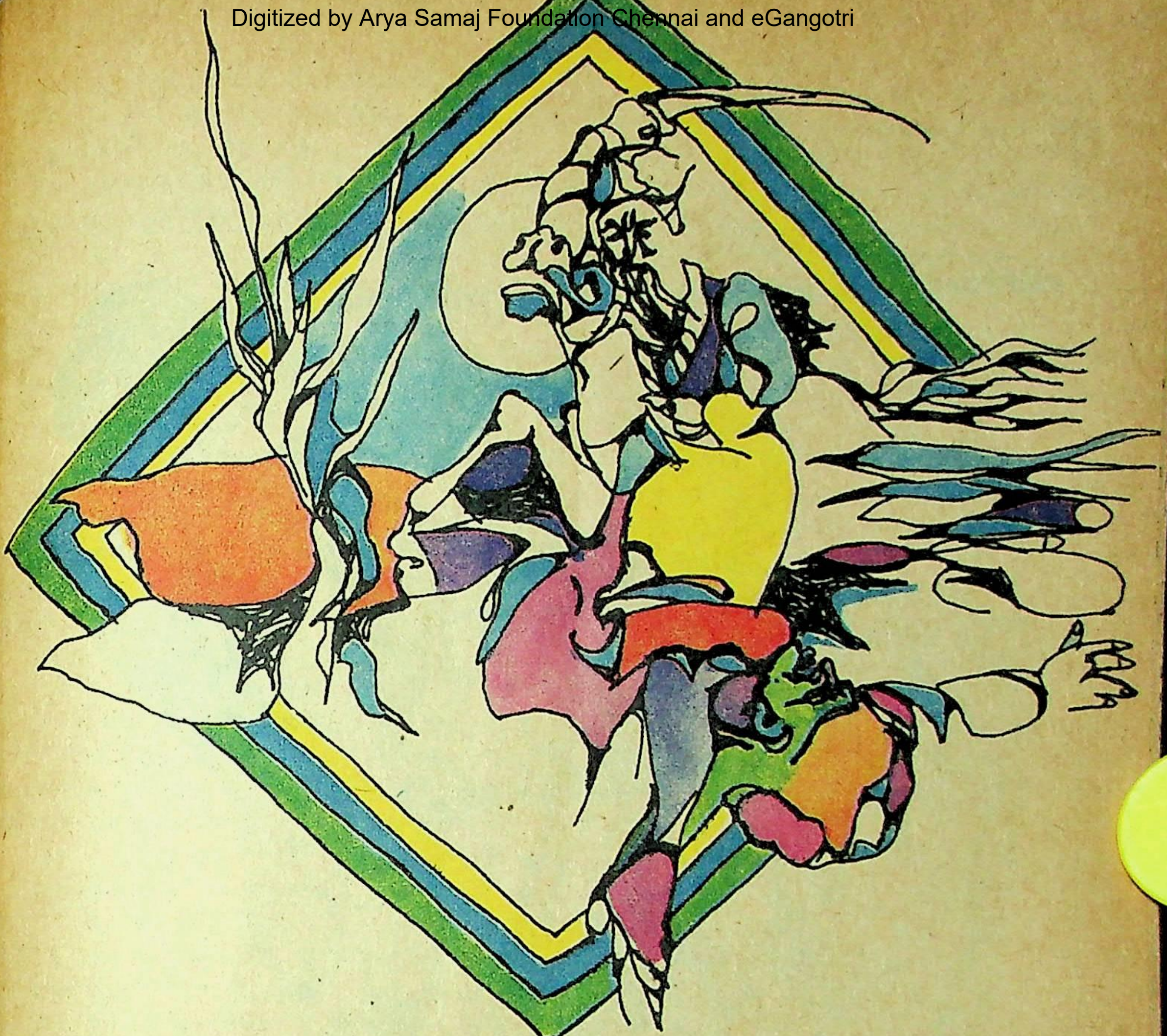

बन गया है. कोई छिपी हुई चीज उसके दिल में आंखें खोलती है, उसका प्रत्येक अंग जैसे बीमार बन जाता है, और वह महसूस करता है कि वह बीमारी न भुलाई जा सकती है, न नक्शे में डुबोई जा सकती है, फिर भी वह पीता है, रोज पीता है, क्योंकि दोन के इलाके के घास-मैदान में उगने वाले जो बहुत मीठे और महकदार होते हैं, जो सूरज की तपिश पी कर बढ़ते-फूलते हैं, और गांव की भूरे कपोलों वाली स्त्रियां ऐसी खालिस शराब कशीद करती हैं कि वह किसी झरने के पानी से भी ज्यादा साफ होती है.

* *

प्रात:काल के समय कोहरा पड़ा, और सुबह होने पर लूकिच ने देखा कि उसकी पनचक्की पर बर्फ जमी हुई थी. तभी चक्की के नीचे से एक चूहा निकल कर अपनी तरल आंखों से उसे देखने लगा. ऊपर छत के शहतीर पर बैठा हुआ कबूतर 'गुटर-गूं' कर रहा था.

लूकिच घर से बाहर निकला और उस बाग में गया, जहां उसने मधुमक्खियां पाली हुई थीं. वह आराम करने के लिए वहां लेट गया. उसने भेड़ की खाल ओढ़ ली और कुछ ही देर में उसे नींद आ गयी.

घोड़ों की टापों की आवाज सुन कर उसकी नींद खुली तो उसने दो घुड़सवारों को अपनी ओर आते हुए देखा. उनमें से एक ने ऊंची आवाज में उसे बुलाया.

लूकिच आगे बढ़ा.

—हम लाल फौजी हैं, बाबा, हम से डरने की जरूरत नहीं है! अतामान ने कहा. हम एक गिरोह का पीछा कर रहे थे कि अपने साथियों से बिछुड़ गये हैं. शायद तुमने हमारे दस्ते को इधर कहीं देखा हो?

—कुछ लोग यहां से गुजरे तो थे...

—किधर गये हैं?

—यह तो मुझे पता नहीं...लूकिच ने कहा और एक ओर को चल दिया.

तब अतामान ने कमान की तरह मुड़ी हुई अपनी टांगों पर खड़े हो कर कहा— सुनो बाबा! हम कम्यूनिस्टों का सफाया कर रहे हैं. और अब तुम्हारा काम है कि हमारे सत्तर घोड़ों के लिए रातब-दाना तैयार करके रखो. और खबरदार, अगर मुंह खोला तो!....

—मेरे पास अनाज नहीं है! लूकिच ने नफरत से कहा. अतामान ने उसे कमीज के कॉलर से पकड़ लिया और घुटने की ठोकर मार कर एक मकान की ओर

CC0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

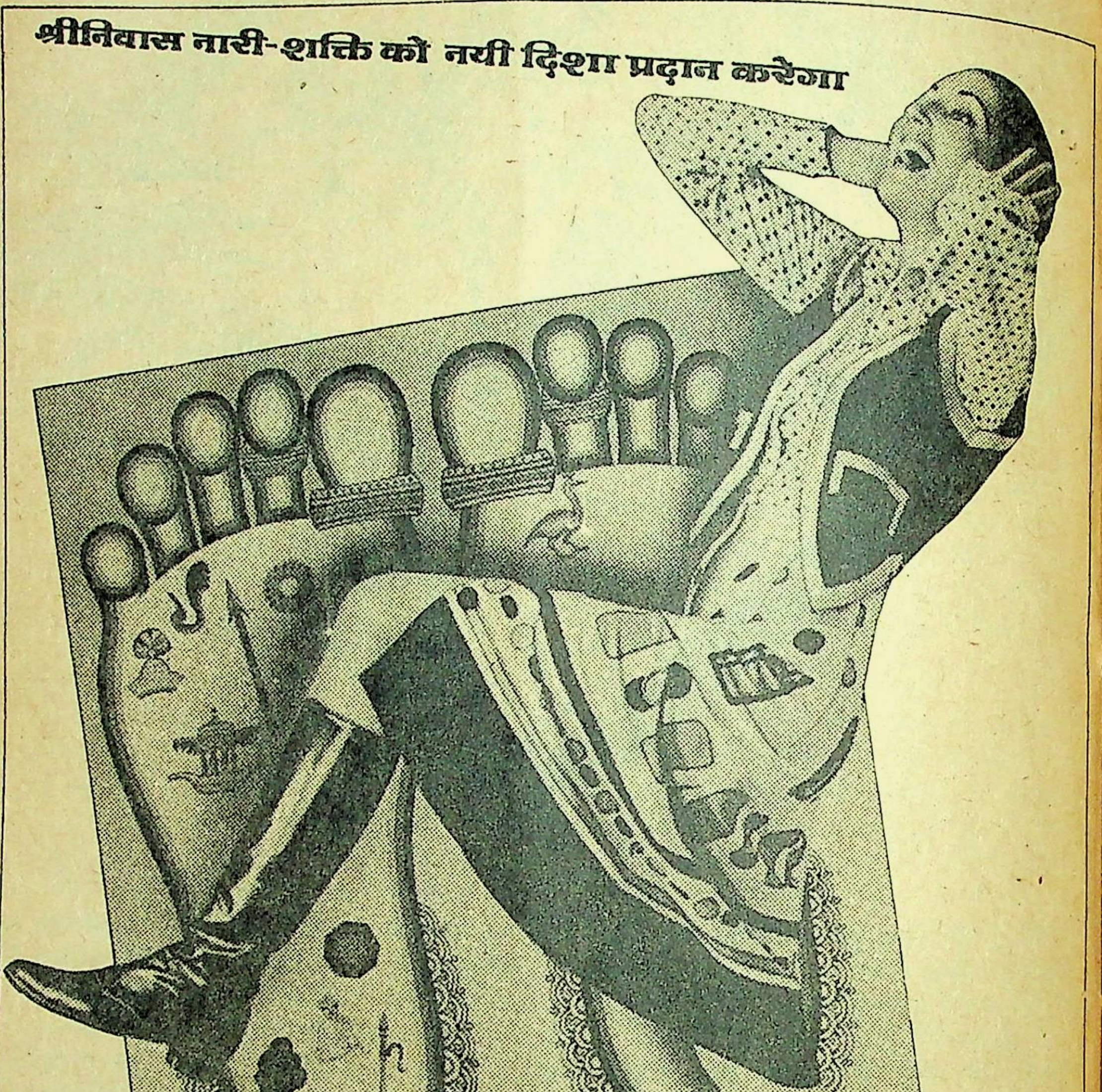

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया, जिसमें अनाज की भरी हुई बोरियां पड़ी थीं.

—मुझ पर रहम करो, बेटा! लूकिच ने कहा, मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?

अतामान के साथियों ने अनाज की बोरियां निकाल कर खोलीं. सारा आंगन सुनहरे दानों से भर गया.

★ ★

सुबह उदास, गीली और उमस भरी थी.

लूकिच संतरी से बचता हुआ आगे बढ़ा और उस रास्ते पर चल पड़ा, जिसका सिर्फ उसी को पता था. वह रास्ता जंगल में से हो कर जाता था. उसके उस पार, गांव के पास जाने पर एक संतरी ने उसे रोका.

—मैं पनचक्की वाला हूं, लूकिच ने कहा. पनचक्की से आया हूं. मुझे काम है यहां. कमांडर से मिलना है.

संतरी उसे अपने साथ ले गया. जब उसे निकोलाई के सामने ले जा कर खड़ा किया गया तो उसने अतामान के गिरोह की खबर दी, जिसने उसकी पनचक्की पर डेरा लगाया हुआ था और जिसके आदमी दिल खोल कर वोद्का पी रहे थे.

—चलने की तैयारी करो! निकोलाई ने संतरी से कहा और लूकिच की ओर देख कर नर्मी से मुसकराया.

कई रातें सो न सकने के कारण निकोलाई के चेहरे का रंग फीका पड़ा हुआ था. वह घोड़ा दौड़ाता हुआ मशीनगन वाली गाड़ी के पास पहुंचा, और उसने हुक्म दिया—ज्यों ही हम हमला करें, उनके दायीं तरफ गोलियां चलाना!

फिर वह अपने फौजी दस्ते के पास गया.

बलूत के छोटे रह गये वृक्षों के उस पार कुछ घुड़सवार दिखाई दिये, जो चार-चार की कतारों में बड़ी सड़क पर चले जा रहे थे. उनके बीच में मशीनगन वाली गाड़ियां जा रही थीं.

निकोलाई ने ऊंची आवाज में हमला करने का हुक्म दिया, तो जंगल के सिरे पर मशीनगनों ने बेतहाशा गोलियां बरसायीं.

गोलियों की आवाजें गूंज रही थीं.

—ठहरो, मशीनगनें संभाले रहना! जंगल में घुस जाओ! जंगल में! अतामान ने रकाबों पर खड़े हो कर ऊंची आवाज में कहा. उसके साथी घिर गये थे, और भयभीत बने हुये बिखरने लगे थे.

अतामान ने अपने घोड़े को मोड़ा तो दूर एक घुड़सवार को अपनी ओर आते हुए देखा. वह जैसे उड़ता हुआ आ रहा था. उसके हाथ में तलवार चमक रही थी. उसकी गरदन में लटक रही दूरबीन और उसके कोट को देख कर अतामान ने अनुमान लगाया कि वह कोई साधारण लाल फौजी नहीं था. तभी उसने अपने घोड़े की लगाम खींची और दूर से उस घुड़सवार का जवान चेहरा देखा, जो गुस्से से लाल-सुर्ख बना हुआ था. अतामान का घोड़ा बेचैनी से उछलता हुआ पीछे की ओर जा रहा था और अतामान हाथ में पिस्तौल पकड़े उसे आगे बढ़ने के लिए कह रहा था.

तभी उसने सामने बढ़े आ रहे काले कोट वाले व्यक्ति पर गोली चलायी. घोड़ा बीस कदम और आगे बढ़ा और ढह पड़ा. लेकिन निकोलाई उठ कर तेजी से अतामान की ओर बढ़ा. वह उसकी ओर दौड़ता हुआ गोलियां चलाये जा रहा था.

वृक्षों के उस पार कोई जानवर की तरह कराहा और गिर पड़ा. सूरज बादलों के पीछे छिप गया, और घास-मैदान और जंगल पर छायाएं फैलने लगीं.

—यह दुधमुंहा खामख्वाह मौत की तरफ बढ़ा आ रहा है! अतामान ने अपने होंठों में कहा और जब उस ने देखा कि निकोलाई की पिस्तौल की सारी गोलियां चल चुकी हैं तो उसने अपने घोड़े को एड़ लगायी और झील की तरफ बढ़ा.

कुछ आगे जाने पर उसने एक ओर झुक कर अपनी तलवार खींची. और दूसरे ही क्षण उसे निकोलाई का शरीर अपने वार के नीचे निढाल-सा होता प्रतीत हुआ, और वह धरती पर ढह गया. फिर उसने घोड़े से उतर कर निकोलाई की गरदन में से दूरबीन निकाली, उसकी टांगों की ओर देखा, जो अभी तक कांप रही थीं, और उसके चमड़े के बूट उतारने के लिए उसके पास बैठ गया. उसके घुटने पर पांव रख कर उसने एक बूट उतारा. लेकिन दूसरी टांग की जुराब उसके साथ इस तरह चिपटी हुई थी कि उस पांव का बूट न उतरा. अतामान ने गुस्से में गाली दी और उसने बूट और जुराब को एक साथ खींचा. जुराब उतरते ही उसके टखने के कुछ ऊपर कबूतरी के अंडे जितना बड़ा तिल दिखाई दिया तो एकाएक अतामान के हाथ रुक गये. फिर जैसे वह डर गया कि निकोलाई कहीं जाग न जाये. उसने उसका ठंडा पड़ चुका चेहरा धीरे-धीरे अपनी ओर घुमाया. उसके मुंह में से निकल रहे खून से उसका हाथ रंग गया. एक क्षण के लिए उसने सख्त नजर से उसे देखा और दूसरे ही क्षण उसे बाहों में भर लिया.

—बेटा! . . . उसके मुंह से निकला, मेरा निकोलाई! . . . मेरा अपना खून! . . .

फिर उसके चेहरे को दोनों हाथों में ले कर उसने ऊंची आवाज में कहा— बोलो, कुछ तो बोलो, बेटे! कैसे? . . . क्यों?

आखिर वह उसकी निर्जीव बनी हुई आंखों में झांकता हुआ एक ओर को ढह गया. फिर उसने उसकी खून से सनी हुई पलकें ऊपर उठायीं, उसके शिथिल पड़ चुके शरीर को हिलाया! . . . निकोलाई ने दांतों तले अपनी नीली पड़ चुकी जीभ का सिरा दबाया हुआ था, जैसे उसे डर हो कि उसके मुंह से किसी बहुत बड़े भेद की बात निकल जायेगी. अतामान ने उसके ठंडे पड़ चुके हाथों को चूमा और पिस्तौल की नली अपने मुंह में डाल कर गोली चला दी.

शाम के समय जब घुड़सवार वृक्षों के पीछे से निकल कर आये और हवा पर तैरते उनकी बातों के स्वर, घोड़ों का हिनहिनाना और रकाबों के खनकने की आवाजें उधर आयीं तो अतामान के उलझे हुए बालों वाले सिर पर बैठी एक चील न चाहते हुई भी उड़ी और पतझड़ के सलेटी आकाश में गायब हो गयी. □□□

(अनुवाद : सुखबीर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत दिन बीते

• याकोव सीगेल

हैलो...

—हैलो. मैं एक बहुत ही बढ़िया सेब खा रही हूं...

—आप मुझसे क्या चाहती हैं?

—आपको.

—आप कौन हैं?

—एक लड़की.

—क्या मैं आपको जानता हूं? मेरा मतलब है कि पहले कहीं आपकी और मेरी मुलाकात...

—जी नहीं, पर मैंने आपको कई बार देखा है. और अभी इत्तफाक से मैंने सोचा कि आपको रिंग किया जाय.

—यह कहने के लिए कि आप एक अच्छा सेब खा रही हैं?

—बस यही.

—खूब ... आपकी आवाज अच्छी है.

—शुक्रिया! अच्छा अब फोन बंद करूं...

—इतनी जल्दी? और हां, आपने मुझे फोन किस लिए किया था?

—यह मालूम करने के लिए कि आपकी आवाज कैसी है.

—ठहरिए. अभी बंद मत कीजिए. आपकी आवाज बड़ी मधुर है!

—यही आपने अभी पहले कहा था. अच्छा, गुडबाई.

—सुनिए, अगर आपने टेलीफोन बंद कर दिया, तो मैं चौकड़ी भूल जाऊंगा.

—क्या खूब! श्रीमान्, टेलीफोन मैंने आपको किया है, आपने मुझे नहीं. इसलिए इसे बंद—

—सुनिए, कम-से-कम अपना नाम तो बता दीजिए.

—इससे आपके लिए क्या फर्क पड़ता है. मान लीजिए – मेरा नाम है निताशा, केतें, कतेनका, इकातेरिना —आपको जो भी नाम सब से अच्छा लगे.

—खुद आपको इनमें से कौन-सा नाम पसंद है?

—दरअसल इनमें से मुझे एक भी नाम पसंद नहीं है. मुझे करीना नाम अच्छा लगता है.

—बहुत खूब... अच्छा, करीना, क्या मैं आपको टेलीफोन कर सकता हूं?

—नहीं. और फिर आप नंबर भी तो नहीं जानते.

—आप अपना टेलीफोन नंबर बताइए ना.

—हरगिज नहीं.

—कोई बात नहीं. लेकिन मुझे फोन करेंगी ना? ओ. के...

—हैलो, हैलो, ... आप सुन रहे हैं?

—हां.

—क्या कर रहे हैं?

—सोच रहा हूं.

—मैं आपको फोन करूंगी. कल सुबह इसी वक्त.

—ठीक है. कल सुबह छह बजे.

कल सुबह छः बजे

—मैं एक बहुत ही बढ़िया सेब खा रही हूं. हैलो!

—मैं इस टेलीफोन के पास आधा घंटे से बैठा हूं.

—आपने छह बजे के लिए कहा था. छह ही तो बजे हैं.

—शुक्रिया.

—शुक्रिया कहने की तो कोई बात नहीं.

—करीना ...

—जी...?

—मैं आपसे कुछ पूछूं, तो जवाब देंगी?

—यह तो सवाल पर निर्भर करता है. खैर, पूछिए.

—उम्र कितनी है?

—सौलह. लगभग सौलह वर्ष. और आप सत्रह वर्ष के हैं... और आपका नाम मीशा है... और आप २३ पैत्रोवका स्ट्रीट में रहते हैं.

—आप यह सब कुछ कैसे जानती हैं?

—मैं आपके बारे में सब कुछ जानती हूं.

—यह अच्छी बात नहीं है.

—क्यों?

—क्योंकि आप मेरे बारे में सब कुछ जानती हैं और मैं आपके बारे में कुछ भी नहीं जानता. क्या आपका कद लंबा है?

—दरमियाना.

—वाह!

—जी हां. अच्छा, अब मैं फोन...

—सिर्फ एक मिनट. मुझे अब फोन कब करेंगी?

—मैं आपको फोन क्यों करने लगी?

—क्योंकि, जब आपने...

—मैं कुछ नहीं जानती.

—तो आप मुझे अपना नंबर क्यों नहीं बता देतीं.

......

—कुछ सोचने लगीं.

—लिखिए : ५२६८९.

★ ★

उसी दिन शाम को ६.१० बजे

—टेलीफोन इंक्वायरी?

—जी. हमारे योग्य सेवा?

—बात यह है, मेरे पास एक टेलीफोन नंबर है. मैं उसके द्वारा पता मालूम करना चाहता हूं. इस संबंध में आप मेरी कोई सहायता करेंगे?

—माफ कीजिए. हम ऐसी जानकारी नहीं देते.

—लेकिन मुझे पते की इसी वक्त सख्त जरूरत है.

—क्षमा चाहते हैं. इस संबंध में हम आपकी कोई सेवा नहीं कर सकते.

—तो मैं यह जानकारी कहां से प्राप्त करूं?

—आप इसके लिए टेलीफोन डायरेक्ट्री देखिए.

—वर्षों लग जायंगे टेलीफोन डायरेक्ट्री से पता मालूम करने में.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

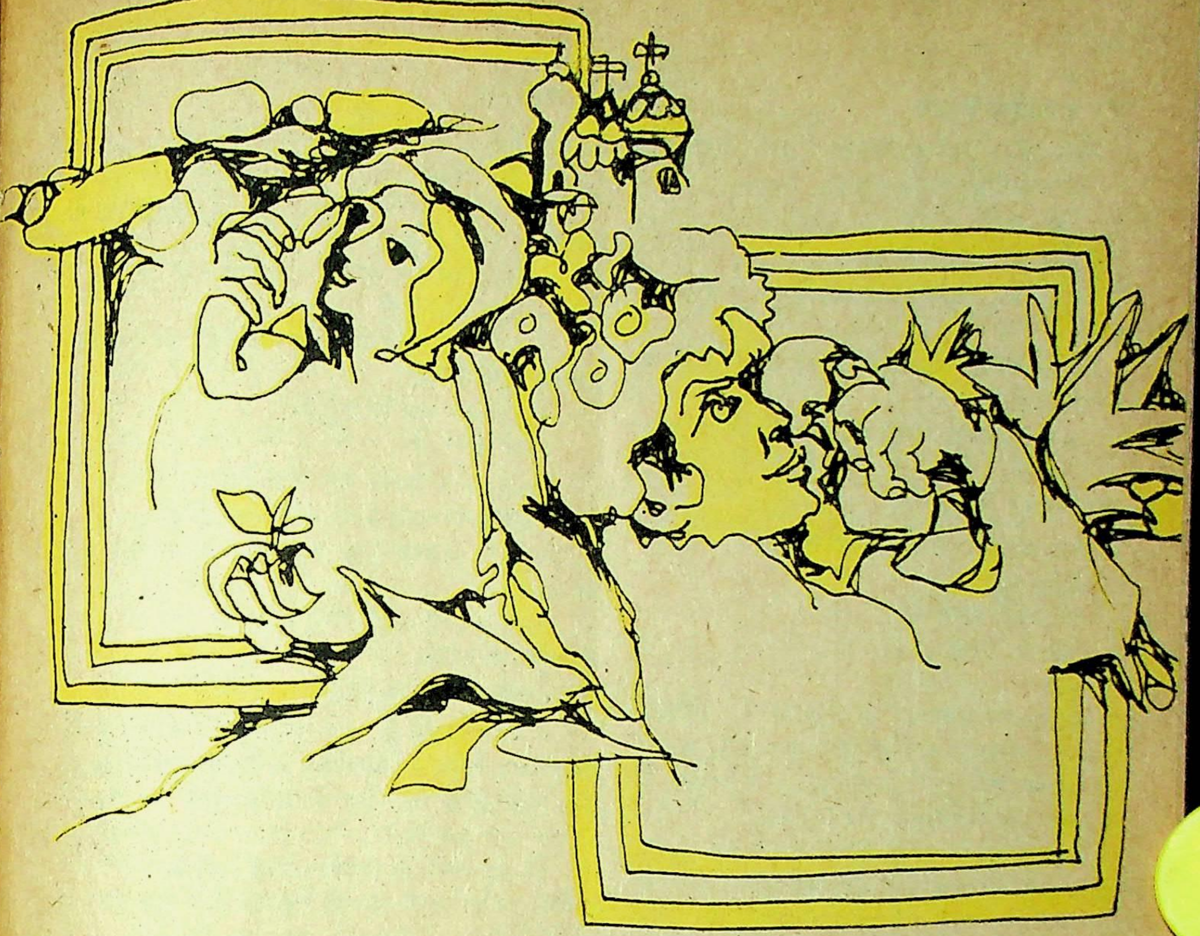

—हमें आपके साथ हमदर्दी है.

★ ★

दो दिन बाद

—मैं करीना से बात करना चाहता हूं.

—इस नंबर पर इस नाम का कोई नहीं है.

—है भई, सौलह साल की एक लड़की है!

—तब वह कात्तय्या ग्रादोवा होगी. वह ही ऐसे अजीब-अजीब नाम सोचती है. बेशक, करीना. . . कात्तय्या ही है!

—हैलो

—करीना? मैं बोल रहा हूं.

—मुझे मालूम है.

—जब मैंने इनसे कहा कि मुझे करीना से बात करनी है, तो इन्होंने बताया कि इस नाम की कोई. . .

—यह मेरा गुप्त नाम है, जिसे सिर्फ आप जानते हैं.

—मैं इसे अब किसी दूसरे को नहीं बताऊंगा. लेकिन अब तो मुझे आपका सरनेम भी मालूम हो गया है. . . ग्रादोवा. क्यों? ठीक है न? अब मैं आपके सरनेम से टेलीफोन डायरेक्ट्री में आपका पता मालूम कर लूंगा.

—ऐसा मत कीजिए. फिर भी आप मालूम करना चाहते हैं, तो कर लीजिए. आपको पता मिलेगा नहीं. फौन हमारे नाम से नहीं है.

—आपकी कितनी मधुर आवाज है. चाहता हूं, देखूं, आप दिखने में कैसी हैं.

—मैं बताये देती हूं— ठीकठाक.

—लेकिन मैं तो खुद अपनी. .

—बस, बस, बस. कहा ना, ठीकठाक हूं. अच्छा, गुडबाई.

★ ★

कुछ और दिनों के बाद

—करीना बोल रही हैं? मैं करीना से. . .

—कौन? किससे?

—मेरा मतलब है. . . कांतय्या. . . कांतय्या ग्रादोवा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—क्या-क्या अजीब नाम सोचते हैं, ये लोग. कांतय्या घर में नहीं है.

★ ★

और कुछ दिनों के बाद

—मैं कांतय्या ग्रादोवा से बात करना चाहता हूं.

—सारा ग्रादोवा परिवार बाहर गया है.

★ ★

कुछ दिन और गुजरने के बाद

—मैं कांतय्या ग्रादोवा से बात करूंगा. क्या वह घर हैं?

—मैं उसकी मां बोल रही हूं. वह अपनी दादी के यहां गांव गयी है.

—आयें, तो कहिए मीशा का फोन आया था.

★ ★

जून १९४१ के अंत में

—कांतय्या ग्रादोवा से बात करनी है.

—वह है नहीं.

—तो उनकी माताजी. . .

—ठहरिए, देखती हूं.

—हैलो.

—हैलो, आप कांतय्या की माताजी बोल रही हैं?

—हां. कांतय्या कल आयेगी. कल फोन करना.

—मैं कल फोन नहीं कर सकता. . . मैं जा रहा हूं.

—क्या आप निष्कासित कर दिये गये हैं.

—नहीं. मैं मोर्चे पर जा रहा हूं. कल चला जाऊंगा. कांतय्या आये, तो उन तक मेरी शुभकामनाएं पहुंचा दीजिए.

—मेरी ओर से तुम्हें शुभकामनाएं. तुमने अपना नाम क्या बताया?

—मीशा.

★ ★

चार साल बीत जाने के बाद

—कांतय्या ग्रादोवा से बात करनी है.

—कौन? किससे?

—कांतय्या ग्रादोवा. वह इसी टेलीफोन नंबर पर. . .

—इस नाम का यहां कोई नहीं है.

—युद्ध से पहले तो वह यहीं रहती थीं.

—एक मिनट, मैं अपने पड़ोसी से पूछता हूं.

—हैलो. आप किसे पूछ रहे हैं?

—कांताय्या ग्रादोवा. युद्ध से पहले वह . . .

—मैं समझ गया. उनका परिवार तो चार साल पहले ही इस फ्लैट से चला गया. उसके बाद में वे यहां फिर कभी नहीं आये. उन्हें निष्कासित कर दिया गया था.

—तो वे मास्को में भी नहीं हैं?

—हैं, अपने पिता की मृत्यु के बाद वे यहां नहीं आये.

—कांतय्या. . .

—अपने पति के साथ रहती है. उसके एक बच्चा है. उसकी मां भी उसके साथ ही रहती है.

—आपको उनका टेलीफोन नंबर पता है?

—ठहरिए यहीं कहीं दीवार पर लिखा है. यह रहा–८३०१६८

★ ★

उसी दिन

—आप ८३०१६८ से बोल रही हैं?

—जी. कांतय्या या इकातेरेनिया ग्रादोवा है?

—अब वह ग्रादोवा नहीं रहीं. वह जैम्सतोवा हो गयी है. और वह मैं हूं. हैलो मीशा. हैलो. . .

—यह तुमने कैसे जाना कि मैं बोल रहा हूं?

—बहुत आसान है.

—चार वर्ष से अधिक बीत गये. फिर भी तुम मेरी आवाज पहचान गयी.

—हां. और मुझे खुशी है कि. . .

—मैं जिंदा हूं?

—हां. और आपने मुझे फोन किया.

—तुम्हारी आवाज भी पहले जैसी ही है.

—मेरी आवाज साढ़े चार साल पहले ऐसी नहीं थी!

—अरसा तो करीब पांच साल का हो गया है. तो अब तुम जैम्सतोवा हो?

—हां, मैंने शादी कर ली.

—मुझे मालूम है. और मुझे यह भी मालूम है कि तुम्हारे एक बच्चा है. और यह भी कि तुम्हारी माताजी साथ रहती हैं और तुम्हारा टेलीफोन नंबर. . . और. . . कि तुम विवाहित हो.

—यह सारी जानकारी सही है. अब आप मेरे बारे में सब कुछ जानते हैं और मैं आपके बारे में कुछ भी नहीं जानती.

—मेरे संबंध में जानने के लिए कुछ है भी नहीं. मैं तो अन्य लोगों की तरह एक साधारण पुरुष हूं. युद्ध में मोर्चे पर गया. दो बार जख्मी हुआ. . .

—बुरी तरह?

—एक बार बुरी तरह जख्मी हुआ. लेकिन समय ने सारे जख्म भर दिये. अपने बारे में और क्या बताऊं? लगता है, समय के साथ-साथ उम्र में तेजी से बढ़ रहा हूं.

—पांच साल बीत गये!

—मेरे एक पुराने सूट की जेब में तुम्हारे टेलीफोन नंबर की चिट थी. मैंने रिंग किया. और अब बातें कर रहा हूं उस व्यक्ति की मेहरबानी से जिसने मुझे यह फोन नंबर अभी बताया. . .

—शुक्रिया.

—और अब आप विवाहित हैं. . .

—काफी दिन हो गये शादी किये.

—तुम्हारी आवाज कुछ क्षमा प्रार्थी-सी सुनाई देती है.

—यह महज एक इत्तफाक है.

—तुम्हें अपने पति से प्रेम है?

—अत्यधिक. वह भी युद्ध में बुरी तरह जख्मी हुए थे. मुझे अपने बच्चे से भी अत्यधिक प्यार है. वे दोनों मुझे बेहद प्यार करते हैं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—करीना...

—....

—करीना, मैं तुम्हें देखना चाहता हूं?

—"......"

—तुम जवाब क्यों नहीं देतीं? क्या सोच रही हो?

—जो कुछ सोचना था, मैं पहले ही सोच चुकी हूं.

—कितनी मधुर आवाज है!

—यह हमारी मुलाकात की कोई वजह नहीं है.

—क्यों?

—क्योंकि आप मेरे संबंध में मेरी आवाज मधुर होने की वजह से सोचते हैं. सचमुच मेरी आवाज दिलकश है. और मुझे डर है कि इसी आधार पर कहीं आप मुझे दिलकश तो नहीं समझते. आप मेरी बात समझे?

—बात समझ में नहीं आयी.

—समझ जायेंगे. वक्त आने पर सब कुछ हो जाता है. और अब सिर्फ इतना याद रखिए कि पांच वर्ष पहले एक लड़की थी, जिसका नाम करीना था और उसकी आवाज बड़ी मधुर थी.

—सुनिए, अब आप मेरी बात का जवाब नहीं दे रहे. आप खामोश हैं.

—मैं सोच रहा हूं.

—अच्छा, मीशा. मेरी शुभकामनाएं. जीवन में सुखी रहो.

—कुछ नहीं जानता, क्या होगा. लेकिन सुखी रहने की कोशिश करूंगा.

—सब ठीक हो जायेगा. अब हम दोनों एक-दूसरे से गुड बाई कहें.

—करीना, जब तुम संबंध तोड़ ही रही हो, तो कोई अच्छी बात कहो.

—अच्छी बात? जैसे?

—कोई एसी बात जिसे तुम सबसे बढ़िया समझती हो.

—मैं एक बहुत ही बढ़िया सेब खा रही हूं...

□□□

(अनुवाद : हमीदुल्ला खां)

जर्मन लघुकथा

अपनी-अपनी हैसियत

● लेसिंग

एक बार पशुओं में विशेष अधिकारों के बारे में बहस छिड़ गयी. बहस का कोई नतीजा न निकलने पर घोड़े ने कहा—आदमी से सलाह लेनी चाहिए. क्योंकि वह इस झगड़े में शामिल नहीं है इसलिए वह निष्पक्ष हो कर राय देगा.

—लेकिन क्या उसमें इतनी अक्ल भी है? छछूंदर ने पूछा, हमारे गुण तो ज्यादातर गहराई में छिपे रहते हैं. उन्हें ढूंढ़ने के लिए आदमी की बहुत गहरी अक्ल की जरूरत पड़ेगी.

—बहुत अक्ल की बात कही है! चूहे ने कहा.

—मैं नहीं मान सकता कि आदमी में इतनी अक्ल होगी, खरगोश ने कहा.

—चुप रहो, घोड़े ने कहा, हम अच्छी तरह जानते हैं कि जिस किसी को अपने पक्ष की सच्चाई पर भरोसा नहीं होता, वही सबसे पहले इनसाफ करने वाले की अक्ल पर शक करता है.

आखिर आदमी को फैसला करने के लिए कहा गया.

—बस, एक बात, शेर ने आदमी से कहा, फैसला करने के पहले यह बताओ कि वह कौन-सी कसौटी है, जिस पर तुम हमारी योग्यता परखोगे?

—कसौटी? आदमी ने कहा, कसौटी यही होगी कि मेरे लिए कौन ज्यादा फायदेमंद है और कौन कम.

—बहुत खूब! शेर ने गरजकर कहा, तब तो मैं गधे से भी नीचा साबित होऊंगा. नहीं, तुम हमारा फैसला नहीं कर सकते. चले जाओ हमारे बीच से!

आदमी चला गया, तो छछूंदर ने कहा—अब? क्यों घोड़े, तुमने देख लिया कि शेर का भी यही खयाल है कि आदमी फैसला नहीं कर सकता. शेर भी हमारी तरह ही सोचता है.

—पर तुम से कहीं ज्यादा ऊंचे स्तर पर, शेर ने बाकी सब की ओर हिकारत से देखते हुए कहा. फिर, कुछ देर चुप रह कर उसने कहा, अच्छी तरह सोच-विचार करने पर मैं समझता हूं कि हमें विशेष अधिकारों के बारे में आपस में झगड़ना नहीं चाहिए. तुम मुझे सबसे ऊंचा मानो या सबसे नीचा, इसकी मुझे कोई परवाह नहीं है. मेरे लिए बस इतना ही काफी है कि मैं अपनी हैसियत जानता हूं. उसी समय वह वहां से चला गया.

समझदार हाथी, साहसी बाघ, ईमानदार रीछ, चालाक लोमड़ी, नेक घोड़ा, सभी उसके पीछे-पीछे चल दिये. आखिर वे सभी जानवर चले गये, जो अपनी हैसियत जानते थे.

जो सबसे बाद में गये और जो सबके चले जाने पर अफसोस करते थे, वे थे—बंदर और गधा.

□□□

(अनुवाद : सुरजीत)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एयर-इंडिया प्रस्तुत करती है सप्ताह में पैंसठ उड़ानें—५ महाद्वीपों के लिए.

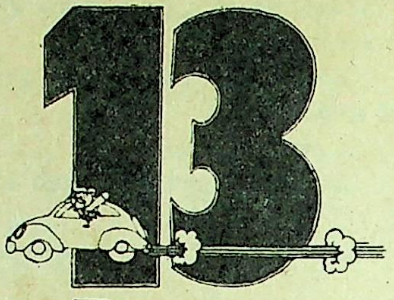

यूरोप

यूरोप के लिए सप्ताह में १३ उड़ानें
लंदन ? नौ ७४७ विमानों को आपका इंतजार है. इनमें से तीन, शुक्रवार, शनिवार और मंगलवार को, तेज गतिवाले हैं. अन्य छह में आपको रोम, पेरिस या फ्रैंकफर्ट हो कर जाने की सुविधा मिलती है. इसके अलावा दो ७०७ विमान जिनेवा हो कर. मॉस्को ? दो ७०७ विमान.

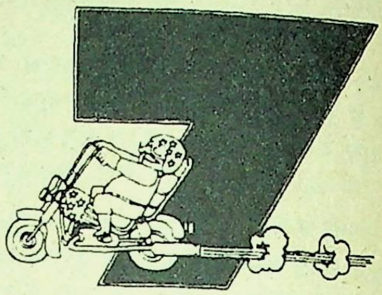

न्यू यॉर्क

न्यू यॉर्क के लिए सप्ताह में ७ उड़ानें
हर दिन ७४७ विमान की एक उड़ान. मध्य पूर्व और यूरोप होते हुए. हमारे विशेष एक्सकर्शन फ़ेयर के अन्तर्गत न्यू यॉर्क जा कर वापस लौटने का किराया आम तौर पर लगनेवाले एकतरफ़ा किराये से भी कम पड़ता है.

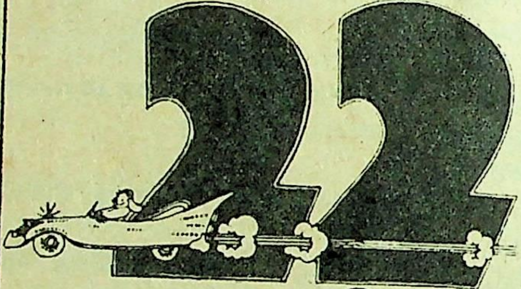

मध्य पूर्व

मध्य पूर्व के लिए सप्ताह में २२ उड़ानें
बेरूत ? पाँच ७४७ विमान उड़ान भरने को तैयार. कुवैत ? चार ७४७ तथा दो ७०७ विमानों में से आप मनपसंद चुनाव कर सकते हैं. दुबई के लिए चार ७०७ विमानों में से कोईसा भी चुनिए. बहरैन तथा मस्कत के लिए तीन उड़ानें तथा आबू धाबी, कैरो और तेहरान में से प्रत्येक के लिए दो उड़ानें. इसके अलावा अदन, दौहा या दहरान में से प्रत्येक के लिए एक ७०७ विमान.

साथ ही हर सप्ताह :
६ उड़ानें
जापान के लिए हौंग कौंग हो कर—
४ टोकियो के लिए
२ ओसाका के लिए. १० उड़ानें
दक्षिण पूर्व एशिया के लिए—
६ बैंकॉक के लिए और
४ सिंगापुर के लिए.
२ उड़ानें
ऑस्ट्रेलिया के लिए
३ उड़ानें
पूर्व अफ्रीका के लिए
२ उड़ानें
मॉरिशस के लिए.

एयर-इंडिया
आपकी मनपसंद एयरलाईन

AI. 9084

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूसी लघुकथा

हीरोइन की तलाश

निर्देशक कार्ल विस्थेनिन को अपनी नयी फिल्म के लिए हीरोइन नहीं मिल रही थी. 'लड़की सुंदर होनी ही चाहिए' उसने सोचा. चुस्त बदन, लंबा कद, सुरीली आवाज, आंखों में चमक और मुस्कान में बिजली. इस के अतिरिक्त घुड़सवारी में निपुण होनी चाहिए. लेकिन ऐसी लड़की मिले कहां से?

उसी समय टेलफोन की घंटी बजी.

—नमस्कार कार्ल; मैं हूं.

—नमस्कार समसोन कार्पाविच, क्या कहा? आप एक लड़की को जानते हैं. वह आपकी रिश्तेदार है? खूब! उम्मीदवार तो वैसे बहुत हैं लेकिन मैं स्वयं उसका इंटरव्यू लूंगा.

संध्या को कार्ल, समसोन कार्पाविच के घर पहुंचा. जब चाय पी चुके तो लड़की ने कमरे में प्रवेश किया.

—यह है हमारी जूलियेत्ता! कहिए कैसी लगी?

कार्पाविच को ऐसा लगा मानो कार्ल कुछ क्षण सोच में पड़ कर बोला—क्यों नहीं, क्यों नहीं, मुझे कोई एतराज नहीं लेकिन बात दरअसल यह है कि फैसला अकेले मेरे हाथ में नहीं है.

—खैर, कोई बात नहीं! कार्पाविच ने बात का रुख बदला. तुमने नया फ्लैट अलाट करवाने के लिए आवेदन दिया है न, उसमें बड़ी मुश्किल पड़ गयी है! जहां तक मेरी पहुंच है, मैं भरसक प्रयत्न कर चुका हूं. लेकिन सफलता की कोई आशा नहीं है.

निर्देशक ने झट से सुर बदला और बड़े उत्साह से बोला— चायदानी पकड़ने की अदा तो देखो कितनी अनूठी है! जूलियेत्ता तुम कल स्टूडियो में आओ.

स्टूडियो आने के निमंत्रण से जूलियेत्ता आनंद से पुलकित हो उठी और अगले दिन वहां जा पहुंची. कार्ल ने उसका परिचय अन्य कलाकारों से करवाया परंतु उसके प्रति उनका व्यवहार मैत्रीपूर्ण न था.

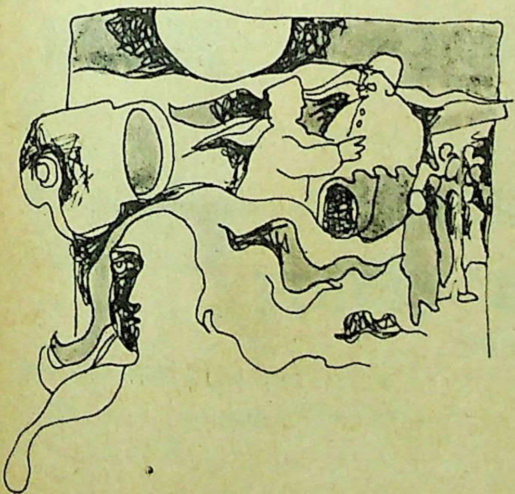

—हे प्रभु, कैसी भौंड़ी सूरत है!

—कैसी बर्फानी आंखें हैं!

—बोलती है तो लगता है मानो कौआ बोल रहा है!

—क्या मंदबुद्धि पायी है!

—हंस रही है या रो रही है, पता चलाना मुश्किल है.

—इस नौ मन की धोबिन के लिए घोड़ा कहां मिलेगा?

—बस, बस बहुत हो गया, आलोचकों को चुप कराते हुए निर्देशक बोला.

—आज सिनेसंसार में सब कुछ संभव है. मेकअप से सब दोष छिप जाते हैं.

—माना लेकिन उसकी कमर का क्या करेंगे?

—कार्सेट पहनाएंगे.

—कद?

—उसके साथी ऐक्टरों को उससे दूर खड़ा करेंगे.

—आखें?

—आंखों का इतना बड़ा क्लोज अप लेंगे कि सारी स्क्रीन भर जाए—और यह आंखें किसी अन्य लड़की की होंगी.

—आवाज?

—उसके गानें आपेरा की प्रसिद्ध गायिका कलाकार गाएगी!

—मुस्कान?

—उसकी जगह ड्रामा की सुप्रसिद्ध कलाकार कैमरे के सामने मुस्कराएगी. घोड़े पर पुरस्कार प्राप्त कुशल घुड़सवार को बिठाएंगे और कैमरा पीछे से तस्वीर लेगा. नृत्य के लिए प्रसिद्ध बालेरीना की सेवाएं प्राप्त की जाएंगी.

इस प्रकार प्रधान निर्देशक ने सब बाधाओं पर विजय प्राप्त की.

छः महीने बाद पत्रिकाओं में एक नयी फिल्म के चर्चे हुए:

'सिने संसार की नवोदित तारिका जूलियेत्ता को उसकी सफलता पर बधाई देना जरूरी है. यह शानदार विजय केवल नवयुवती अभिनेत्री की ही नहीं, बल्कि सारे स्टूडियो की है.' □□□

(अनु: रमेंद्रस्वरूप शर्मा)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेहरे पर लाए...

...दिल की जवानी

त्वचा में कोमल बेदाग़ जवानी की झलक ...
पाण्ड्स कोल्ड क्रीम से. यह उन सभी क्रीमयुक्त प्राकृतिक तेलों से मिश्रित है. जिनकी एक सुंदर रूपरंग के लिए आपको आवश्यकता है. इसे अपनी त्वचा के पोषण के लिए मलिए और जाड़े की ज़ुल्मी बयारों से त्वचा बचाइए.

आपकी... युवा त्वचा का आधार
पाण्ड्स कोल्ड क्रीम

चीज़ब्रो पाण्ड्स इन्क. (सीमित दायित्व के साथ यू एस ए में स्थापित)

लिंटास - CPC. 6-140 HI

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञान ही शक्ति है

गधा राह में मुर्गे से मिला. मुर्गा बोला—हलो, गधे!

—हलो. गधे ने शुष्कता से उत्तर दिया—कृपया आगे से मुझे गधा कह कर न पुकारें.

—क्यों? मुर्गे ने आश्चर्य से पूछा—क्या तुम्हारा गधापन खत्म हो चुका है?

—एक तरह से तुम्हारी बात ठीक है, गधे ने कहा—अब मुझे मेरी विद्वता के प्रमाण स्वरूप एक डिग्री प्रदान की गयी है.

—वास्तव में! अरे वाह, लेकिन क्या मुझे बताओगे कि तुम्हें कौन-सी डिग्री मिली है?

—इक्वस ऐसीनस मैमेलिया नॉन आडियो डैक्टाइला. गधा सगर्व बोला.

मुर्गा बहुत प्रभावित हुआ. □

आलसी बिल्ली

छोटा-सा चूहा जब स्टोर में घुसा तो उसकी आंखें प्रसन्नता से चमक उठीं. वहां अल्मारी के ऊपर के खाने में सूअर का मांस, बीच के खाने में पनीर और सबसे नीचे बहुत सा अनाज रखा हुआ था.

चूहे की आंखों में शरारत तैर उठी. सबसे पहले उसने पनीर के टुकड़े कुतरे. फिर अनाज की बोरियों में छेद कर कुछ अन्न पेट में भर लिया. लेकिन जब उसने मांस पर हाथ साफ करना शुरू किया तो उसने महसूस किया कि एक जोड़ा आंखें उस पर लगी हुई हैं. वह मुड़ा तो स्तब्ध रह गया. दाहिनी ओर खिड़की के पास एक बड़ी बिल्ली धूप सेंकती हुई उस नन्हें से चोर को देख रही थी.

—मैं तो गया. चूहे ने सोचा—यहां तो छिपने के लिए भी कोई जगह नहीं है.

—क्या कर रहा है चूहे? बिल्ली ने चूहे को लगातार घूरते हुए पूछा.

—मैं. . .मैं. . .मैं. . .बस—चूहा बिल्ली की हरी चमकती हुई आंखों से धीरे-धीरे दूर हटते हुए हकलाया.

—ग. . .ग. . .गेट आउट. आलसी बिल्ली जंमाई लेती हुई बोली. □

(प्रस्तुतकर्ता : अनिल कुमार गंगल)

समानता

एक बड़ी मछली ने एक छोटी मछली को जा घेरा और उसे निगलना चाहा.

छोटी मछली बोल पड़ी—यह अन्याय है. मैं भी जीना चाहती हूं. सारी मछलियां कानून के सम्मुख बराबर हैं.

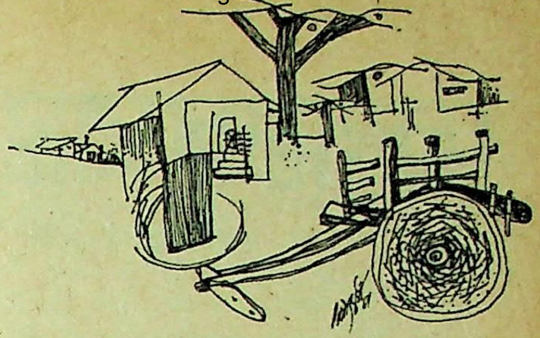

बड़ी मछली ने उत्तर दिया—मैं यह बहस करना नहीं चाहती कि हम समान हैं या नहीं, कृपया तुम अगर मुझे निगल सकती हो तो निगल जाओ.

छोटी मछली बड़ी मछली को कोंचने की कोशिश करने लगी. अंत में, आह भर कर बोली—तुम जीतीं, मुझे निगल जाओ. □

ज्ञानवान बटिया-पत्थर

एक शहर में बटिया-पत्थर की बनी सड़क थी. उस पर एक गाड़ी जा रही थी. उसके पहिये ने सड़क पर एक बटिया-पत्थर को उखाड़ दिया. वह पत्थर स्वयं से बोला—मैं यहां अन्य बटिया-पत्थरों के साथ बंधा हुआ क्यों पड़ा रहूं?

एक लड़का उधर से गुजरा और उसने उसे उठा लिया. पत्थर ने सोचा—मैं यात्रा करना चाहता था और मैं यात्रा कर रहा हूं.

लड़के ने पत्थर को एक घर पर फेंका. पत्थर ने सोचा—मैंने उड़ना चाहा था और इसलिए अब मैं उड़ रहा हूं.

पत्थर कांच की खिड़की से जा टकराया. कांच टूट गया, और टूटते हुए चीखा—ओह, बदमाश! देखो तुम क्या कर रहे हो!

किंतु पत्थर ने उत्तर दिया—तुमने मेरी राह रोकने का पर्याप्त प्रयत्न किया. मैं लोगों का अपनी राह में फंसना पसंद नहीं करता.

पत्थर मुलायम बिस्तरे पर जा पड़ा और सोचने लगा—वाह, मैं खूब उड़ा; अब मुझे कुछ देर तक लेटना तथा आराम करना चाहिए.

एक नौकर अंदर आया और उसने पत्थर को खिड़की से बाहर फेंक दिया, वह पुनः उस बाटिया-पत्थर की गली में जा गिरा.

तब वह अपने साथियों से चीखता हुआ बोला—भगवान का लाख शुक्र है भाइयो, मैं अभी हाल ही में एक मकान से घूम कर लौटा हूं, किंतु मैंने महसूस किया है कि मैं अभिजात-वर्ग की तनिक भी परवाह नहीं करता, मेरा दिल तो सदैव साधाहरण लोगों के लिए उत्कंठित रहता है, सो मैं आप लोगों के पास आ गया हूं. □

(प्रस्तुतकर्ता : र. कु. वैद)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकतरफा प्यार

• क्रिजेश कारिथी

आठ साल के अंतराल के बाद मैं फिर बर्लिन जा रहा था, जहां मैंने अपनी जवानी के दो सबसे खूबसूरत और सबसे उदास साल भी बिताये थे. इस बार मैं काम से आया था, तीन दिन ठहरने के इरादे से. मैं फ्रेडरिखस्ट्रास स्टेशन की सीढ़ियां उतर रहा था कि तभी दर्द का वह अहसास मुझ पर हावी हो गया जिससे मैं उन दिनों में क्षण भर भी मुक्त नहीं हो सका. मैं उस मनोदशा का वर्णन नहीं कर सकता, सिर्फ यह कह सकता हूं कि उन तीन दिनों में मैंने केवल अतीत को जिया. . .उन्हीं दो वर्षों को जिनकी गंध और रंग मैं उसी तरह खो चुका था जैसे मृतक के प्राण. मैं अपनी तुलना उस मनुष्य से कर सकता हूं जो हाथ खो चुका है और वह व्यथा के साथ उस सुखद समय की याद करता है जब उसका हाथ उसके दिमाग को यह खबर देता था कि उसे चोट आ गयी है. मैंने उन दुःखों को याद किया जो अब नहीं थे, और जिसके बारे में मैंने अब जा कर अनुभव किया कि उन्हीं में वह सब कुछ निहित था जो मेरी जिंदगी में चौंधिया देने और असहनीय होने की हद तक खूबसूरत था.

वे दुख अब नहीं थे, और जब मैं फ्रेडरिखस्ट्रास पर चल रहा था. अपने दिमाग को उन परस्पर जुड़ी जगहों और घटनाओं को याद करने के लिए झकझोर डाला. इस कैफे में मैं एक बार बैठा था, किसी के इंतजार में. . . वहां पुल के नीचे डेनिस से मिला था, उसकी आत्महत्या की कोशिश के बाद. . .वो डाकघर है जहां मैंने अपनी जिंदगी में लिखे सबसे सुंदर पत्र डाले थे और. . .और वे खो गये थे. . .सब कुछ मैंने देखा और याद किया, लेकिन मुझे धुंधली-सी याद आ रही थी कि मैं कुछ भूल रहा हूं, कुछ ऐसा जो बहुत ही अहम है, वह कड़ी जिसने सारी चीजों को एक पूर्ण इकाई में मिला दिया था.

मैं उसे भूल चुका था, लेकिन मेरी गोपन इंद्रियों और मेरे अवचेतन अहम् की इच्छाशक्ति ने उसे बिल्कुल साफ-साफ देख लिया होगा. वरना यह कैसे हुआ कि मेरे कदम लेसिंग थिएटर की ओर बढ़ते जा रहे थे, जिसके नजदीक, एक गंदे चौराहे पर एक निहायत घटिया कैफे की खिड़की के पीछे मुझे अचानक फेलिक्स स्टाल नजर आ गया.

अनजाने ही मैं उसी को खोज रहा था, विशुद्ध सहजबोध से, क्योंकि यह उम्मीद शायद मैं कर ही नहीं सकता था कि वह उसी कैफे में, यहां तक कि उसी टेबुल पर बैठा होगा जहां आठ साल पहले बैठा करता था. हम जुदा हुए उसके बाद उसका क्या हुआ, यह न मैं जानता था, न ही जान सकता था. पर मन ही मन में मान चुका था कि अगर वह जिंदा है, तो वह सामान्य इंसानी जिंदगी नहीं जी रहा होगा कि या तो वह पागलखाने में होगा, या किसी मठ में, या शायद अफ्रीका में, और शायद इंसान की शक्ल में भी नहीं, चिड़िया या जंगली जानवर के रूप में ! मैं फेलिक्स स्टाल में मौजूद उस भयावह, ठोस जीवन शक्ति के आवेग की, उस अंधेरी, यातनाजनक, हताश वहशी कामना के आवेग की कल्पना नहीं कर सकता था जो दिनों, महीनों और वर्षों के व्यतीत होने की संकीर्ण सीमाओं में दबी हुई थी.

और अब-जब मैंने उसे देखा, मैं यह नहीं मानना चाहता था कि खुद को सूखे जंगल में फेंकी चिनगारी की तरह या ज्वालामुखी के मुंह पर पानी की तरह क्षार-क्षार हुए बिना फेलिक्स स्टाल उन तीन हजार दिनों और रातों की विराट सुरंग पार कर सका होगा. मगर फेलिक्स स्टाल वहां मौजूद था, और उसी के साथ वे शानदार दो वर्ष भी शहर की खाक छानते हुए बितायी गयी रातें, सबेरे टहलते हुए, लंबी खामोशियां, अपने चारों ओर हवा में काल्पनिक आकृतियां और व्यंग्यचित्र बनाते और उन पर उन्मुक्त तथा व्यग्र हमारी हंसी, रहस्यमय आकार जिनका अन्वेषण करते वह कभी थकता नहीं और जो मध्ययुगीन रेखांकनों के दैत्यों, भूत-प्रेतों और बौनों की तरह हमारे चारों ओर धक्कमधुक्का करते रहते थे.

मुझे देखते ही उसका चेहरा सुर्ख हो गया. वह बहुत कम बदला था. उसका चेहरा कुछ भर गया था, लेकिन ताज्जुब कि उद्दाम हठीली वासना द्वारा उकेरी गयी उसके चेहरे की सुपरिचित झुर्रियां और शिकनें और भी गहरी हो गयी थीं.

शुरू में हम लोग फालतू बातों पर बातें करते रहे, हालांकि स्नेह के साथ और खुशी को दबाते हुए, मैंने महसूस किया कि आठ साल में वह ऐसे किसी आदमी से नहीं मिला जिससे उन्मुक्त बातचीत कर सके. फिर अनजाने ही हमारी बातचीत पुराने विषयों पर मुड़ गयी. आठ वर्ष पहले की तरह ही हम दोनों लोगों और चीजों पर अपनी-अपनी राय का इजहार करते रहे. पता नहीं कैसे, हममें से किसी को यह सूझा ही नहीं कि इस बीच हमारी जिंदगी क्या और कैसी रही है. अनायास मैंने ध्यान दिया कि फेलिक्स बार-बार अपनी घड़ी देख रहा है. सिर्फ तभी मुझे सारी चीजें याद आयीं——तुम्हें किसी से मिलना है? मैंने कहा.

उसने मुझे देखा. स्पष्ट था कि वह कुछ कहना चाहता है, लेकिन बिना कुछ कहे वह दूसरी ओर देखने लगा. मुझे एक भारी दया और साथ ही अजीब-सी ईर्ष्या ने जकड़ लिया. मुझे उसके चेहरे की दयनीयता से, निराश अंदाज में उसके सामने देखने से जलन हुई.

——क्या वह अभी भी बर्लिन में है?

फेलिक्स ने सिर हिला दिया.

——या उसी के लिए तुम यहां बैठे हो? अभी वह कहां है?

——लेसिंग थिएटर में.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—अभी हमारे पास १५ मिनट और हैं, अपनी घड़ी पर नजर डालते हुए मैं बोला 'मैं नाटक के विज्ञापन देखना चाहूंगा. क्या तुम थिएटर जाकर उसका इंतजार करोगे?

फेलिक्स ने सिर हिलाया. एक घंटे बाद, जब मैं अपने पहले झटके से मुक्त हो चुका था तो मैं हैरत से सोचता रहा कि उन पंद्रह मिनटों में मेरे दिमाग में यह क्यों नहीं आया कि मैं उससे पूछूं, कि उन आठ सालों में उन दोनों के बीच क्या-कुछ हुआ. उस औरत के प्रति फेलिक्स की उस नायाब, खूबसूरत दहकती, दयनीय और कमीनी कशिश ने क्या-क्या वारदातें करायीं, क्या गुल खिलाये? सारी दुनिया को, समय को और स्थान को भूल, केवल हन्ना के बारे में सोचते हुए, उसके बीमार-से जर्द रंग, उसके प्यारे प्यारे हाथों के बारे में, जो मर्दाने आंसुओं से धुले हैं, उसके अकथनीय रूप से प्यारे सिर, उसके रेशमी कपड़ों की मुलायम सरसराहट के बारे में सोचते हुए, फेलिक्स का वहां बैठना बिल्कुल स्वाभाविक लगा, यह इतना स्वाभाविक था कि फेलिक्स को वहीं बैठा होना चाहिए और बरसों तक इंतजार करना चाहिए. . .दूर से उनकी एक झलक भर पाने की खातिर, या उस घर को देखने की खातिर जहां वह शायद घुसी हो, या उस सड़क को देखने की खातिर जहां से वह कल शायद गुजरी हो.

मेरे सवाल उनके प्रेम संबंधों की मौजूदा स्थिति जानने के इरादे से नहीं पूछे गये थे. मैं साफ देख रहा कि उसका प्यार वही है जो पहली बार देखने पर था, बल्कि उसे देखने का उसके बारे में सुनने से भी पहले से था, क्योंकि फेलिक्स को इस दुनिया में हन्ना के लिए अकूत कशिश ही लायी थी, जिसकी सुगंध अनस्तित्व के अंधेरे शून्य में भी तिर कर उस तक पहुंच गयी होगी.

—क्या तुम उससे मिल चुके हो?

उसने सिर हिलाया, लेकिन मैं समझ गया कि वह इस सवाल से उकता चुका है. हन्ना से उसके संपर्कों के बारे में मैंने और जो भी सवाल किये उसके उसने संक्षिप्त, यकायक जवाब दिये, या फिर कुछ नहीं बोला. फिर भी उसने बताया कि एक बार हन्ना उससे मिलने आयी थी. उन्होंने कहीं चले जाने का कार्यक्रम बनाया था, शायद रोम जाने का, और यह कि हन्ना को अपने पति से अलग हो जाना चाहिए.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—तुम उतनी दूर पहुंच चुके थे, मैंने साश्चर्य पूछा, वह तुम्हारे साथ चली जाने को तैयार हो गयी थी?
उसने जल्दी से सिर हिला दिया.

—अच्छा, फिर क्या हुआ?

जाहिर था कि वह इस बारे में बातचीत के लिए इच्छुक नहीं, और मैंने सोचा कि शायद इसलिए कि उनका कार्यक्रम असफल हो गया था.

—हम लोग स्टेशन पर दोपहर में मिलने वाले थे. मैं वहां था, इंतजार में, फेलिक्स की आवाज मारी थी.

—तो?

फेलिक्स उछलकर खड़ा हो गया. वह आगे कुछ बर्दाश्त नहीं कर पाया.

—कितने बजे हैं? उसने कहा.

मैं भी उठ गया. पर मैं उस किस्से का अंत जानना चाहता था और प्रश्नसूचक दृष्टि से उसे देख रहा था. फेलिक्स झेंप गया और बोला—फिर कभी, बूढ़े यार! क्या अभी तक आठ नहीं बजे?

हम लोगों ने बिल चुकाया और गैस-बत्तियों की रूखी चमचमाहट में थिएटर की ओर जल्दी-जल्दी चले. हममें से किसी ने कोई बात नहीं की. नाटक खत्म हो गया था और थिएटर के बाहर राजसी मोटरें आर्क लैंपों के नीचे एकत्र हो रही थीं. पहले फेलिक्स ने उसे देखा, उसने कुछ कहा नहीं, पर मेरी बांह भींच कर पकड़ ली. वह भयानक रूप से पीला पड़ गया था. हमसे कोई बीस कदम पर हन्ना एक मोटर की तरफ भागती-सी जा रही थी. उस भीड़ में वह एक सुंदरता के चुंधियाने वाले द्वीप की तरह थी, जो कि उसके लिए स्वतः ही रास्ता देती जाती थी. फेलिक्स एकटक उसे देखता निश्चल रहा. मैं उत्तेजित हो गया था.

—आओ चलें, मैंने कहा, हम लोग उससे बात करें. उसे शायद अब भी मेरी याद होगी. क्या तुम उससे बात नहीं करना चाहते?

फेलिक्स ने सिर हिलाया. वह मुसकरा रहा था, विक्षिप्त सुख से उसका चेहरा गौरवान्वित हो गया था.

वह फुसफुसाया—किसलिए? वह मुझसे क्यों मिलेगी? क्या यह शानदार नहीं है, इसी तरह उसकी ओर देखते रहना?

उसके स्वर में कहीं कुछ आह्लादसूचक था.

—तुम उसके बारे में क्या सोचते हो, उसने आगे कहा. देखो, अभी हम उसी जगह पर चल रहे हैं जहां कुछ क्षण पहले वह चल रही थी. देखो. . .वह परे है. पहुंच से बाहर . . . फेलिक्स कांप रहा था. अगर वह चाहती है कि मैं इसी वक्त मर जाऊं तो मैं खुशी से मर जाऊंगा अगर वह मुझे उसके लिए मरने की इजाजत दे दे. . .

मुझे गुस्सा आ गया.

—बेवकूफ, मैंने कहा, वह एक मिनट में चली जायेगी. तुम क्यों नहीं चलते और उनसे बात कर लेते?

फेलिक्स ने मुझे रोक लिया. अपना सिर हिलाता चुपचाप खड़ा रहा.

—मैं भयानक रूप से उसे प्यार करता हूं, वह बोला.

हन्ना अब तक चली गयी थी. हम लोग करीब पांच मिनट तक चुपचाप चलते रहे. फिर मैंने उसे देखा तो आश्चर्य हुआ कि उसके चेहरे पर शांति थी, बल्कि कुछ ऊब भी. उसने एक जमुहाई भी ली, और जमुहाई टूटने के पहले ही बोला:

—तुम कहां ठहरे हो?

—तुम चाहो तो मैं तुम्हें घर तक पहुंचा दूं, मैंने जवाब दिया.

—ठीक है, फेलिक्स ने एक नयी अपरिचित आवाज में कहा.

मुझे आश्चर्य हुआ. यह बिल्कुल कोई अजनबी था, जिससे मैं कभी भी नहीं मिला होऊंगा.

—हम लोग पैदल चल सकते हैं, उसने कहा. दूर नहीं है, संपादक को दफ्तर के पास ही रहना चाहिए.

★ ★

फिर वह अपने अखबार पर चहक-चहक कर बातें करने लगा, उसकी नीति का विस्तार से वर्णन करते हुए, जब तक कि हम एक खूबसूरत नयी इमारत के पास नहीं पहुंच गये.

—तुम थोड़ी देर के लिए भीतर नहीं आओगे क्या? उसके बाद तुम जहां चाहोगे, मैं साथ चलूंगा. मैं बस अपनी पत्नी को बताना चाहता हूं कि मैं खाना घर पर नहीं खाऊंगा.

—तुम्हारी शादी हो गयी है?

वह कुछ बुदबुदाया जो मैं सुन नहीं सका. लिफ्ट ऊपर जाने लगी. हमने एक आरामदेह-से फ्लैट के हाल में अपने कोट और हैट रख दिये.

फेलिक्स आगे बढ़ा और दरवाजे में से बात करने लगा. उसका स्वर काफी उदासीन था.

—अच्छा, तुम कपड़े बदल रही हो? डार्लिंग, मैं तुम्हें 'डिस्टर्ब' नहीं करूंगा. मैं सिर्फ यह कहना चाहता था कि मैं घर खाना नहीं खाऊंगा.

दरवाजा खुला और एक औरत बाहर आयी, सादी घरेलू पोशाक में. वह हन्ना थी.

मुझे याद नहीं कि मैंने हन्ना से क्या कहा या कि हकलाते हुए क्या कहा. मैं बिल्कुल भौंचक्का रह गया था. मैं फेलिक्स की उदासीन, अधीर आवाज को सुनकर यथार्थ के प्रति सचेत हुआ.

—मैं कह रहा हूं कि मुझे जाना है. तुम सो जाओ और मेरा इंतजार मत करना. कल मैं अलेक को ले आऊंगा. और तब तुम उससे गपशप कर लेना. गुड बाई!

हन्ना चुपचाप फर्श पर टकटकी लगाये रही.

हम सीढ़ियों पर आ चुके थे लेकिन मैं कुछ भी कहने की स्थिति में नहीं था. फेलिक्स हंसा, पर यह जबरदस्ती की हंसी थी जिसमें खुशी का पुट भी न था.

—गधे, मैं मजाक कर रहा था, वह बोला, तुम मुंह क्यों बनाते हो?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताक़त

अपनी ताक़त को बनाए रखने के लिए ओकासा की चांदी चढ़ी टॉनिक टिकियाँ लीजिए. शक्ति और स्फूर्ति के लिए मशहूर टॉनिक ओकासा. तंदुरुस्ती की एक निशानी ओकासा.

ओकासा

टॉनिक टिकियाँ
पुरुषों के लिए चांदी वाली

सभी बड़े-बड़े केमिस्टों के यहाँ मिलता है।

OKASA CO. PVT. LTD.
12K Gunbow Street,
P. B. No. 396 Bombay 400 001

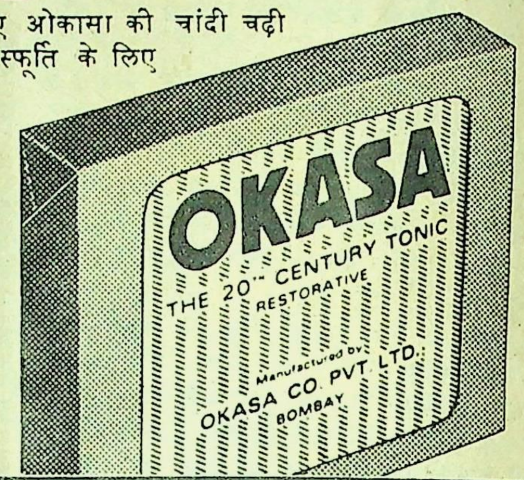

उसकी सुन्दरता का रहस्य ही

ऐटेक्स सौंदर्य प्रसाधन

ARAVIND LABORATORIES MADRAS-33

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर उसने गंभीर मुद्रा में कहा––तो, तुम्हें पता है उस बार स्टेशन पर. . .वह आयी और हम लोग साथ-साथ चले गये. हमारी शादी हुए ६ साल हो चुके हैं. . .

अंततः जुबान खुली, मुझे अपमान और गुस्सा महसूस हो रहा था. थिएटर के सामने मुझे बनाने और खुद का तथा मेरा अपमान करने का उलाहना मैंने उसे दिया.

वह अपनी पत्नी के बारे में पागलों की तरह, बोल कर और व्यवहार में तारीफ किये जा रहा था और फिर मुश्किल से घंटे भर बाद क्यों वह लगभग जानवरों की तरह उससे बर्ताव कर रहा था? इसी तरह मैं बोलता चला गया.

सड़क पर पहुंच कर मैंने उसे देखा. उसका चेहरा सौम्य और धैर्यपूर्ण दीख रहा था, उसी पुरानी उदासी के साथ उसने अपने घर की खिड़की की तरफ उलट कर देखा और अंततः स्नेहिल और मृदुल उदासी से भरे स्वर में जवाब दिया––मैं जरा भी मजाक नहीं कर रहा था, उसने कहा और मैंने देखा उसके चेहरे पर वही मुस्कराहट थी जो किसी मां के चेहरे पर, लोरी गाकर बच्चे को सुलाने के बाद आती है. मैं उसे नहीं बता सकता कि मैं उसे कितना प्यार करता हूं. वह मेरी पत्नी है. वह कभी नहीं जानेगी क्योंकि हम हमेशा साथ रहते हैं.

वह कहता गया––वह मेरी है और उसे उसी तरह प्यार करना है. मैं दूसरे ढंग से उसके साथ व्यवहार नहीं कर सकता. 'मैं तुम्हें प्यार करता हूं,' यह कहना अजीब, पहले से बहुत भिन्न लगेगा. पर कभी-कभी सड़क पर जब वह किसी दुख में विचारमग्न चलती होती है, या जब कभी दरवाजे की दरार में से उसे मैं काम करते देखता हूं, तब उसे देखकर मेरा हृदय कांप उठता है. . . वही पुरानी हव्वा, अप्राप्य, जिसके लायक मैं नहीं. तब मैं उसे उस एकमात्र सच्चे प्यार से देखता हूं––आशारहित प्यार क्योंकि जो प्यार आशारहित नहीं, वह प्यार नहीं है.

बहुत समय तक हम लोग बोले नहीं. कुछ देर बाद फेलिक्स की आवाज सुनायी पड़ी, मानो कहीं दूर से आ रही हो––कभी-कभी मेरी इच्छा होती है कि वह मर जाय. तब मैं सब कुछ सहेज लूंगा, फ्लैट में ताला डाल दूंगा और चाभी स्प्री नदी में फेंक दूंगा. और फिर मैं रात में कब्रगाह जाया करूंगा और उसकी कब्र के पास रोऊंगा. . . मैं खुल कर रोऊंगा, जीभर कर, यह सोचकर खुश, कि वह मुझे सुन नहीं सकती और मेरी वासना तृप्त नहीं कर सकती, कि वह वही पुरानी हव्वा है जो बर्लिन की सड़कों पर हमारे चारों ओर, एक सौम्य रहस्यमय मुस्कान अपने चेहरे पर और अपनी अंगुली, ओंठो पर रखे हुए फुदकती रहती है. पुरानी हव्वा. . .मेरा यौवन. . .

□□□

(अनुवाद : चंद्रकिरण राठी)

जर्मन लघुकथा

वज़न

• हर्डर

हक्कम नाम का खलीफा अपने महलों के बागों को दूर-दूर तक फैलाना चाहता था. सो, उसने इर्द-गिर्द की सभी जमीनें उनके मालिकों से मुंहमांगी कीमतें देकर खरीद लीं. वहां एक गरीब विधवा की भी थोड़ी-सी जमीन थी, जो अपने पिता-पुरखों की उस निशानी को बेचना नहीं चाहती थी. उसने खलीफा को अपनी जमीन देने से इंकार कर दिया. खलीफा को उस पर बहुत गुस्सा आया और उसने उसकी जमीन जबर्दस्ती ले ली.

विधवा रोती-कलपती हुई इंसाफ मांगने के लिए काजी के पास गयी.

उन दिनों इब्न बशीर शहर का काजी था. उसने सारी बात सुनी, तो उसे लगा कि मामला बहुत पेचीदा है. विधवा स्त्री कानूनी तौर पर अपना हक ले सकती थी, लेकिन खलीफा को कानून का पालन करने के लिए कहना आसान काम नहीं था, क्योंकि वह अपनी मर्जी को ही कानून समझता था.

आखिर काजी एक गधे के गले में बहुत बड़ा बोरा लटका कर महल की ओर चल पड़ा.

खलीफा ने उसे गधे के साथ देखा, तो उसे हैरानी हुई. फिर, उसे और भी हैरानी हुई, जब काजी उसके पांव पर गिर कर बोला––हुजूर, मुझे इस जमीन की मिट्टी इस बोरे में भरने की इजाजत दीजिये.

खलीफा ने इजाजत दे दी.

काजी ने बोरा भर लिया, तो उसे उठाकर गधे पर रखने के लिए खलीफा से मदद मांगी.

खलीफा को यह मांग और भी अजीब लगी. तभी कुछ सोच कर उसने बोरा उठाने में उसकी मदद करनी चाही. पर बोरा हिल नहीं रहा था. खलीफा ने कहा––इसका वजन तो बहुत ज्यादा है.

तभी काजी ने कहा––हुजूर, आपको यह वजन इतना ज्यादा लगा है, पर यह तो उस मिट्टी का बहुत छोटा-सा हिस्सा है, जो आपने गरीब बेवा से छीनी है. अगर यह इतना ज्यादा वजन है, तो कयामत वाले दिन दुनिया का काजी छीनी हुई जमीन का सारा वजन अपने कंधों पर रखना चाहेगा, तो आप उसकी कैसे मदद करेंगे?

यह सुनकर खलीफा हैरान-परेशान रह गया. फिर उसने काजी की हिम्मत और अक्ल की दाद दी और विधवा को उसकी सारी जमीन वापस कर दी.

□□□

(प्रस्तुतीकरण : सुखबीर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वियना का हीरा

• लायोश बिरो

वियना की सड़कों पर तेज वासंती हवा थी. शोल्ज परिवार के तीनों लड़के, जो कोर्ट थिएटर आर्केस्ट्रा के सदस्य थे, थियेटर से बाहर आये. उन्होंने अपने कोट के कालर ऊंचे कर लिये और उदास भाव से घर की तरफ चल पड़े. घर में उन्हें मां मिली— एक हताश, सतायी हुयी बूढ़ी औरत. सौम्यता के साथ उसने उनके लबादे ले लिये और उनका 'सपर' लाने रसोई में चली गयी.

तीनों शोल्ज लड़के टेबल पर नीची नजरें किये उदास बैठे थे.

—क्या पिताजी अभी घर नहीं आये हैं? दांत किटकिटाते हुए रूडोल्फ ने पूछा.

—नहीं, अभी वे घर नहीं आये हैं, उसकी मां ने विनम्र जल्दबाजी में जवाब दिया.

रूडोल्फ खाने लगा. मां ने कुछ देर इंतजार किया लेकिन हमेशा की तरह उसके किसी भी लड़के ने उससे बात करने की कृपा नहीं की, इसलिए वह चुपचाप दयनीय भाव से रसोई में खिसक गयी. तीनों लड़कों ने उदास चुप्पी में खाना खाया.

— मैं अब और नहीं सह सकता, मैक्सीमिलियन ने अपना सिंह जैसा सिर हिलाया. मैं यहां से चला जाऊंगा, उसने गंभीर आवाज में कहा जिसमें दर्द की गूंज थी.

बुर्ज के नीचे एक अच्छा कमरा है, एक नानबाई का घर है, उसकी बेटियां खूबसूरत हैं, रूडोल्फ बोला.

—तब फिर हम लोग वहीं चले जायेंगे, मैक्सीमिलियन ने कहा.

विचारों में डूबे वे खाते रहे. खाना खत्म होने के कुछ पहले उन्होंने बाहर अपने पिता की आवाज सुनी, इसलिए पाइप जला कर बिस्तरों पर लेट गये. इसी बीच उनके पिता, श्रीमान शोल्ज, सम्राट के दरबार के अवकाशप्राप्त संदेशवाहक, धीरे-धीरे, पर शोर मचाते हुए खाने के कमरे में घुसे. उस शाम वह अपने अंतरंग मित्रों के साथ बहुत देर तक पेरिस में शुरू हुई क्रांति के बारे में बातें करते रहे थे.

मेज पर उनके बैठने से पहले ही पत्नी खाना ले आयी थी फिर भी वह भुनभुनाने लगे— और क्या, अगर मैं भूखों मर जाऊं तो तुम्हें तो खुशी ही होगी. तुम तो चाहोगी कि मुझे दफन कर दो, क्यों लिजी, है न? लेकिन कोई फायदा नहीं होगा, लिजी, मैं तुम्हें दफन कर दूंगा. तुम्हारी लाश देखे बगैर मैं मरूंगा नहीं.

दयनीय, कांपती हुई वह औरत खाना लगा रही थी— तुम कांप रही हो! श्रीमान शोल्ज गरजे. तुम उस वक्त क्यों नहीं कांपती थी? उस वक्त तो सिर्फ तुम्हारा पापी शरीर तड़प रहा था, तुम्हारी हरजाई आत्मा नहीं.

पत्ते की तरह कांपती हुई वह औरत अलग हट कर रसोई में चुपचाप लौटने लगी—रुको! भूतपूर्व अदालती संदेशवाहक गरजा. वह औरत रुक गयी. श्रीयुत शोल्ज खाते जाते, पीते जाते और बोलते जाते—मुझे मालूम है, तुम मना रही हो कि . . . लेकिन तुम्हारी प्रार्थना का कोई फायदा नहीं होगा. चाहे जो हो, तुम नरक में जाओगी. लेकिन तुम्हें वहां भेजूं उससे पहले अपने कानूनी पति को धोखा देने का प्रायश्चित तुम्हें करना पड़ेगा. अगले दस साल में तुम्हें तुम्हारे न्यायाधीश के सामने भेज दूंगा. लेकिन तब तक मैं तुम्हें सजा देता रहूंगा.

बगल के कमरे में तीनों लड़के बेचैनी से करवटें बदल रहे थे— वह फिर उसे मारेगा, रूडोल्फ फुसफुसाया. मैक्सीमिलियन ने अपने कंधे उचका दिये— क्या तुम अब इसके आदी नहीं हो गये हो? उसने कहा.

फ्रांज के होंठ फड़क उठे— २२ साल से, उसने उदासी से कहा—बहुत लंबा समय है, बहुत दुख वह उठा चुकी है लेकिन. . .

हम जिंदगी भर यही भोगते रहे हैं, रूडोल्फ ने चिड़चिड़े स्वर में कहा.

—लेकिन हमें अभी यही और भी भोगना पड़ेगा, मैक्सीमिलियन ने पूरा किया, उस कलंक के लिए जो उसने हमारे माथे पर लगा दिया है.

—कोई नहीं जानता, फ्रांज विद्रोही स्वर में बोला. हम लोग जानते हैं यही बहुत है, मैक्सीमिलियन का स्वर कठोर था.

वह बिस्तर से उठ गया और कमरे में चहलकदमी करने लगा. उधर डाइनिंग रूम में भूतपूर्व अदालती संदेशवाहक खाना खा चुका था और अपनी पत्नी को पीटने की तैयारी कर रहा था.

—घुटनों के बल बैठ जाओ! वह गरजा. जिस पति को तुमने धोखा दिया है उसके सामने घुटनों के बल बैठ जाओ. क्या तुम स्वीकार करती हो कि तुमने मुझसे विश्वासघात किया है?

—हां, थरथराती हुई औरत ने कबूल किया.

—तुम्हारे कितने प्रेमी थे?

—एक. मैं कसम खाती हूं.

—वह कौन था?

उस औरत ने कराहते हुए बहुत धीमे जवाब दिया. मैक्सीमिलियन दरवाजे के पीछे खड़ा कांप रहा था.

डायनिंग रूम में भूतपूर्व दरबारी अर्दली खड़ा हो चुका था और जी भर कर पिटाई के लिए खुद को तैयार कर चुका था.

उसने अपनी बांहें उठायीं लेकिन तभी दरवाजा धमाके के साथ खुला और मैक्सीमिलयन धड़धड़ाता हुआ घुसा, एक क्रुद्ध हाथ ने भूतपूर्व दरबारी संदेशवाहक की उठी हुई बांह पकड़ ली.

—उसे छोड़ दो, मैक्सीमिलियन चीखा, वह बहुत भोग चुकी है.

—क्या मैंने तुम्हें ऐसा ही व्यवहार करना सिखाया है? शोल्ज गुस्से से गुर्राया.

—नहीं, मैक्सीमिलियन ने कहा. ऐसा नहीं, लेकिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम बहुत भोग चुके.

—उसने वेदी के सामने ली गयी कसमें तोड़ी हैं.

—उसके लिए वह बहुत दुःख उठा चुकी है, रूडोल्फ ने कहा.

—तुमने उसे अलग क्यों नहीं कर दिया? फ्रांज गुस्से से बोला.

—अगर तुमने उसे रखा है तो उसे सताओ मत.

भूतपूर्व दरबारी संदेशवाहक सजा की माप-तोल करना चाहता था. लेकिन उसके तीनों बेटे उसे पकड़ कर तीसरे कमरे में डाल आये और ताला बंद कर दिया.

आंखों में आंसू भरे हुए वह औरत डाइनिंग रूम के बीच खड़ी थी. उसके विनम्र हाव-भाव वहीं थे. वह अपने स्कर्ट की सलवटें ठीक कर रही थी. उसके तीनों लड़के उसे घेर कर गहरी उलझन में खड़े थे.

—बैठ जाओ. . . मां! मैक्सीमिलियन ने कहा. फ्रांज ने उसके सामने एक कुर्सी खींच दी.

उन्होंने उसे टेबल के सिरे पर बैठाया. पर कुछ देर तक वे कुछ भी न बोल सके. तीनों लड़के अपनी मां से घृणा करते हुए बड़े हुए थे और आत्मीय बातचीत और संवेदना के शब्द मुश्किल से ही निकल पाते थे.

उस औरत की दुखपूर्ण भयभीत आंखों ने तीनों लड़कों पर सूक्ष्म दृष्टि डाली. लड़कों ने अपनी नजरें नीची कर लीं अंत में मैक्सीमिलियन ने अपना सिंह जैसा सिर उठाया और कहा —मां, जो तुमने अभी कहा, क्या वह मैंने ठीक से सुना है?

—क्या?

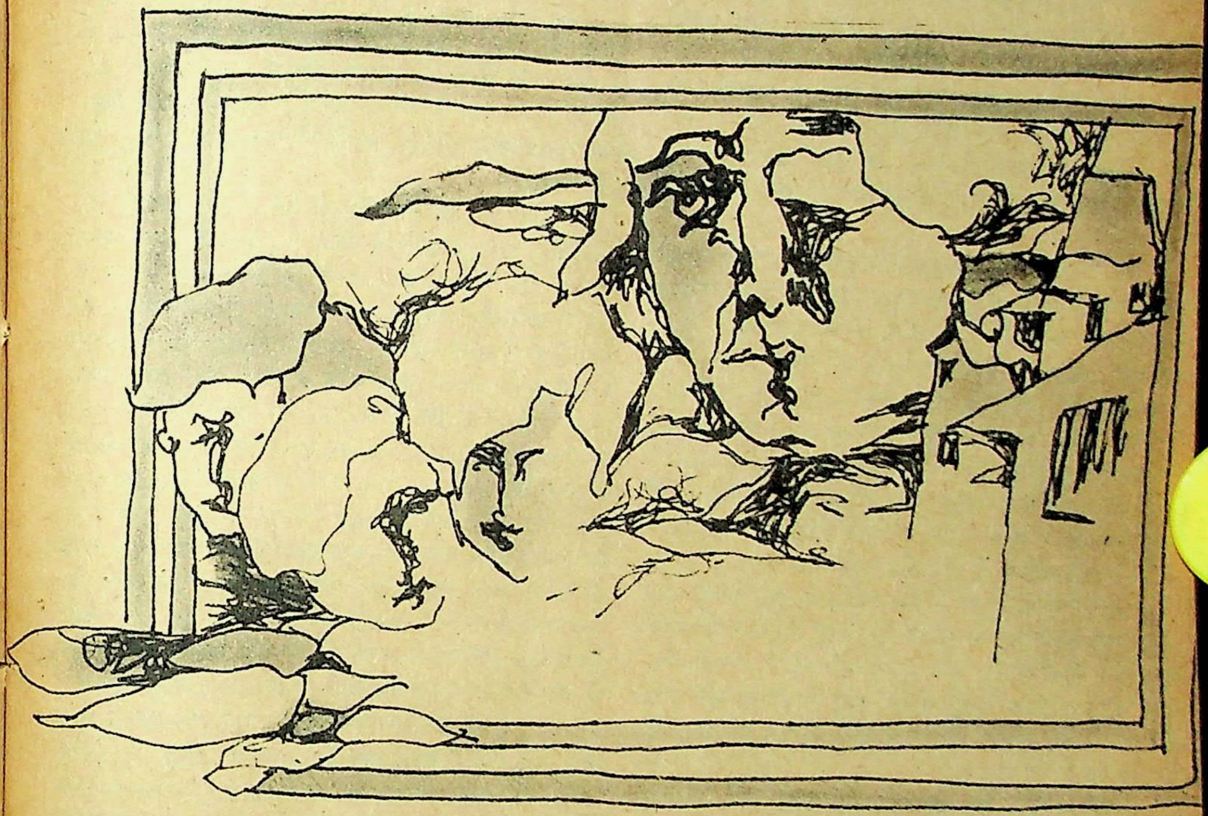

—वह नाम. . . उस आदमी का नाम जिस साथ. . .वह कौन था?

औरत की थकी पलकें उसकी भीगी पलकों पर छा गयीं. —बीथोवेन, वह फुसफुसायी.

तीनों लड़कों ने चौंक कर एक दूसरे को देखा.

—कौन-सा बीथोवेन? वह मुश्किल से.कह पाया.

उस औरत की मुरझायी पलकें फिर खुलीं — केवल एक ही था. उसने धीमी आवाज में उत्तर दिया.

—लुडविग वान बीथोवेन, मैक्सीमिलियन ने विस्मय से फुसफुसा कर पूछा.

—लुडविग वान बीथोवेन, उसकी मां ने जवाब दिया—जब हम लोग एक ही घर में रहते थे. इसलिए मैंने तुम सब को संगीतकार बनाया.

कमरे में शांति छा गयी. लड़के इस आघात से चुप थे. फिर वे अपनी मां के और करीब खिसक गये और संकोच से उसकी ड्रेस थपथपायी. रूडोल्फ ने निवेदन-सा करते हुए द्रवित स्वर में कहा—मां. . .हम लोगों को बताओ.

—हम लोगों को उसके बारे में बताओ, फ्रांज बोला.

घनी भौहों वाले मैक्सीमिलियन ने धीरे-से अपना सिर हिलाया. औरत ने उनकी ओर देखा. फिर दूर कहीं देखती रही और धीरे-धीरे उसकी आंखों में कोमल प्रकाश आ गया. कातर, एक स्वप्निल स्वर में वह बोलने लगी और तीनों संगीतकार सांस रोके, लालायित श्रद्धानत गहरे भावावेश में सुनने लगे. □□□

(अनुवाद : चंद्रकिरण राठी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीपा का पुल

• आइवो एंड्रिच

अपनी वजारत के चौथे साल बड़े वजीर यूसुफ की हालत डांवाडोल हो गयी और एक खतरनाक षड्‌यन्त्र का शिकार होकर वह सुल्तान की नजरों से गिर गया. इसी परेशानी में सारा जाड़ा बीत गया और वसंत भी जाता रहा. (वह वसंत भी कितना कठोर और ठंडा था, जो ग्रीष्म की चमक का रास्ता रोके किसी जिद्दी की तरह अड़ा था.) मई के महीने में कहीं जाकर यूसुफ अपनी कैद से बेदाग बाहर आया और जिंदगी फिर अपनी रफ्तार पर आ गयी. वैसी ही शांत और रंगारंग—जैसे कुछ बदला ही नहीं. लेकिन ठंड के दिनों में जिंदगी और मौत, प्रसिद्धि और विनाश के बीच फासला कितना कम था! क्या ऐसा कोई फासला था भी? उन दिनों ने विजयी यूसुफ में अतृप्ति और असंतोष की एक छाप छोड़ दी थी.

कैद के दिनों की जिल्लत में अकेले रहते-रहते वजीर अपने पिछले दिनों को याद करता रहा, अपनी शुरुआत के दिन उसे याद आते रहे, और अपने शहर की याद में वह डूबा रहता. हताशा की स्थिति में पड़कर मन बार-बार पीछे लौट जाता है. उसे अपने माता-पिता की याद आयी. (दोनो की मौत बहुत पहले हो चुकी थी, जब वह सुल्तान के दरोगा-घुड़साल का सहायक ही था. उनकी कब्रों पर उसने सफेद पत्थर लगवा दिये थे.) बोस्निया में बसे, उसे अपने गांव जीपा की याद आयी, जहां से सिर्फ नौ साल की उम्र से ही वह बाहर आ गया था.

तकलीफ के दिनों में दूर-दराज में बसे अपने गांव जीपा की याद कितनी सुखद थी, जहां घर-घर में उसके नाम की चर्चा होती, और कुस्तुनतुनिया में उसकी सफलता की कहानियां कही जातीं. वहां किसी को भी उसके जीवन का यह अंधेरा मालूम न था और न इस सफलता की कीमत ही मालूम थी.

उसी गर्मी में उसे बोस्निया से आनेवालों से बात करने का मौका मिला. तरह-तरह के प्रश्न वह उनसे पूछता रहा, और वे बताते रहे— वहां जीवन कैसा है, युद्ध और विद्रोह के बाद वहां अकाल, अव्यवस्था, भूख और महामारियां कैसे फैलती रहीं. वहां के लोगों को हर तरह की सहायता का आदेश उसने दिया, जीपा में रहने वाले हर तरह के लोगों को. और इसी के साथ उसने यह जांच भी करवाई कि सार्वजनिक निर्माण के लिए वहां की सबसे बड़ी आवश्यकता क्या है. उसे मालूम हुआ, गांव के चार घराने अब भी बड़े संपन्न थे, लेकिन शेष सारा गांव और आसपास का पूरा इलाका अब कंगाल हो चुका था. सबसे बुरी बात तो यह थी जीपा पर अब तक कोई पुल नहीं था. जीपा और ड्रीना के संगम के पास एक पहाड़ी पर यह गांव था और विजीग्राद जानेवाली सड़क ऊपर की तरफ सिर्फ पचास कदम पर जीपा से होकर जाती थी. लकड़ी के जितने भी पुल बनाये जाते, वे पानी में बह जाते. सारी पहाड़ी नदियों की तरह कभी तो जीपा में बाढ़ आ जाती और वह पुल डूब जाता, या कभी ड्रीना की बाढ़ से जीपा का पानी भी चढ़ जाता, और लकड़ी के पुल का नाम-निशान भी नहीं रह जाता. ठंड के दिनों में चिकनी, फिसलन-भरी बर्फ से लकड़ी का पुल ढंक जाता और आदमियों तथा जानवरों को भी जान का खतरा हो जाता. ऐसे में यदि कोई वहां एक पुल बनवा देता, तो वहां के लोगों की यही सबसे बड़ी सेवा होती.

वजीर ने मस्जिद के लिए छह दरियां दिलवाईं. जीपा पर एक पुल बनवाने का फैसला भी उसने उसी समय कर लिया.

उन दिनों कुस्तुनतुनिया में एक इतालवी इंजीनियर रहता था. आस-पास के इलाकों में उसने कई पुल बनाये थे और इस काम में उसे अच्छी शोहरत हासिल थी. वजीर के खजांची ने उसे इस पुल के लिए काम पर लगा लिया और वजीर के दो आदमियों के साथ उसे बोस्निया भेज दिया.

विजीग्राद में जब वे पहुंचे, तो बर्फ अभी भी जमी थी. कई दिनों तक तो शहर के लोग इस झुके हुए, पके बाल लेकिन लाल जवान चेहरे वाले इंजीनियर को पत्थर के पुल के आस-पास टहलते बड़े अचरज से देखा करते. दो पत्थरों के जोड़ से वह गारे का चूना निकालता, उंगलियों से उसे चूरा करता और जीभ में लगा-लगा कर उसका स्वाद लेता. फिर पुल के मेहराब की लंबाई अपने कदमों से नापता. कुछ दिनों तक वह बाजा में पत्थर की खानों को जा-जाकर देखता रहा. पुल के पत्थर वहीं से लाये गये थे. मजदूरों को भी साथ लेकर वह वहां गया और खानों को साफ करवाया. ढेर सारी मिट्टी वहां जम गयी थी और चीड़ वगैरह के छोटे-छोटे झाड़ उग आये थे. जब तक पत्थर की अच्छी मोटी, चौरस पर्त उन्हें नहीं मिल गयी, वे तब तक खोदते ही गये. विजीग्राद के पुल में लगे पत्थरों से यह पर्त कहीं ज्यादा सफेद और ठोस थी. फिर वह ड्रीना के किनारे-किनारे जीपा तक चला गया और वह स्थान उसने बताया, जहां से पत्थर की ढुलाई करनी थी. वजीर के दो आदमियों में से एक अब पुल की सारी योजना और खर्चे का हिसाब लेकर कुस्तुनतुनिया चला गया.

इंजीनियर वहीं रहकर प्रतीक्षा करता रहा. लेकिन वह न तो विजीग्राद में रहना चाहता था और न जीपा के ही किसी मकान में. ड्रीना और जीपा के संगम के पास एक पठार-सा था. उसने वहीं लकड़ी का एक झोपड़ा डाल लिया और रहने लगा. अपना सारा समय वह नक्शे बनाने और पत्थरों को काटने-तराशने में बिता देता. तरह-तरह के पत्थरों की परख करता रहता, या फिर जीपा का पाट देखा करता.

कुस्तुनतुनिया जाने वाला वह आदमी भी एक दिन आ गया और पुल के लिए आवश्यक धनराशि का एक-तिहाई भी लेता आया.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

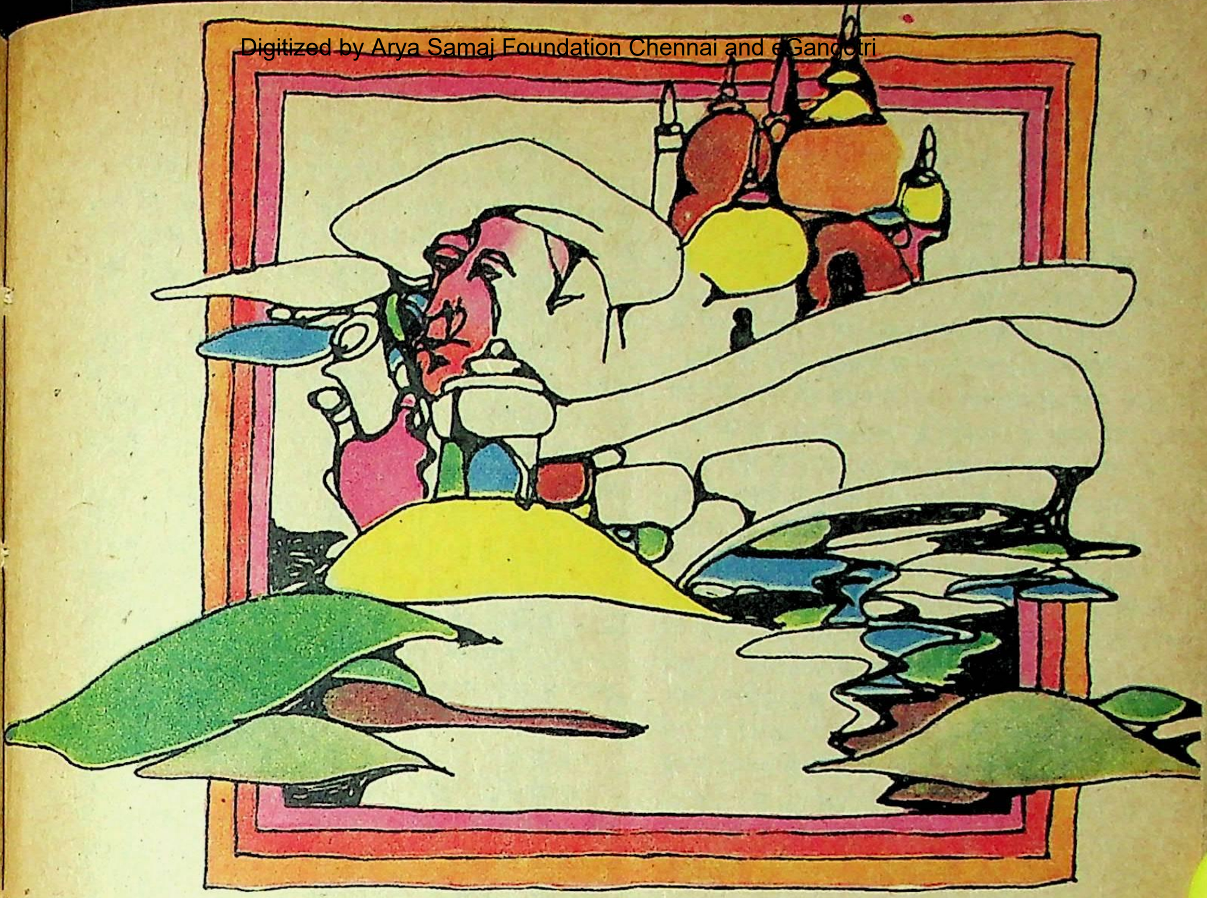

जब काम शुरू हो गया, तो लोग मुंह फाड़े, खड़े-खड़े देखते रहे -- यह क्या हो रहा है? कोई पुल जैसा तो मालूम होता नहीं. पहले तो चीड़ के मोटे-मोटे कुंदे जीपा के पाट में धार से कुछ तिरछे बिछा दिये गये और उनके बीच दो कतार में खूंटे लगाये गये. घनी झाड़ी से उन्हें अच्छी तरह बांध दिया गया और दोनों कतारों के बीच किसी खंदक की तरह मिट्टी भर दी गयी. इस तरह नदी की धारा को मोड़ दिया गया और उसका आधा पाट सूख गया. यह काम पूरा हुआ ही था, कि एक दिन पहाड़ों पर आसमान टूट पड़ा. जीपा में अचानक बाढ़ आ गयी. पहली ही रात जीपा का यह नया बांध जाता रहा. सबेरा होते-होते वहां का पानी तो उतर गया, लेकिन बांध जगह-जगह से टूट गया. खूंटे उखड़ कर बह गये और मोटे-मोटे कुंदे भी टेढ़े हो गये. किसानों-मजदूरों में अफवाह गर्म थी कि जीपा अपने ऊपर कोई पुल बनने नहीं देगी. लेकिन तीसरे ही दिन इंजीनियर ने पहले से ज्यादा गहराई पर नये खूंटे लगाने को कहा और बचे हुए कुंदों को सीधा करके एक लाइन में करवाया. फिर बहुत नीचे, गहराई में, मजदूरों का शोर होने लगा और एक खास लय में घन चलाने की आवाज आने लगी.

★

तना सब हो जाने के बाद हर्जेगाविना से पत्थर काटने वाले और डलमैशिया से मिस्त्री आ गये. बाजा की खान से पत्थरों की ढुलाई भी शुरू हो गयी. पत्थर काटने वालों के झोपड़े भी खड़े हो गये. इनके सामने वे पत्थर काटते रहते और इंजीनियर उनके बीच टहलता रहता. उसके एक हाथ में पत्थरों की नाप के लिए पीले रंग का एक स्क्वेयर हुआ करता और दूसरे हाथ में हरे रंग की डोरी से सीसे का लंगर लटकता रहता. दोनो चट्टानी किनारों को काटने का काम खत्म होते-होते लाई हुई रकम भी खत्म हो गयी. सारे मजदूरों में बेचैनी फैल गयी. वहां के लोग भी यही कहने लगे—बस, अब बन चुका पुल! कुस्तुनतुनिया से आने वाले यही कहते, वजीर अब बिल्कुल बदल गया है. कोई नहीं जानता, उसे कोई बीमारी हो गयी, या किसी परेशानी ने उसे आ घेरा है. दिन-ब-दिन उससे मिलना दूभर होता गया. खास कुस्तुनतुनिया में शुरू किये गये कामों को भी भूलकर उसने हाथ खींच लिया. लेकिन कुछ दिनों बाद वजीर ने एक आदमी के हाथ शेष रकम भेज दी. और पुल का काम फिर शुरू हो गया.

सेंट डेमेट्रियस डे से एक दिन पहले लकड़ी के पुल से जीपा पार करते हुए लोगों ने देखा, गहरे-भूरे रंग के दोनो किनारों पर तराशे हुए सफेद पत्थरों की एक चिकनी दीवाल-सी उठ रही है. उसके चारों ओर लकड़ी के सांचे लगे हुए हैं. दिन-ब-दिन यह दीवाल बढ़ती जाती थी. और तभी उस मौसम का पहला पाला पड़ा. काम बंद हो गया. सारे मजदूर जाड़े में घर चले गये. लेकिन इंजीनियर ने वहीं लकड़ी के झोपड़े में सारा जाड़ा बिता दिया.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारा समय वह झुके-झुके नक्शे देखा करता और हिसाब लगाया करता लेकिन अधूरे बने पुल तक वह प्रायः जाया करता. वसंत के साथ जब बर्फ का पिघलना शुरू हुआ, तो जब देखो, वह पुल के सांचे के पास बहुत परेशान हाल टहलता ही नजर आता.

सेंट जार्ज डे के पहले सभी कारीगर अपने घरों से वापस आ गये और काम फिर चल पड़ा. गर्मी के बीचों-बीच काम पूरा भी हो गया. पुल के सांचे को खोलते समय मजदूर बहुत खुश थे. लकड़ी के आड़े-तिरछे तख्तों और खूंदों की जगह अब एक साफ, सफेद, छरहरा पुल नजर आया. दोनों चट्टानों के बीच सिर्फ एक ही मेहराब था.

इस वीरान, उजाड़ इलाके में एक इतने सुंदर पुल की कल्पना भी कठिन थी. लगता था, जैसे इस किनारे से उस किनारे तक झाग के फव्वारे उठ आये हों, और दोनों फव्वारों ने आपस में मिल कर एक मेहराब बना दिया हो और क्षण भर के लिए उसी हालत में ठिठके-से रह गये हों. पुल के पीछे, मेहराब से होकर ड्रीना का नील-विस्तार था और आगे, काफी नीचे, फेनिल जीपा. आंखों को इस सुंदर, मेहराबदार पुल का अभ्यस्त होने में काफी समय लग गया. मेहराब क्या था– मालूम होता था, उड़ान भरते वक्त किसी ने उसे क्षण भर के लिए पकड़ लिया हो और फिर से उड़ जाने के पहले हरी-नीली पहाड़ियों पर उसे कैद कर रखा हो.

अब तो आस-पास के गांवों से लोगों का हुजूम पुल को देखने के लिए आने लगा. विजीग्राद और रोजेतिका जैसे शहरों के लोग भी आते, और पुल की तारीफ किया करते.

अपने यहां से कोई वजीर पैदा करना ऐसा कुछ आसान तो नहीं है, जीपा के लोग पुल की दीवाल पर हाथ फेरते जवाब में कहते. दीवाल ऐसी साफ और चिकनी थी, जैसे पत्थरों को काटकर नहीं, पनीर से बनी हो.

पहले-पहले दर्शकों का रेला जब पुल के पास आकर विस्मय से खड़ा देखता रहा, तभी इंजीनियर सारे मजदूरों का चुकारा कर के सभी कागजात और औजारों के साथ वजीर के आदमियों को लेकर कुस्तुनतुनिया के लिए चल पड़ा.

उसके चले जाने पर वहां के लोग तरह-तरह से उसकी चर्चाएं करने लगे. सालेम एक घुमंतू कामगार था. अपने घोड़े पर लादकर वह इंजीनियर के लिए विजीग्राद से जरूरी सामान लाया करता और इंजीनियर के झोपड़े में जाने वाला तो अकेला वही था.

––सच, औरों की तरह वह नहीं है. जाड़े में दस-पंद्रह दिनों तक जब काम बंद हो जाता, तो मेरी मुलाकात तो उससे न होती, लेकिन जब भी मैं वापस आता, उसकी सभी चीजें वैसी ही अस्त-व्यस्त पड़ी रहतीं, ठीक उसी तरह, जैसी मैं उन्हें छोड़कर गया होता. लड़की के ठंडे झोपड़े में वह चमड़े की बंदर टोपी में कंधे तक ढका बैठा रहता था. ठंड से सिकुड़े-सिमटे, नीले पड़े हाथों में हरकत होती रहती. वह पत्थर काटता रहता, और झुककर कुछ-कुछ नोट किया करता. मैंने जब भी देखा, उसे यही करता पाया. और भाई, डेढ़ साल तक उसने जैसी मेहनत की, उसका अंदाज करना भी मुश्किल है. और काम खत्म होते ही वह कुस्तुनतुनिया के लिए चल पड़ा. हम लोग जब नाव पर उसे उस पार छोड़ने गये, तो घोड़े पर सवार होकर वह जो चला, तो उसने लौट कर न तो एक बार हमारी ओर देखा और न पुल की ओर ही.

गांववाले इंजीनियर के बारे में एक-एक बात पूछा करते और उसकी एक-एक बात सुनकर अचरज में डूब जाते. उन्हें अफसोस इस बात का होता कि विजीग्राद की सड़कों पर जब वह चला करता, तो उन्होंने उसे ज्यादा गौर से क्यों नहीं देखा.

इस बीच इंजीनियर अपनी यात्रा पर ही था और कुस्तुनतुनिया से दो पड़ाव पहले उसे प्लेग हो गया. बुखार की हालत में जब वह वहां पहुंचा, तो घोड़े पर बैठे रहना भी उसके लिए दूभर हो रहा था. वहां सबसे पहले वह इतालवी मिशन के एक अस्पताल में पहुंचा और दूसरे दिन ठीक उसी समय एक इसाई साधु की बांहों में उसने दम तोड़ दिया.

* *

दूसरे दिन सुबह तक वजीर को इंजीनियर की मृत्यु का समाचार मालूम हो गया. पुल के नक्शों के साथ शेष भुगतान के बिल वजीर के सामने पेश किये गये. इंजीनियर को अपने वेतन का सिर्फ एक तिहाई ही मिला था. उसने न तो कोई वसीयत ही की थी और न कोई उसका वारिस ही था. कुछ देर तो वजीर सोचता रहा. काफी-कुछ सोच कर उसने इंजीनियर के शेष वेतन का एक तिहाई उस अस्पताल को देने तथा बाकी दो तिहाई से गरीबों को खिलाने-पिलाने का आदेश दे दिया.

ढलती गर्मी की एक सुबह जब वह ऐसा आदेश दे ही रहा था, तो कुस्तुनतुनिया के एक नौजवान मुल्ला की एक दरख्वास्त वजीर के सामने आयी. उसने दरख्वास्त की थी कि उसने सुना है, वजीर ने बोस्निया में एक पुल बनाया है. उसकी मंशा थी कि उस पुल पर कुछ लिखा दिया जाय, जैसा कि प्रायः हुआ करता है. लोगों को यह मालूम तो हो कि इसे किसने बनवाया और कब बनवाया. हर बार की तरह वजीर की खिदमत में वह फिर हाजिर है. अपनी दरख्वास्त के साथ उसने पुल पर लिखा जाने वाला मजमून भी नत्थी कर रखा था. उसने बड़े परिश्रम से उसे तैयार किया था और वजीर से उसे स्वीकार करने की प्रार्थना की थी. एक अच्छे, खास किस्म के कागज पर लाल-सुनहले अक्षरों में कुछ-कुछ ऐसे भाव की पांच पंक्तियां थीं––

'उत्तम शासन और शालीन योग्यता ने आसपास में जब हाथ मिलाये, तो इस सुंदर पुल का जन्म हुआ. इस लोक में, और परलोक में भी, यह पुल लोगों को खुशियां लायेगा. यह यूसुफ का गौरव है.'

मजमून के नीचे एक अंडाकार सील थी, जिसके बड़े हिस्से में लिखा था––"युसुफ इब्राहीम : खुदा का असली बंदा." और सील के छोटे हिस्से में वजीर का आदर्श वाक्य था––"मौन में ही सुरक्षा है."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वजीर बहुत देर तक दरख्वास्त को लिये बैठा रहा. उसका एक हाथ कविता की इन पंक्तियों पर था और दूसरा इंजीनियर के बकाया वेतन वाले बिल और पुल के नक्शों पर. काफी देर तक वह इस दरख्वास्त और दूसरे कागजात पर सोचता रहा.

इस गर्मी में वजीर की बदहाली और कैद को दो साल हो गये थे. हुकूमत में अपनी वापसी के बाद शुरू-शुरू में वजीर को अपने-आप में ऐसी कोई बदलाहट नजर नहीं आयी. वह अपनी अपनी सबसे बढ़िया उमर में था, जब आदमी अपनी जिंदगी की पूरी अहमियत महसूस करता है. अपने सारे दुश्मनों को उसने मात दे दी थी और अब वह पहले से कहीं ज्यादा ताकतवर हो गया था. अभी हाल की बदहाली में गहरी खाइयों का अंधेरा, और अब हुकूमत की ये ऊंचाइयां—सब कुछ उसके सामने एकदम साफ था. लेकिन वक्त की रफ्तार के साथ उसे अपनी कैद के दिन भूलने के बजाय और-और याद आते. वही ख्याल हमेशा उसका पीछा करते. और जब-कभी ऐसे ख्यालों को जबरन दबाने में वह कामयाब हो भी जाता, लेकिन रात के सपनों का क्या करता?

अपने आसपास की चीजों को लेकर वजीर साहब अब बहुत देर-देर तक सोचा करता. जिन छोटी-छोटी बातों की तरफ उसने पहले कभी गौर भी नहीं किया था, अब वही उसे बात-बात में चिड़चिड़ा बना देतीं. उसने हुक्म दे दिया, उसके महल की सभी मखमली चीजों को बदलकर चिकना-चमकीला और मुलायम सूती कपड़ा लगा दिया जाय, जिससे हाथों की छुवन से उनमें कोई सरसराहट न हो. पर उसके कमरे से ऐसे सारे फर्नीचर और हथियार हटा दिये गये जिनमें सीपियों का काम था.

अब तो हर बात में उसे गोपनीयता और गहरे अविश्वास की जरूरत महसूस होने लगी. एक बात यह उसके दिमाग में जाने कैसे बहुत गहरे बैठ गयी कि आदमी का हर काम उसका एक-एक शब्द, उसे मुसीबत में डाल सकता है. और जो कुछ वह देखता, सुनता, कहता या सोचता, उन सबसे यह आशंका जुड़ जाती. विजयी वजीर को अब जीवन का भय व्यापने लगा था. और इस तरह अनजाने ही वह मृत्यु के उस चरण में आ पहुंचा, जहां मनुष्य को ठेठ वस्तुएं नहीं, उनकी छायाएं घेरती हैं. अनिष्ट की आशंका उसे धीरे-धीरे कुतरती गयी और वह अंदर ही अंदर टूटता रहा. अपने मन की बात वह किससे कहता? और अंदर ही अंदर उसकी टूट जब पूरी हो गयी, तो उसकी हर बात से यह जाहिर भी होने लगा. लेकिन कोई उसे समझाता भी कैसे? लोग यही कहते—मौत, सिर्फ मौत!

* *

आज सुबह से वजीर फिर बहुत बेहाल था. रात भर उसे नींद नहीं आयी. लेकिन मस्तिष्क बहुत शांत और संतुलित था. आंखों की पलकें बहुत भारी थीं. सुबह की ताजगी में उसका चेहरा बर्फ की तरह ठंडा था. उसे उस विदेशी इंजीनियर का ख्याल आता रहा, जो अभी-अभी चल बसा था. वजीर को उन गरीबों का भी ख्याल आया जिन्हें इंजीनियर की बकाया रकम से खाना मिलेगा. उसे बोस्निया के दूर, उदास पहाड़ी इलाके याद आये. (बोस्निया का ख्याल उसे हमेशा ही उदासी से भर जाता!) इस्लाम की रोशनी भी वहां का अंधेरा दूर नहीं कर पायी थीं. वहां जीवन कितना कृपण और कठोर था, तकलीफों में घिसटता यों ही बीत जाता. ऊंचे ख्यालों से उसका कभी कोई वास्ता नहीं होता. और अल्लाह की दुनियां में ऐसे कितने इलाके थे? कितनी दुनियांएं थीं जिन पर कोई पुल न था? कितनी जगहों में पीने का पानी न था?

उसकी आंखों के सामने तरह-तरह की जरूरतों और तकलीफों और भय का एक पूरा संसार आ गया.

वजीर के ग्रीष्म-निवास की छोटी-छोटी हरी खपरैलें धूप में चमक रही थीं. वजीर ने मुल्ला के मजमून को देखा, आहिस्ते से अपना हाथ उठाया, और पूरे मजमून को दो बार काट दिया. एक क्षण के लिए वह रुका, फिर सील के जिस हिस्से में उसका नाम था, उसे भी काट दिया. सिर्फ वह वाक्य ही अब रह गया—'मौन में ही सुरक्षा है.' एक क्षण के लिए वह फिर रुका, सिर्फ वह वाक्य उसके सामने था. उसने फिर अपना हाथ उठाया और कलम को जोर से दबाते हुए उसने वह आदर्श वाक्य भी काट दिया.

इस तरह वह पुल बिना किसी नाम के ही रहा आया. उसमें नाम का कोई पत्थर वगैरह कभी नहीं लगा.

दूर, बोस्निया की धूप में वह पुल चमकता रहता और चांद की रोशनी में जगमगाया करता, आदमियों और जानवरों को एक किनारे से दूसरे किनारे तक पहुंचाया करता. किसी भी नये निर्माण के आसपास मिट्टी-मलबे का जो ढेर हुआ करता है, वह भी धीरे-धीरे बराबर होता गया. सांचे की लकड़ियां और बल्लियां कुछ तो लोग उठा ले गये, और कुछ नदी की बाढ़ में बह गयी. पत्थर काटने की जगह के नाम-निशान बरसात में जाते रहे. लेकिन उस इलाके से न तो पुल का कोई मेल बैठ पाया, और न पुल से उस इलाके का ही. दूसरे किनारे से देखने पर पुल का सफेद, बुलंद मेहराब हमेशा अकेला, टटका-सा मालूम होता, और हर आने वाले को किसी एकदम नये ख्याल की तरह अचरज में डाल देता.

यह कहानी बताने वाला पहला आदमी था जिसे यह पता लगाने की इच्छा हुई कि यह पुल यहां बना, तो कैसे बना! यह एक शाम की बात थी. थका-हारा वह पहाड़ों से वापस आया और पुल की दीवाल से टिककर बैठ गया. गर्मी के दिन थे. दिन के समय बेहद गर्मी होती, और रातें ठंडी हुआ करतीं. पुल के पत्थर से जब उसने अपनी पीठ टिकायी, तो दिन की गर्मी से वह अब भी बहुत गर्म था. पसीने से उसका सारा बदन चिपचिपा रहा था. बगल में बहती ड्रीना से ठंडी हवा का एक झोंका जो आया, तो ऐसे में उसे पुल के गर्म पत्थर का स्पर्श बड़ा सुखद मालूम हुआ. दोनों को एक दूसरे की बात समझते देर न लगी. और तभी उसने निश्चय किया, वह इस पुल की कहानी लिखेगा. □□□

(अनुवाद : अशोक कुमार झा)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैरक नंबर पांच

• मीरोस्लाव कृलेझा

प्रभु-सत्ता सपन्न माल्टा-संघ के सर्वोच्च सेनापति काउंट मावसीमिलियन एक्सिलरोड को उसके चौदहवें वर्ष में ही बड़े-बड़े समारोह के साथ संत जान के शिवेलियर द जस्टिस की उपाधि (चांदी के क्रास सहित) मिल गयी थी. उच्च माल्टा-संघ के उच्च पदाधिकारी के योग्य होने के लिए सोलह कुलीन और शूरवीर पूर्वजों का वंशज होना आवश्यक था; उसके स्थान पर काउंट मावसीमिलियन एक्सिलरोड ने अपने पिताश्री और उच्च कुलीन राजकुमारी अपनी मातुश्री के पूर्वजों में अट्ठाईस परों के टोप और हैल्मेट गिनाये थे, जिनके नीचे नीलाम रक्त प्रवाहित हुआ था; जब माल्टा-संघ के बड़े महंत ने स्वर्णिम मुहरों से युक्त ये बहुमूल्य दस्तावेज मंत्रालय को उच्च और सबसे महत्वपूर्ण "अनुमति" के लिए भेजे, तो यह एक बड़ी घटना थी जैसी कि इस भूगोल पर कभी-कभार ही घटा करती है.

काउंट मावसीमिलियन एक्सिलरोड का जीवन पर्यंत केवल एक ही ध्येय था, कि अपनी उच्च माल्टा-सेना के लिए—धर्म के लिए—नंगी तलवार खींच ले, अपने भारी सिलवटों वाले काले लबादे को ओढ़ ले और दुस्साहसी मस्तकों को मृत्यु के मुख में धकेल दे. जैसे कि जब वह पहली बार येरूशलम गया तो सांता मारिया लातीना के संगमरमर पर दुखी हो कर बहुत रोया कि उसे यह सौभाग्य प्रदान नहीं किया गया कि यहां, आठ सौ वर्ष पहले, महान गौटफ्रीड बुयौन्स्की के साथ अपनी कुलीन अस्थियां विसर्जित कर पाता, यदि वह नहीं तो फिर कम-से कम यह कि लगभग तीन सौ वर्ष बाद जन्म लेता जब कि रोदोस और माल्टा पर तोपें गरजी थीं. लेकिन नहीं! वह इस गोले पर ऐसे कायर और मूर्ख काल में गिरा, जब कि कुलीन वियर द लि'ल—आदाम एक प्रकार से समाजवादी आंदोलन-कर्त्ता बन गये हैं और पहली मई को गरीब लोगों को विद्रोह के लिए उकसाते हैं, और जब कि सैनिक-अभ्यास सबसे बड़ी घटना होती है, जिसमें अंधेरे में गोली दागते हैं, और वह भी डरते-डरते, क्योंकि कोई वित्त मंत्री या कोई 'मूर्ख' संसद चीखती रहती है कि शस्त्रास्त्र पर बहुत व्यय होता है. थू भाप के इंजनों का यह जड़मति काल, जिसमें सब कुछ पटरियों से और तथा-कथित सामाजिक, अर्थात् समाजवादी जनतंत्रता से बंधा हुआ है, और जिसमें माल्टा-सेना के कुलीन वीर नागरिक-टोप लगाये होटलों में बैठते हैं, और जब द्वंद्वयुद्धों पर वैधानिक प्रतिबंध है.

काउंट माक्सीमिलियन एक्सिलरोड पूरे तिरेसठ वर्ष तक यों ही व्यर्थ दुखी होता रहा, तब एक दिन सो कर उठा तो मानो स्वप्न देख रहा हो: नौकर ने उच्च संघ के महंत का संदेश ला कर दिया कि लामबंदी की घोषणा कर दी गयी है, और प्रभु-सत्ता संपन्न माल्टा-संघ, अपनी उच्च परंपरा के अनुसार, महान नारे "धर्म के लिए" के नाम पर झंडा उठायेगा और कहीं विदेश में जा कर सम्राट की सेना की पिछली पंक्तियों मे डेरे लगायेगा और चिकित्सा सेवा का संगठन करेगा. इस प्रकार काउंट माक्सीमिलियन एक्सिलरोड महान माल्टा-चिकित्सालय का संचालक बन गया. अस्पताल बयालीस बड़ी-बड़ी लकड़ी की बैरकों का बना था, अपना विजलीघर, रेड क्रास की परिचारिकाएं समूची कंपनी इत्यादि, इत्यादि. सेनाएं पूर्व में सौ किलोमीटर दूर मर रही थीं, फिर पश्चिम में आ गयीं दो सौ किलोमीटर की दूरी पर, बाद में फिर पूर्व, लड़ाई के मौसम के अनुसार; यह थी लड़ाई, और काउंट एक्सिलरोड अपने माल्टा-सर्कस को ले कर पूरे दो साल पूर्व से पश्चिम तक, स्तानिस्लावोव से क्राकोव तक, फिर उल्टा पूर्व तक, घूमता रहा; और अब उन्नीस सौ सोलह की अगस्त है, सूरज की गरमी बयालीस डिग्री सेंटीग्रेड है, और स्थिति चिंताजनक और गंभीर है.

अस्पताल भरा है डेढ़ हजार बीमार खोपड़ियों से और हालात ऐसे नजर आते हैं कि रूस दायें और बायें रेल की लाइन काट देगा, और श्रीमान् काउंट, माल्टा के महान शिल्पी, दो सप्ताह बाद मास्को में होंगे. दोपहर के लगभग संदेश आया कि रूस ने वास्तव में उत्तर में दो स्टेशनों के बीच लाइन उड़ा दी है, लेकिन अस्पताल अभी वहीं रहे क्योंकि प्रत्याक्रमण की तैयारी हो रही है. रूस ने उत्तर में लाइन काट दी है, उसका मतलब हुआ कि उस लाइन का सारा परिवहन दक्षिण को जाने लगा है, फलस्वरूप टक्कर स्वाभाविक ही है (बहत्तर मृत और कितने ही घायल), साथ ही यह भी स्वाभाविक ही है कि सभी गाड़ियां बिना खान-पान के सामान के रह गयीं, सो घायल लोग पांच दिन से पानी के लिए चिल्ला रहे थे और उन्हें खाने के लिए (ओह, हंसिये मत, ये सच है!) पेट के कीड़ों से बचाने वाली मीठी गोलियां दी जा रही थीं और उस लाइन के सभी स्टेशनों पर मार-काट हुई, और काउंट एक्सिलरोड को अपने पहले से ही भरे अस्पताल में पांच सौ मरीज और लेने पड़े. वह दिन उस गर्मी का सबसे गरम दिन था; सूरज ने औपचारिक रूप से अपनी आग से धरती को सेक-सेक कर भुरभुरा बना दिया था. ऐसा लगता था मानो किसीने सफेद, लकड़ी के बैरक पर जलता हुआ भट्टी का पत्थर फेंक दिया था और सब ओर आग लग गयी थी.

* *

पांच सौ नये घायलों में, जिन्हें काउंट एक्सिलरोड को अपना अस्पताल भरा होने पर भी लेना पड़ा था, एक विद्यार्थी वीदोविच भी था, उसके फेफड़ों में गोलियां लगी थीं सो खून बह रहा था. सत्य ही है कि मनुष्य कहीं भी इतना लथपथ नहीं होता जितना युद्धस्थल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर, लेकिन जब वींदोविच को, अगस्त मास में जानवरों के डिब्बे में भर कर लाये गये गंदे मरीजों की भांति, बड़े भाप के स्नानघर में ले गये, जो इतना गंदा था, तो उसका जी और भी खराब हुआ होगा.

कंक्रीट के उस कुंड में बदबूदार पीला पानी शोर मचा रहा था, भूरे रंग का साबुन झाग दे रहा था और खून में रंगी पट्टियां और रूई के फाहे तैर रहे थे. मवाद के फाहे. पानी में भाप उठ रही थी, और कीचड़ और मिट्टी की बदबू आ रही थी; फव्वारों में से भाप बरस रही थी, और गाढ़ी भाप में काली छायाएं के दिमाग चकरा रहे थे.

कीचड़ और खून के उस नर्क में नहला कर बैरक पांच-ब में ले गये जो किसी सामान ढोने वाली नाव के पेट-सी लग रही थी. निर्दयी प्रोटैस्टैंट दृष्टिकोण से नापतोल कर वहां बासठ बिस्तर लगाये गये थे, हरेक पर एक शरीर, और हर शरीर के ऊपर एक बोर्ड जिससे पता लग सके कि उस शरीर की क्या हालत है. नाव के पेट को तीन भागों में बांटा हुआ है. पहले में टूटी हुई हड्डियां खपच्चियों-सी बाहर निकली हुई. लोग दिन में चुपचाप पड़े रहते, केवल रात को सुनाई पड़ता उनका

दिखाई दे रही थीं जो धुंध में इधर-उधर भाग रही थीं, और सभी चेहरे सूजे हुए और खून से लथपथ; कहीं पर डायनामाइट की धमक; अगस्त की दोपहर. शावर के नीचे कांच की मेज पर एक आदमी मरणासन्न था, वहां दूसरा चीख रहा था; अदृश्य कीड़ों की भांति भनभनाते पंखे. और खाकी रूमाल बांध रूसी बोरों की भांति नये घायल पदार्थ ला रहे थे, और परिचारिकाएं और घायल और डाक्टर, सभी चिल्ला रहे थे., सभी इधर-उधर भाग रहे थे, सभी दारुण विलाप. दूसरा भाग अंग-भंग के लिए. (हाथ या पर, या हाथ और घावों को बांधा नहीं जाता बल्कि वे जालीदार कपड़े के नीचे सूखते रहते हैं, सुखाने के लिए रखे गये मांस की भांति.) तीसरा ग्रुप, बांये प्रवेश द्वार तक, "रंगरूटों" का. यह नयी भर्ती केवल पांच-ब से आगे जाने के लिए की जाती है. वह "रंगरूट" स्नानघर से मृत्युशाला को जाता है. और जब किसी को तीसरे ग्रुप में रखा जाता है तो सारी बैरक पांच-ब जान जाती है कि मामला क्या है, मृत्यु का नया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथा-साहित्य के प्रेमियों के लिए
राजकमल की अपूर्व भेंट

हिन्दी के अद्वितीय कथाकार
भगवतीचरण वर्मा की
कहानी-कला का अपूर्व निदर्शन

मोर्चाबन्दी

भगवतीचरण वर्मा

ये कहानियाँ आपको सात्विक मनोरंजन में, हँसते हुए सोचने में और जीवन के उलझाव में निहित नयी चेतना ढूंढ़ने में आपकी मदद करेंगी।

मूल्य [सजिल्द संस्करण] : रु० २०/-

भगवती बाबू की महत्त्वपूर्ण कृतियों के पेपरबैक संस्करण

सबहिं नचावत राम गोसाईं	~~२०.००~~	१५.००
रेखा	~~२५.००~~	१५.००
सामर्थ्य और सीमा	~~१०.००~~	७.५०
वह फिर नहीं आयी	~~६.५०~~	४.००

हिन्दी की नयी पीढ़ी के बहुचर्चित हस्ताक्षर
महेन्द्र भल्ला की सशक्त लेखनी से
रंग-भेद के जलते हुए सवाल पर
हिन्दी का पहला उपन्यास

दूसरी तरफ़

महेन्द्र भल्ला

इनसान से इनसान की संज्ञा छीनकर उसे 'रंगीन' के खाने में बैठा देने की जिस क्रूर मनोवृत्ति से **महेन्द्र भल्ला** इंगलैण्ड में निरन्तर चार साल तक जूझते रहे, उसका निस्संग चित्रण करनेवाला अत्यन्त मर्मस्पर्शी उपन्यास!

मूल्य [सजिल्द संस्करण] : रु० २५/-

उर्दू के महान उपन्यासकार **मिर्जा हादी रुस्वा** का लखनऊ की एक वेश्या के जीवन पर आधारित प्रख्यात उपन्यास

उमराव जान 'अदा'

साथ में बिलकुल **मुफ्त!**

३१ दिसम्बर १९७५ तक मोर्चाबन्दी का अथवा भगवती बाबू की उपरोक्त पेपरबैक पुस्तकों में से किन्हीं तीन पुस्तकों का अथवा दूसरी तरफ का आदेश भेजने वाले पाठकों को उमराव जान 'अदा' का सुमुद्रित संस्करण उपहारस्वरूप!

आज ही आदेश भेजकर अपना उपहार सुरक्षित करायें

राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०
८ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-११०००६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उम्मीदवार, रंगरूट!

जब घायल वीदोविच को बैरक में ला कर नं. आठ पर लिटाया गया, तो ग्रुप नं. एक (टूटी हड्डी) के एक लंबे-तड़ंगे हंगेरी ने तिरस्कार की भावना से थूका और उंगलियों से हवा में क्रॉस बनाया :

—नो हात, इस्तैनैम (फिर वही, हे भगवान) इसे सीधा ही मृत्युशाला ले जा सकते थे.

—नया नं. आठ आया है, बेटो !

—नं. आठ! नं. आठ!

आवाज सारी बैरक में फैल गयी और बहुत से सिर उठ आये उस नये नं. आठ को देखने के लिए. सच है! जिंदगी ने उन सबकी जड़ें उखाड़ दी हैं, खून निचोड़ लिया है! परंतु, फिर भी, यदि किसी के पैर नहीं हैं, तो भी वह नं. आठ तो नहीं! वह नं. इक्कीस है! या फिर नं. पंद्रह!

—मेरे हाथ नहीं! हां! हड्डी भी मेरी टूट गयी है! हां! लेकिन जी रहा हूं! हे भगवान! जिये जा रहा हूं! यदि कल रूसी एक काला ताबूत ला कर उस में नये नं. आठ को ठूंस दें, तो भी मैं आराम से अपना पाइप भरूंगा और मक्खियों को देखता रहूंगा कि वे कहां चिपकती हैं जिलैटिन पर, और दूध भी पीता रहूंगा! यह भी तो आखिर जीवन है, दुर्भाग्य नं. आठ तो नहीं!

आज चार दिन से नं. आठ बराबर बदल रहा है! अभी सुबह ही रूसी बंदी अपने एक रूसी साथी को ले गये हैं. उसकी आंतें चिथड़े हो गयी थीं, और दो दिन और दो रात चिल्लाता रहा था. रूसी से पहले यहां पर कोई भला-सा वियेना का नागरिक था, और अब वीदोविच आ गया है.

नं. सात पर, वीदोविच की बायीं ओर, एक मंगोल पड़ा है, साइबेरिया का, सिर में गोली लगी है, तीन दिन से तड़प रहा है. कुछ चिल्लाता भी है, कुछ तीखे स्वर, लेकिन उन्हें कोई समझता नहीं; सब सोचते हैं कि वह खत्म हो गया, पर फिर से उछल पड़ता है और गिर जाता है; सिर पर बंधी पट्टियों से जलते खून की लाल धारा बहने लगती है. नौ नंबर पर एक युवा स्लोवाक मरणासन्न है, गले की नली में गोली लगी है. उसकी सांस की नली काट दी गयी है और कांच की नली से सांस लेता है, नली में कफ के झागों, मवाद और लिम्फ की गर्गलाहट स्पष्ट सुनाई देती है.

और बैरक पांच-ब में शर्तें लगने लगीं वीदोविच के सिर के लिए, कि सुबह नहीं पकड़ेगा.

—जानता हूं हमारे डाक्टर को. जब उसे तुरंत ही छुरी के नीचे नहीं ले गये, तो इसका मतलब आमेन ही है!

—झूठ! यदि ऐसा होता तो सुबह के लिए छोड़ देता उसे! अभी लड़का ही है!

—वह वियेना का 'पहाड़ी' चावल खाता था, हंसता था! और हमें फौरन छुरी के नीचे भेज दिया गया था.

—तो फिर, क्या? एक-एक काली बोतल की पक्की? सुबह तक?

—पक्की! काली बोतल की!

★ ★

और यों शुरू हुई सितंबर की रात.

बड़े-बड़े, चमकीले तारे जल उठे, और गहरे नीले आकाश ने क्रिस्टल के प्याले की तरह एक्सिलरोड के अस्पताल सहित सारी घाटी को ढक लिया, हजारों टन सफेद गैसें बैरक पांच-ब पर छा गयीं, कहीं भी हवा का झोंका नहीं कि क्षण भर को भी कंपा जाये. मक्खियां सो चुकी हैं और बैरक में अब भनभनाहट नहीं है; मनुष्य के मांस से भरी हुई इस विकृत नाव पर कहीं बीच में एक हरी बत्ती जल रही है, और सब कुछ इस आधे अंधेरे में तैर रहा है. अंधेरा, अंधेरा, हलका अंधेरा, और दर्द, अकथनीय दर्द, जो दिन में छिप गया था, अब हर पोर में सांस ले रहा है और हृदय की हर धड़कन से फूट रहा है. हर आदमी दांत भींच रहा है, पसीने में ठिठुर रहा है, झाग निकल रहे हैं, होठों और जीभ को काट रहा है, और तभी निचला जबड़ा कहीं भिंच जाता है, चेहरा अत्याचारी की तरह ऐंठने लगता है, और पेट के तले से स्वर चीखता है.

—मामा मिया, मामा मिया (मां मेरी)—कहीं गहराई से कोई इतालवी भाषा में चीखा.

—भगवान, हे भगवान, हे भगवान!—आंतों में गोली वाला रूसी दहाड़ा; फिर से शांति, हरी शांति, धुंधलका.

बहुत खून बहने से निचुड़ा हुआ वीदोविच दोपहर के बाद सारे समय सोता रहा था, अब जग आया था, पर उसे पता नहीं कि वह कहां है, क्या हुआ था और कैसे वह यहां आ पहुंचा. आदमियों के चीत्कारों की आवाजें सुनाई दे रही हैं, उसके घावों की लपकन शांत कहीं पड़ी है, और जोश मानो बुझ गया है. कमजोर वीदोविच को मुश्किल से एक ठंडी-सी जगह मिली तकिये पर. जलती पलकें फिर से चिपक गयीं और उन पर बहरी और भारी शांति पड़ गयी, प्यास भी कहीं उड़ गयी. और बैरक उस आरामदेह काले लबादे में खोने लगती कि तभी सारी बैरक को मूर्तिमान दर्द की तड़पती पुकार भेद जाती, कि उस आवाज से अचानक ही सारी इमारत की नींद टूट जाती, तकिये के किसी ठंडे किनारे पर इतनी कठिनाई और श्रम से चिनी गयी नींद, और सब कुछ एक अकेले ही क्षण में टूट जाता.

और सारी रात बार-बार यही होता रहता, हर नये सिरे से.

अवश्य ही रात काफी जा चुकी है क्योंकि हरे पर्दों पर साफ रोशनी पड़ने लगी है. बाहर संतरी चिल्ला रहे हैं; सुतली पर चढ़ती बेल सुबह की हवा से जैसे कांप रही हो. रोशनियों पर पतंगे मंडराने लगे हैं और पंख फड़फड़ा रहे हैं.

—कितने बजे हैं?

समय नहीं है! कुछ भी नहीं है! केवल दर्द!

—मामा मिया! मामा मिया! हे भगवान! हे भगवान!

—उफ, एक मिनट के लिए ही नींद आ जाये! एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सैकिंड के लिए हो!

—हे भगवान!

दूसरे दिन सुबह हालात में गंभीर परिवर्तन होने लगे. रूसी सुबह होने से पहले ही दक्षिण में घुस आये और सम्राट को और राजा की अंतिम रेल लाइन को भी काट दिया, फलस्वरूप रेलगाड़ियां वापस आने लगीं. मशीन चालकों को आदेश मिला हुआ था सो इंजन खिलौनों की भांति हवा में उड़ने लगे. चारों ओर बरबादी नजर आ रही थी. तोपखाना, घायल लोग, शस्त्रागार, कालौंच लगी चिमनियों वाली बड़ी-बड़ी भट्टियां डिवीजनों की, पुल लगाने का सामान, घोड़े, बाढ़; फटते इंजनों के कर्कश धमाके. सारी सुबह सेनाएं मार्च करती रहीं; माल्टा-अस्पताल की अ, स और द बैरकों के मरीज (हलकी चोटों वाले, जो स्ट्रेचरों पर नहीं लाये जाते बल्कि स्वयं ही घिसटते हैं) कांटेदार तारों से झांक-झांक कर इस भयंकर दृश्य को देख कर खुश हो रहे थे, जहां सेनाएं पीछे हट रही थीं और जहां लोग धूप से झुलस-झुलस कर मरेंगे, जब कि वे फिर भी कुछ-न-कुछ अच्छे ही हैं. यहां रेडक्रॉस के नीचे खड़े हैं, और उन्हें कहीं नहीं भगाया जायेगा; यदि रूसी आ गये तो उस दशा में भी उन्हें कहीं दूर ले जाया जायेगा, रूसी अस्पतालों और शिविरों में, और वहां लड़ाई नहीं होगी, और वे जीवित बच जायेंगे और इस प्रकार लड़ाई, संभवतः, उनके लिए तो आज सुबह ही समाप्त हो जायेगी. और, लड़ाई जितनी जल्दी हो सके समाप्त हो जाये, यही एकमात्र विचार है उनके मनों में.

काउंट माक्सीमिलियन एक्सिलरोड,, माल्टा-अस्पताल के प्रमुख, ने कुलीन स्त्रियों (दो-तीन काउंटेसों और एक जनरल की पत्नी को) कारों में भेज दिया और स्वयं वहीं खतरे में अंत तक अपने माल्टा के झंडे के नीचे बने रहने का निश्चय किया. मृत्युशाला में घंटा बज रहा था. काउंट एक्सिलरोड अपनी माल्टा-क्रॉस लगी काली वरदी में घूम रहा था, हर सुबह की भांति बैरकों का चक्कर लगा रहा था और नंगी पीली लाशों को देख रहा था जिन्हें रूसी ताबूतों में ले जा रहे थे; रूसी लाशों को ले जाते हुए कांउट का अभिवादन करते और टोपी उतार कर उसके सामने जमीन तक झुकते.

—कौन कह सकता था कि पिछले बारह घंटों में सारे अस्पताल में इतनी ढील-ढाल आ जायेगी.

—हां, सच है! कल का दिन असाधारण रूप से व्यग्र था. दुष्ट सूरज ने सबके दिमागों को गरम कर दिया था, और डराने वाली खबरें, गुप्त-संकेत, उड़ाये गये इंजन, इन सब ने 'मूड' पर असर किया था. लेकिन आज, जब कि टुकड़ियां बाहर निकल रही हैं, और जब सब कुछ शतरंज के बोर्ड जैसा लगता है देखने में, कि मुहरे कैसे गिर रहे हैं, आज यह सब पहले से अधिक स्पष्ट है और अधिक विनाशकारी लग रहा है. कैसे हिम्मत पड़ी उस जमादार की कि कल, ऐसे वक्त में, महामहिम के सामने कोन्याक पिये? उसने देख लिया था कि काउंट आ रहे हैं, फिर भी आराम से पीता रहा, मानो उसे इस सब से कोई मतलब न हो. और ये सब मरीज भी कैसे दांत निकाल रहे हैं, मानो उपहास कर रहे हों? और ये रूसी क्या गा रहे हैं? (ये रूसी बंदी अपनी-अपनी बैरकों में काम करते-करते गा रहे हैं क्योंकि आज धार्मिक त्योहार है.) अच्छा, ये लो! आज कोई भी नहीं नाच रहा, हालांकि अस्पताल के आदेश में इस पर विशेष जोर दिया गया है! कहीं भी कोई भी नहीं है! और वह भी इस भीड़-भाड़ में अकेला पड़ गया है!

★ ★

काउंट अकेला खड़ा है छाया-सा और बुरी तरह घबराया हुआ है. उसे अपने अंदर शक्ति भी नहीं महसूस हो रही थी कि वस्तुओं को उनके ठिकानों पर लगवा दे, दरअसल उसे पता भी नहीं कि क्या करे. प्रधान कार्यालय से संबंध नहीं स्थापित कर सकता क्योंकि उनकी स्थिति का पता नहीं, और डिवीजन के मुख्य अधिकारी अभी कुछ मिनट पहले सामने से गुजरे हैं गाड़ियों में, बिना यहां रुके! काउंट ने आखिर अपने सभी विभागाध्यक्षों की बैठक की, कि आगे क्या करना है, इस बात का निश्चय किया जाये.

कुछ लोग इस पक्ष में थे कि पचास प्रतिशत कर्मचारी रह जायें और बाकी पचास प्रतिशत चले जायें; दूसरे लोग इसके विरुद्ध थे, और तीसरे न पहले के लिए न दूसरे के लिए बल्कि किसी तीसरे के लिए, और यह खींचातानी इतनी देर तक चलती रही कि निष्कर्ष कुछ भी नहीं निकला, 'अनिश्चित काल तक'.

यह 'अनिश्चित काल' उधर शाम के पांच बजे से ही लागू हो गया, जब यह स्पष्ट हो गया कि अस्पताल संभवतः इसी रात दो लाइनों के बीच आ जायेगा; क्योंकि ऐसा लग रहा था कि रूसी युद्ध क्षेत्र के इस भाग में हमारी टुकड़ियों से संपर्क नहीं रख रहे. और यदि यह बड़े ढंग का पूर्वनियोजित प्रत्याक्रमण, जिसकी घोषणा अड़तालीस घंटे पूर्व की जा चुकी है, सफल नहीं हुआ (जो कि बहुत संभव है), तो कल इस वक्त संभवतः किसी रूसी डिवीजन का सैनिटरी अधिकारी माल्टा-अस्पताल के बारे में अपने निर्णय सुना रहा होगा.

यों अंततः फैसला कर ही लिया गया कि काउंट एक्सिलरोड सर्जनों और बहुमूल्य उपकरणों तथा पचास प्रतिशत कर्मचारियों के साथ एक फार्म पर रात बितायेंगे, यहां से कोई पंद्रह किलोमीटर दूर पश्चिम में और वहां किसी बड़े ग्रुप से संपर्क स्थापित कर के या लिख कर रोष प्रकट करें कि अस्पताल को और उसको क्यों भूल गये, जैसे कि वह कोई पिन हो; लेकिन वह पिन नहीं है, बल्कि डेढ़ हजार घायल सिरों वाला माल्टा-अस्पताल है.

अंतिम टुकड़ियां यहां से गुजर चुकी हैं, तोपों के धमाके पास में सुनाई दे रहे हैं. मरीजों ने कांटेदार बाड़ को तोड़ डाला और सड़क की खाइयों पर आ कर बैठ गये और लड़ाई से आ रहे लोगों से 'उसके' बारे में बातचीत करने लगे. 'वह' तो ब्रूसिलोव है. 'वह' तो रूसी है.

—कहां है 'वह'? क्या 'वह यहीं है'? क्या करता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है 'वह'? कब आयेगा 'वह'? 'वह' तो रास्ते में है, भगवान कसम. 'वह' वियेना तक कहीं नहीं रुकेगा. 'वह' आगे बढ़ रहा है.

सैनिक थके हुए थे, प्यासे थे, और हरेक अलग-अलग बात बताता था, कुछ भी पता नहीं चल सका, अलबत्ता 'वह' जरूर आ रहा था.

शाम हो गयी, रिफ्लैक्टर आसमान में घूमने लगे, और दूर तोपें गरज रही थीं, आखिरी टुकड़ी भी गुजर गयी, लेकिन 'वह' नहीं आया. 'वह' अज्ञात कारणों से रुक गया था और ऐसे विचित्र ढंग से मानो सांस रुक गयी हो. इसी ढंग से 'वह' खड़ा हो गया और अब भी खड़ा है.

अस्पताल के सामने तीन किलोमीटर पर माखल्ली के जंगल में मटमैला पानी बहता है, वहां पुल जल रहे थे और सब कुछ स्पष्ट दिखाई दे रहा था; और दूसरे किनारे पर शांति थी जैसे कि वहां कोई नहीं था. उस रहस्यमयी समय में, जब कि कुछ भी पता नहीं था, न यह कि 'वह' कहां है, न यह कि 'वह' कर क्या रहा है, सारे अस्पताल को ऐसा महसूस हो रहा था कि वह वियेना और मास्को के बीच हवा में लटक रहा था, और बहुत कुछ संभव था कि वह वियेना की अपेक्षा मास्को के पास आता जा रहा था—किसीने मौज में आ कर स्टोर में से एक कोन्याक की बोतल चुरा ली, क्योंकि किसे पता कल क्या हो? रूसी कमिसारियट-अधिकारी आस्ट्रिया वालों से भी अधिक ठाठ-बाट वाले हैं.

स्टोर में कोन्याक थी, काली बुर्गंदर थी, हंगेरी देसी शराब और शैम्पेन थी; एक घंटे के अंदर सारा माल्टा-अस्पताल नाक तक नशे में धुत था. बैरकों में केवल शराब ही शराब बह रही थी, और बीयर की भरी बोतलें फूट रही थीं, क्योंकि शराब के सामने बीयर कौन पिये! रूसी बंदी, अपने सपनों की दुनियां में खोये कि बस कल ही अपने यूराल के गांवों में, वोल्गा के किनारे होंगे, सभी बैरकों में नाचने लगे, और जब एक हंगेरी डाक्टर ने संतरियों की ओर पिस्तौल चला कर अल्कोहल पर बारूद से काबू पाना चाहा तो झगड़ा और बंदूकबाजी शुरू हो गयी और वह हंगेरी डाक्टर हार कर पीछे हट गया और नर्सों के साथ अंधेरे में गायब हो गया. लोगों ने दो जर्मन नर्सों फ्रीड और मरियाना (जिसका मंगेतर वैरदून में मर गया था, और जो सदा उल्स्टाइन की रचनाएं पढ़ा करती थी) को उनके कमरों में जा कर पकड़ लिया और उनके साथ बलात्कार किया; उसके बाद सब बिगड़ गये, और स्वतंत्रता के नाम पर सबने खूब पी, पागल हो गये, और सब कुछ नशीले स्वप्न-सा लगने लगा.

—बैंक, रैस्तो! रैस्तो, बैंक (ताश के खेल में प्रयुक्त जर्मन भाषा के शब्द) —आवाजें आ रही हैं, ताश फेंटे जा रहे हैं, शराब पी जा रही है, सभी चेहरे चीनी समुद्री डाकुओं से लग रहे हैं, टेढ़े-मेढ़े और लटके हुए, गंदे दांतों से सजे हुए; खीसें निपोरी जा रही हैं: रैस्तो, आइन्स्त (ताश का एक खेल)! कोई सिर-फिरा बैरक की दुछत्ती पर चढ़ गया और नाचने लगा, छत का प्लास्टर नीचे झड़ने लगा, और ऐसा लगने लगा कि दुछत्ती फट पड़ेगी और सब कुछ नष्ट हो जायेगा. उधर 'स' बैरक से हार्मोनिका, ओकरीना और वायलिन की आवाजें आ रही हैं, वहां सिर्मिया के लोग हैं, सो उनका बस 'और मामा और ताता' गीत गूंज रहा है. यह उच्छृंखल, विनोदी गज पांच-ब में स्पष्ट सुनाई दे रहा है जहां विदीर्ण, निराश वीदोविच पड़ा है, और एक ही विचार बराबर उसके दिमाग में घुमड़ रहा है: क्या मेरा आपरेशन करेंगे? यदि यह सब आज बाहर निकाल लेते तो इतना खून न बहता! कहां हैं ये लोग? क्यों नहीं आपरेशन करते मेरा? क्या हो रहा है ये सब!

—रैस्तो! आइन्स्त! रैस्तो! बैंक!

तिरोला वाले कोरस गाने लगे, उन निर्देशों को पढ़-पढ़ कर जो अस्पतालों में तीनों तथाकथित राष्ट्र-भाषाओं में लटके रहते हैं. हंगेरी भी चुप नहीं रहे, उनके पीछे-पीछे वे भी अपना हंगेरी पद गाने लगे:

हर खाने से पहले धोओ हाथ,
हर निवृत्ति के बाद धोओ हाथ,

इसी पद को, हवाती देशरक्षा भाव में, कोई नहीं गाता, बल्कि उससे चिढ़ते हैं मानो कोई अफ्रीकी बात हो. स्ताइर (आस्ट्रिया के उप प्रदेश) का एक पहाड़ी टुकड़ी का सैनिक, जिसे कम दीखता था (जिसके चश्मे के शीशों में से उसकी हरी आंखें फूली हुई, कांच की गोली-सी, दिखाई देती हैं), हंसी से फटा जा रहा था. उसके गले में कफ उफन रहा था, गड़गड़ा रहा था, वह लाल पड़ गया था, और भी बुरा हाल होने वाला था, प्रचलित हवाती गीत को पढ़ते समय उसकी जबान लड़खड़ा रही थी: 'हर खाने से पहले धोओ हाथ, हर निवृत्ति के बाद धोओ हाथ'.

—हाहा! यह 'धोओ' क्या मूर्खतापूर्ण बात है!

—वाजिस्टास! वाजिस्टास (यह क्या है)! पैदाइशी बेवकूफ. निक्स! निक्स (नहीं, नहीं)! तू बता दे उसे, क्या पूछ रहा है! दोस्त! ओ दोस्त! ले पी!

—प्यारे भाइयो! दया करो! शांति! दर्द होता है मेरे! बहुत भयंकर दर्द है! वीदोविच चीखा, लेकिन उसकी आवाज खो कर रह गयी.

किसीने हंगेरियन में पूछा—क्या मतलब? दर्द? कैसा दर्द?

—और मामा और ताता...

तोपों की गरज बढ़ गयी थी मानो बैरक के नीचे कोई लकड़ी काट रहा हो.

★ ★

अड़तालीस घंटे पूर्व घोषित वह बड़ा प्रत्याक्रमण वास्तव में सफल रहा. भोर होते-होते रूसियों को एक ही धक्के में पीछे दूर तक खदेड़ दिया गया. दोनों ओर से उन्हें घेर कर लगभग पंद्रह पैदल बटालियनें और कई तोपखाने कैद कर लिये गये. काउंट माक्सीमिलियन एक्सिलरोड लिख्तेन्स्ताइन की बैरोनैस के साथ साढ़े नौ बजे कार से अस्पताल पहुंचे.

सबसे पहले तो जर्मन लड़कियों (नर्सों) के बलात्कार की गहरी छानबीन हुई, लगभग साढ़े बारह बजे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सात रूसियों को गोली मार दी गयी, इन्होंने मरने से पूर्व स्वयं ही अपनी कब्रें खोदी थीं, और लगभग साढ़े तीन सौ बदमाशों को (आंखों के मरीज, खुजली और गुप्त रोगों के मरीज और गोलियों से हलके घायल; इनके अलावा बैरकों–अ २,३,४,५ के ऐसे सभी मरीज जिनका तापमान ३८ सेन्टीग्रेड से कम था) लड़ाई में भेज दिया गया, और साढ़े दस बजते-बजते अस्पताल में सेंट जॉन के माल्टा संघ वाली मुस्तैदी छा गयी.

साम्राज्य के झंडे और अनुशासन की धाक जमाने के लिए, जो उस रात इतना सामायिक लग रहा था, काउंट एक्सिलरोड ने अस्पताल को आदेश दिया कि पिछली रात वाली महान विजय को मशालों की परेड और सलामी से मनाया जाये. सभी मरीज (बिना भेदभाव के) काले-पीले झंडे के सामने लाइनें बनायेंगे, और जो लेटे हैं उन्हें रूसी बंदी स्ट्रेचरों पर लायेंगे, लेकिन परेड में सभी आयेंगे. ऐसा ही हुआ.

सभी बैरकों ने परेड में भाग लिया और हरेक के हाथ में जलती हुई मशाल दी गयी. परेड का संचालन एक रसद-अधिकारी ने किया, जो अपने जीवन में कभी भी घोड़े पर नहीं बैठा था. परेड में कई सौ लोग थे सिर पर खून में सने भूरे रूमाल बांधे हुए और हरेक के हाथ में लाल या हरी मशाल थी.

जब उस शर्मनाक परेड से वीदोविच को बैरक पांच-ब में वापिस लाये तो वह बुखार से जल रहा था.

पिछली रात ही सबका हाल बुरा था, और अब, शराब का भूत उतरने के बाद, सारी बैरक का दर्द और भी गहरा हो गया था. सात नंबर के साइबेरियन ने पिछली रात बहुत पी ली थी, सो सुबह होते-होते दम तोड़ गया, तीसरे पहर कहीं उसे बाहर ले गये, सब ओर भयंकर गंध थी क्योंकि उस उफनते खून ने आग पकड़ ली थी. कृत्रिम खाना खाने वाला नंबर नौ का स्लोवाक बहुत तड़प रहा था, उसकी सांस लेने की आवाज सुनाई पड़ रही थी. वहां दूर, हंगेरियों के बीच में, एक रूसी बुरी तरह चीख रहा था. रात को नाचना चाहता था और अब पागलों की तरह दहाड़ रहा था.

—आत्स अत्या डर इस्तैन्नैत, एन्नैक अ रूस्किनाक! रूस्की (उस रूसी के बाप के भगवान)'!

—चुप! तू रूसी! क्यों दहाड़ रहा है?

—मेरे भी दर्द होता है, पर चुप हूं!

—मैं सोना चाहता हूं! तुम्हारी कम्बख्त मां की. . .!

—रूसी चुप!

—प्स्स्त! शांति! प्स्स्त! प्स्स्त!

वीदोविच लेटा हुआ बैरक के झगड़े को सुन रहा है, उसे अंत का आभास होने लगा है.

—आखिर मैं क्यों पैदा हुआ, और क्या ध्येय है मेरे पैदा होने का? मेरी मृत्यु कितनी शर्मनाक है! कितनी गहरी शर्म की बात! मैं अभी जीवित रहना चाहता था, खेल -खिलाना चाहता था! पर क्या हो गया? अस्पताल और केवल अस्पताल! इस भू-गोल के कौन-से शब्द इस अस्पताल का ध्येय स्पष्ट कर सकते हैं? अस्पताल ही अस्पताल! मैं पूरे दो सालों से केवल अस्पतालों में ही फिर रहा हूं. सजे हुए शहरी अस्पताल उनकी कुलीन वेश्याएं! मठ, जिनमें तपेदिक के रोगी मरते रहते हैं! बैरक! इतनी गंदी, सड़ी, जूओं से भरी लकड़ी की बैरकें! उफ, कितना अफसोसनाक और घृणित है यह सब!

दर्द शुरू हो गया था और सारी बैरक पांच-ब में फैले हुए विदीर्ण और खून बहाते असंख्य अंगों को अधिकाधिक ऐंठने लगा था. दर्द वृहदाकार रूप धारण करने लगा था और लोगों ने ईश्वर को पुकारना आरंभ कर दिया था. स्वयं ईश्वर ही अब अंतिम अपील के रूप में पुकारा जा रहा था, जैसे कि राजकीय कार्यालय को अपीलें भेजी जाती हैं जबकि अन्य कोई चारा नहीं रह जाता.

किसी हंगेरी ने अपने ईश्तैन (भगवान) को बुलाया कि उसकी सहायता करे! कि वह ईश्तैन बड़ी-सी काउब्वाय पैंट पहन कर आये, दो-तीन बोतलें सांड के लाल खून की पी जाये, और शैतान की कोई धुन वायलिन पर निकाले, और या तो वह एक बार मर ही जाये या फिर पुनर्जीवित हो जाये. इस प्रकार अब और नहीं चल सकता! भगवान, भगवान! भगवान! —किसी बिजांत प्रतिमा की भांति पारदर्शी और पीला रूसी चिल्ला रहा है और अपने रूसी भगवान से, जो फर का बड़ा कोट पहने क्रेमलिन में स्वर्ण-सिंहासन पर बैठा है, प्रार्थना कर रहा है. वह रूसी मनुष्य इतनी जोर से चिल्लाता है कि उसकी आवाज मास्को-माता तक पहुंच जाये, हाथ जोड़ता है और नवजात शिशु की भांति रोता है: भगवान! हे भगवान!

वीदोविच चौंक पड़ा, और उसे लगा जैसे ईश्तैन उस हंगेरी के पास आ गया है और उसके बिस्तर पर बैठा है, और उसे बोतल से पिला रहा है, हंगेरी पिये जा रहा है, पिये जा रहा है, उधर वायलिन बज रहा है, आह, कितना सुखद है किसी के हाथों से पीना. वायलिन की धुन पर! बहुत सुखद है यह! नींद आने लगती है! उधर रूसी साम्राज्य का भगवान भी अपने जलूस के साथ बैरक में घूम रहा है; प्रतिमाएं चमक रही हैं, पवित्र माता के घंटे बज रहे हैं और बुद्ध भगवान, सफेद दाढ़ी वाला, रेशमी फर कोट पहिने रूसी आंतों को टटोलता है और उस रूसी के पेट में से खूनी गोली को निकाल लेता है, अब आराम है, आह., आराम है, धन्यवाद तुझे, हे भगवान, अब आराम है!

—देखा! उनमें से हरेक का अपना ईश्वर है! हरेक का अपना ईश्वर है!

—और वह इतालवी (मामा मिया! मामा मिया!) उसके भी हैं कार्डिनल, पोप और रोमन झंडे, रूसी, हंगेरी, उनके भी अपने मालिक भगवान हैं, और मेरा कौन है? मेरे भी दर्द होता है! मुझे भी गोली लगी है वैसे ही जैसे कि उनको! पर मेरा कोई नहीं है!

और यों वीदोविच को दर्द हुआ कि वह भी हाथ उठा कर किसी की ओर फैलाता, लेकिन उसके हाथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हवा में ही रह गये, और उसे एक भयंकर रिक्तता का अनुभव हुआ, गला घुटने लगा, और जोर से रो पड़ा वह.

—ओह, हां, अपनी सराय के सामने मैंने लटके हुए ख्रीस्त को देखा था! वह असली हुवाती ख्रीस्त था, उसकी सभी तेतीस पसलियां टूटी हुई थीं, सीने पर स्तनाग्रों के स्थान पर छेद थे, असंख्य घावों से रक्त बह रहा था! और मैंने कभी भी उसमें विश्वास नहीं किया! वैसा लकड़ी का ख्रीस्त कीचड़ से भरी सड़क पर, जहां मैला फेंका जाता है; उसके पास से हो कर कोई शराबी भी नहीं गुजरता कि उसे श्राप न देता जाता हो; वैसा लकड़ी का हुवाती ईश्वर, नंगा, दरिद्र, जिसके बायां पैर नहीं, ओह, ईश्वर सैनिक टोपी वाला, वह, वह,—उससे प्रार्थना करूं कि मेरी सहायता करे...

'लीब' फाटैरलांट, मास्ट रुहिग जाइन,
व्हीर व्होलैन आले म्युटैर जाइन—
ट्रौय स्टैंख्ट ऊंट फैस्ट डी व्हाख्ट आम राइन.'
(एक जर्मन जन-गीत)

—क्या है? पागल हो गया हूं क्या मैं? ये मैं किससे प्रार्थना कर रहा हूं? दर्द होता है मेरे! मैं प्रार्थना कर रहा हूं! कैसी आवाजें हैं ये?

* *

बाहर से, वीदोविच के सिर पर लटक रहे पर्दे से हो कर, पीला प्रकाश आ रहा था और नारी-स्वर प्रार्थना में रत सुनाई पड़ रहे थे, शांत स्वरों में गायी जा रही पंक्तियां. और सुनाई पड़ रही थी क्रिस्टल के गिलास की आवाज! शांत खनक, शांत स्वर, लेकिन स्पष्ट: "लीब' फाटैरलांट, मास्ट रुहिग जाइन..."

बैरक पांच-ब के पास ही छाया थी जिसके नीचे नियम से डाक्टर लोग और रैडक्रॉस के गिरजाघर की स्त्रियां शाम का भोजन करती थीं. आज शाम उस विशिष्ट भोज पर अपवादस्वरूप काउंट एक्सिलरोड भी उपस्थित थे ताकि विजय का समारोह मनाया जाये.

विजयोल्लास से भरे हुए (जबकि ऐसा लग रहा था कि गलत चाल चल गयी है, और फिर भी स्थिति इतने विचित्र ढंग से पलट गयी) और अपनी उन जर्मन महिलाओं द्वारा गाये देशभक्तिपूर्ण गीत के आवेश में, जो युद्ध के कामों में जी-जान से तत्पर थीं, माल्टा-संघ के सर्वोच्च सेनापति, काउंट माक्सीमिलियन एक्सिलरोड उठे और उन्होंने विजय की बधाई के लिए गिलास ऊंचा किया. वे तत्रमहती की उन विजयों का उल्लेख गर्व से कर रहे थे जिनके कारण माल्टा का झंडा भी अजेय और प्रभुतासंपन्न लहरा रहा था.

—देवियो! श्रेष्ठ फादर जोवानी बतिस्ता चेस्की अ सान्ता क्रोच, जिसने अपनी आंखों से जैकब-अनुयायियों का आक्रमण अपने इस पवित्र माल्टा-क्रास पर देखा, उस माल्टा-क्रास पर, जिसका यहां प्रतिनिधित्व करने का सम्मान मुझे प्राप्त है, उस कुलीन वीर ने अपनी दैनिकी में, देवियो, यों लिखा है : जब तत्र-ईश्वरीयता बुझे सूर्य के ऊपर अच्छे और बुरे का भेद करेगी तो माल्टा के काले भारी कोट ईश्वरीय छाया में रक्षकों के रूप में खड़े होंगे...

वीदोविच ने गिलासों की खनक सुनी और उस काउंट सेनापति की आवाज को भी पहचान लिया, उ[स] शाम की परेड के समय के काउंट के छद्म वेश क[ो] याद आ गयी.

—मैं पागल हो गया हूं! मैं प्रार्थना करना चाह[ता] तो था! ओह! और वे बाहर गा रहे हैं! वास्तव में विजय का अभिवादन! और वह माल्टा का वीर भाष[ण] दे रहा है...

—नं. नौ को क्या हुआ? उसने गले का प्लास्ट[र] उतार फेंका है! उसके खून बह रहा है! नर्स!

—कहीं कोई नहीं है! नर्स कहां है? नं. नौ..

बाहर छाया में, पुते हुए तख्तों के दूसरी ओ[र] गिलास खनक रहे थे, और यहां, पीड़ा के क्षोभ में नं. न[ौ] ने अपना प्लास्टर उतार फेंका और खून बहने लग[ा].

वीदोविच चिल्लाना चाहता था, लेकिन आवा[ज] नहीं निकली. अब स्पष्ट था कि नं. नौ के लिए मोमबत्त[ी] जलाने की आवश्यकता थी.

—मोमबत्ती जलाने की आवश्यकता है! मृतक क[ी] आत्मा की शांति के लिए! —बार-बार यही दुहरा र[हा] था, उसकी आंखें नं.नौ के खून के ढेर में गड़ कर रह गय[ी] थीं. अपनी समस्त शक्ति से उसने चीखना चाह[ा] लेकिन आवाज मानो छलनी में से निकल कर खो गय[ी].

—चुप! धर्मात्मा तेरी मां की...!

—आत्स अपाद इस्तैनैत! शन्द! (हंगेरिय[न] गाली, जिसका अर्थ है—तेरे बाप के भगवान की.. चुप!)

—नं. नौ मर गया! नं. नौ मर गया! और [ये] बहादुर लोग बाहर गा रहे हैं, गिलास बजा रहे हैं! फादर जोवानी बतिस्ता अ सान्ता क्रोच! देखूं तो सही उसे! देखूं जरा माल्टा के उस वीर को...

अंतिम प्रयास के जोश में, जो कि वास्तव में घातक तड़प थी, वीदोविच प्रेत की भांति उठा और सिर की पट्टी उतार फेंकी! वहां एक वर्गाकार स्थान पर रोशनी थी और हलके हरे प्रकाश में चमकती पत्तियों की छाया में दिखाई दे रही थी सफेद स्त्रियां, लाल क्रास लगाये, हलके नशे में, हंसती हुई, भावी खून बहाने वालों की भावी जननियां.

—थू—वीदोविच चिल्लाना चाहता था, उसके मस्तिष्क में स्पष्ट विचार आया कि उस सफेद मेज-पोश पर अपने कीचड़ भरे चीनी मिट्टी के बर्तन फेंक दे और सब कुछ गंदा कर दे—गंदा कर दे ताकि उस सफेद मेजपोश पर एक बड़ा भारी धब्बा पड़ जाये, और सब चिल्ला पड़ें: दाग, दाग!

अपने इस अंतिम, गरीब विचार को कार्यरूप में परिणित करने के लिए वीदोविच प्याले के लिए झुका उसे लगा कि गिर रहा है. उसके हाथ भयंकर पदार्थ में सनते जा रहे हैं—सब कुछ खून में डूब गया जो तेज धार से बह रहा था... □□□

(सूबी-हुवाती (हुवाती-सूबो) से अनूदित
अनुवाद —श्यामराज सिंह जैन)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ेरा पहला प्रश्न यही था—यह अचानक काया पलट कैसे? नहीं ऐसी बात नहीं है कि सब कुछ अचानक ो ऐसा हो गया. यह भी मैं बाद में जान पायी कि उन्हें स खेलने की बुरी लत लग गयी थी. पहले से यदि ान पाती तो शायद यह दशा नहीं होती. उसने बड़ी ीनता महसूस करते हुए कहा.

—तुम ऐसा सोचती हो. मैं शर्मिंदा हूं. मैंने तो से ही पूछ लिया था. क्या मैं नहीं जानता कि तुम कितनी खुशहाल फैमिली में ब्याही थी. मुझे तो खैर सकी जानकारी कुछ ज्यादा ही है, क्यों ?. . .सुस्मिता रे व्यंग्य को समझ गयी थी. उसने मेरी ओर एक बार खा और एकदम डूबे हुए स्वर में बोली—शायद उसी भिमान से मुझे यह दिन देखना पड़ा है. वह शायद रोने ी हो गयी थी. आंसुओं को छिपाने की कोशिश में ह दूसरे कमरे की ओर जाने लगी. मैंने सुना, उसी मरे में से कुछ कराहने जैसी आवाज आ रही थी. . .

मैं वाकई लज्जित हुआ. हालांकि जिस समय से मैं हां आने के लिए तैयार हो रहा था न जाने कितनी ार कोई गाली मेरे ओठों तक आ-आ कर लौट गयी थी. ग रहा था, जब तक मैं उसके सामने जा कर गाली थूक

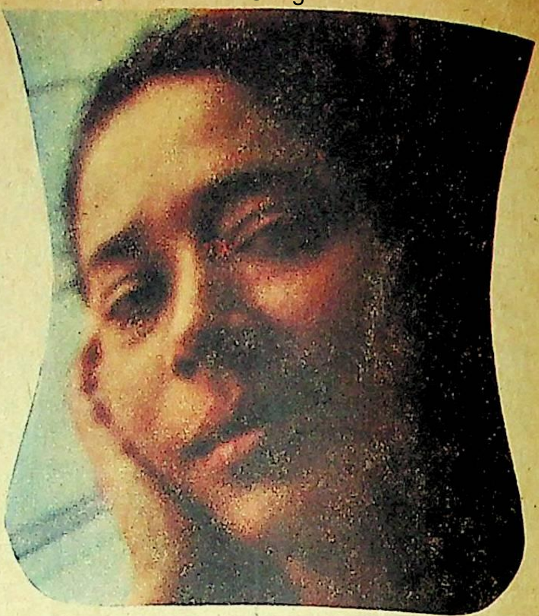

● मुरलीधर जालान

गलत नंबर

● सविता बैनर्जी

नहीं दूंगा, मेरी तबियत हलकी नहीं होगी लेकिन उसके सामने आ कर मेरी स्थिति ऐसी हो गयी कि कब वह अपने किये का एक बार अफसोस जाहिर करे, और मैं हथियार डाल दूं. वैसे जिस समय उसने मुझे फोन पर बुलाया था, तो मैं यकीन नहीं कर पा रहा था कि सुस्मिता मुझसे बात कर रही है. मुझे लगा उस नाम की कोई दूसरी लड़की बोल रही है, पर मेरा नाम बिगाड़ कर उसी लहजे में जब उसने पुकारा तो मैं इस सिगनल को पहचान गया था.

सुस्मिता! आठ साल पहले जो मेरे जीवन में आ कर भी नहीं आ सकी, जिसने मुझे पहचानने से भी इनकार कर दिया था, वह फिर फोन पर बुलाये, घर आने के लिए प्रार्थना करे, यह अपने आप में एक घटना थी. पता पूछता हुआ मैं वक्त पर पहुंच गया था. अफसर की बेटी, धनी पति की पत्नी, इस गंदी कालोनी में रह सकती है, इस कल्पना से मुझे कुछ अजीब-सी हैरानी हो रही थी. सूट और टाई-इस जगह के लिए चौंकाने वाली चीजें थीं. चारों ओर से गोबर और नाले की बदबू आ रही थी.

जब तक मैं उसकी दयनीय दशा के बारे में सोच रहा था और आसपास खुद देख भी रहा था, मेरे अंदर एक क्रूर आनंद लहरा रहा था. लेकिन जैसे ही मुझे इन टूटे-फूटे मकानों के बीच इस बेहतर मकान का नंबर दिखाई दिया, मैंने अपने भीतर दप से कुछ बुझता महसूस किया. लेकिन खैर कुछ ही मिनट बाद मैंने पाया मैं उस दूसरे संकोच से उबर चुका हूं, जिसे इस कालोनी में घुसते ही महसूस कर रहा था. न जाने कितनी आंखें मुझे घूर रही थीं और मैं सिमटता जा रहा था. कई व्यक्तियों के चेहरों से मुझे स्पष्ट लगा कि उनकी आंखों में पढ़ा जा सकता है कि मैं रास्ता भूल गया हूं, हालांकि एक खिलाड़ीनुमा लड़के का अनुमान सही था कि मैं अवश्य ही मि. मजुमदार के घर आया हूं. यह बात वह अपने साथी को फुसफुसाने के अंदाज में जोर-जोर से ही कह रहा था ताकि मैं भी सुन लूं. मेरे मन में हुआ कि उससे कह दूं, तुम ठीक कह रहे हो.

दरवाजा सुस्मिता ने ही खोला और मेरी ओर गौर से देखने के बजाय—आइए, कह कर अंदर लौट गयी. मैं पीछे-पीछे हो लिया.

★ ★

एक साधारण-सा बड़ा कमरा है जिसे कुछ ड्राइंग रूम जैसा सजाने की काफी कोशिश की गयी है. एक-सोफा-कम-बेड है जो शायद ज्यादातर बेड के हिसाब से इस्तेमाल किये जाने के कारण लझझड़ हो चुका है. जिस पर अधमैला-सा बेड-कवर ढका हुआ है. दूसरी तरफ कुछ बक्सेनुमा सामानों को ढक कर बैठने के लिए जगह बना दी गयी है जिस पर दो कुशन रखे हैं. कोने में तिपाई पर फूलदानी रखी है जिसमें लगे प्लास्टिक के फूल मैले हो चुके हैं. बेहतर होता बगैर फूल के ही फूलदानी रखी रहती. एकाएक मुझे लगा इस कमरे में सुस्मिता मौजूद नहीं है इसलिए मैं कमरे के निरीक्षण में बुरी तरह फंस, गया हूं. यह एहसास होते ही मैं दूसरे कमरे की तरफ देखने लगा जहां सुस्मिता गयी है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभी तक नहीं लौटी है. . .

मुझे खीज होने लगी थी कि वह मुझे यहां बैठा कर अंदर से आने का नाम नहीं ले रही है, शादी के बाद लड़कियां एटिकेट निभाना भी भूल जाती हैं. करीब पंद्रह मिनट होने को हुए तो मैंने सोचा आवाज दूं और तभी सुना, अंदर कोई घरघराते स्वर में किसी पर नाराज हो रहा है. मेरा मन हुआ उठ कर देख आऊं, लेकिन एक निहायत बेमानी डर धीरे-धीरे मुझ में पैठता जा रहा था. हालांकि बीच-बीच में मैं अपने को घुड़क देता था. 'हुंह, क्या कर लेगा कोई, उसने बुलाया है तभी तो आया हूं'-लेकिन मैंने सोचा मेरे पास क्या सबूत है. और तब मुझे एकाएक आठ साल पहले का वह दृश्य याद आ गया जब सुस्मिता ने कितने ही लोगों के सामने कह दिया था, 'क्या सबूत है कि मैं तुम्हें पहचानती हूं?' मुझे लगा, मैं नर्वस हो रहा हूं. मेरी नसों में एक ठंडी सरसराहट फैलने लगी, लगा, मैं बोलूंगा तो मेरी आवाज जरूर कांप जायेगी.

एक मिनट बाद तौलिया से हाथ पोंछती हुई सुस्मिता निकली. बोली—माफ करना मैं एक काम में फंस गयी थी. दरअसल मजुमदार साहब करीब एक साल से बीमार हैं, उन्हें बेडपेन दिया था.

मेरे मुंह से निकला—बीमार? तुमने मुझे पहले क्यों नहीं बताया?

वह बोली—उससे भी बड़ी ट्रेजेडी यह है कि उनकी नौकरी भी छूट चुकी है, पहले ही. यही सब कुछ बताने के लिए तो तुम्हें बुलाया है. फोन पर कितना बताती! जानती हूं, तुम तो मुझे माफ करोगे नहीं.

—पर. . .मैं बीच में ही भावुक हो कर बोल पड़ा—तुमने मुझे बुलाया यह क्या मेरे लिए बड़ी बात नहीं है.

—श. . .श. . . सुस्मिता ने मुंह पर उंगली रख कर आहिस्ते बोलने के लिए संकेत किया. मैं फिर डर-सा ही गया. मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि आखिर वह कह क्या रही है. वह बताने लगी—उनकी बीमारी ने मुझे तबाह कर दिया है. मेरे पास अब कुछ भी नहीं है कि मैं उनका इलाज करा सकूं. दो साल हो गये मेरे डैडी को गुजरे यह तो तुम्हें मालूम ही होगा शायद?

—अच्छा? मैंने इस तरह से कहा जैसे मुझे इस बात की जानकारी नहीं थी. हालांकि मुझे लगा इस प्रदर्शन की कोई जरूरत नहीं थी. लेकिन वह बोले जा रही थी. डैडी के न रहने से मेरा आसरा बिल्कुल खतम हो गया. भाई कोई है नहीं जो मेरी कुछ मदद करे. इनके भाई भी होने न होने के बराबर ही हैं. मुश्किल तो यह है कि मैं इनके बारे में, या अपनी स्थिति के बारे में किसी से कुछ कहती हूं—या फोन करती हूं तो ये चीखने लगते हैं—झूठ बोलती हो, दुनियां को दिखाना चाहती हो कि मेरा पति निकम्मा है, मुहताज है. अब इनसे पूछो, क्या रखा है मेरे पास. कहां से रुपए लाऊं? कैसे इलाज कराऊं? और कुछ दिनों बाद तो पेट भरना भी मुश्किल हो जायेगा. बस, चीखना चिल्लाना शुरू कर देते हैं. वैसे डाक्टरों का कहना है कि लंबी बीमारी के कारण इनकी दिमागी कमजोरी बढ़ गयी है, इसलिए ऐसी हरकतें करते हैं. . .

मैं अब तक सचेत हो गया था और उसके बुलाने का मकसद भी मेरे सामने स्पष्ट हो चुका था.

मन के कोने में शायद कहीं कुछ पुरानी बातों को फिर से उलटने-पलटने की इच्छा दबी थी. उन सबकी कोई गुंजाइश नहीं है जान कर मैं औपचारिक बातों पर उतर आया. मन-ही-मन यह भी सोचता रहा कि अच्छे फंसे.

मैंने उससे पूछा—क्या बीमारी है?

उसने बताया —किडनी खराब हो चुकी हैं, खून नहीं बनता. खून की कमी के कारण पैरों में सूजन आ गयी है. बहुत दिनों तक अस्पताल में रखा. अस्पताल में भी इन्होंने चीखना शुरू कर दिया था. कहते, मुझे घर ले चलो. मैं यहां मर जाऊंगा. क्या मार डालने का इरादा है? पैसों की भी तंगी होने लगी थी, मैं इन्हें घर ले आयी. और यह मकान! पिताजी होते तो मुझे यहां रहने देते! सुस्मिता की आंखों में आंसू भर आये थे. गला रुंध गया था.

मैं चुप था. सब तटस्थ भाव से सुन रहा था. मैंने महसूस किया मेरी दिलचस्पी धीरे धीरे कम होती जा रही है. हालांकि उसकी व्यथा-कथा सुन कर मुझे कहीं बड़ी शांति मिल रही थी. मुझे लगा जो गालियां मैं उसके लिए बार बार उगलना चाह रहा था, वे सब उसने अपने आप ही स्वीकार ली हैं. अगर मैं चाहूं कि उसे अपमानजनक बातें सुनाऊं तो शायद इस समय वह अपने स्वार्थ के लिए सब सह लेगी.पर मैं इसके लिए तैयार कहां था? मैं अब, एक दूसरा ही दांव लगाने की सोच रहा था और उस ताश के पत्तों के खुलने की प्रतीक्षा कर रहा था. मैंने उससे कहा—अच्छा यह बताओ, क्या मैं मजुमदार साहब से मिल सकता हूं? तुमने पहले तो कभी उनसे मिलाया नहीं था?

वह बड़े संकोच में बोली—पहले परिचय नहीं कराया उस बात को कह कर मुझे लज्जित न करो लेकिन अब. . .मैंने अभी बताया न कि वह किसी को जाहिर नहीं करने देते कि हमें किसी प्रकार की सहायता की जरूरत है या हम कष्ट में हैं. किसी अपरिचित आदमी को देख कर तो और भी चिढ़ते हैं, अस्पताल में भी पास के घर का कोई आदमी यदि यूं ही पूछ लेता कि क्या तकलीफ है तो उसीको भला बुरा कह देते थे.

—तो क्या उन्हें इस समय पता नहीं चल रहा है कि तुम किसीसे बातें कर रही हो? मैंने हैरत से पूछा

उसने बताया—हां उन्हें यही मालूम है कि मैं हमारे घर के मुनीम जी से बातें कर रही हूं जो मेरे डैडी के पास रहा करते थे. वैसे वे खुद यहां तक आने में असमर्थ हैं.

अब मैंने अपने को थोड़ा मजबूत पाया. अच्छी तरह से बैठता हुआ बोला—अच्छा तो बताओ तुमने मुझे क्यों याद किया?

मेरी बात का जवाब न दे कर उसने मुझ से सीधा प्रश्न किया—तुमने शादी कर ली? पता नहीं क्यों मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स प्रश्न से अंदर से तिलमिला गया. मुझे लगा उसका ह प्रश्न बड़ा बेअदब है.

मैं उसकी तरफ गौर से देख कर बोला——इसका उत्तर या दूं कि तुम्हें अच्छा लगे या तुम्हारे हित में हो? ऐसा त्तर देते समय मुझे लगा मैंने बड़ी शालीनता से उत्तर दया है. मैं अब कुछ क्रूरता से पेश आने के लिए प्रस्तुत ोने लगा. अपने को एक बार फिर निराश पा कर मैं तिशोध लेने के लिए सोचने लगा. मैं चाहने लगा कि रे जवाब से वह आहत हो. अब तक मैं जिस विनम्रता ो ओढ़ने की कोशिश कर रहा था, मैंने उस आवरण ो उतार फेंका. एकाएक मुझे एहसास हुआ कि वह मुझसे उपकृत होना चाहती है और उसने सिर्फ अपने स्वार्थ के लिए ही मुझे बुलाया है. उसके लिए मेरा कोई महत्व नहीं है बस किसी तरह वह अपना काम निकालना चाहती है. अचानक मैं बहुत घटिया तरीके से सब सोचने लगा. मैं किसलिए उसकी मदद करूं? मैं अब उसके लिए क्यों मर मिटूं, क्या गारंटी है कि मुझे फिर से बेवकूफ नहीं बनाया जा रहा है. मैं सब करता यदि इसी में मुझे सुख मिलता. लेकिन मुझे लगा, सुख प्रतिशोध लेने में अधिक है.

मुझे अपने उन तमाम दोस्तों के चेहरे याद आने लगे जिन्होंने मेरी हालत पर तरस खा कर कहा था—दोस्त, जिसने तुम्हें तबाह कर दिया कहो तो हम उसे भी सुख-चैन से न रहने दें. लेकिन तब मैंने ऐसा करने के लिए उन्हें मना कर दिया था. पर आज मुझे लगा यह दया करने के काबिल नहीं है.

मैंने देखा वह रो रही है. कुछ देर मैं उसे गौर से देखता रहा. सोचने लगा, रोने की भी शायद किस्में होती हैं. अभिनय में भी लोग रो लेते हैं बिना ग्लिसरीन के. इतनी संवेदना पैदा कर लेते हैं तभी तो ! फिर लगा, वह शायद पश्चाताप के कारण रो रही है लेकिन दूसरे ही क्षण लगा, ऐसा भी तो हो सकता है वह अपने पति की हालत को सोच कर रो रही हो. या अपनी दुर्दशा के लिए. मैं संभल गया. अपने अंदर उमड़ती हुई दया पर, जो शायद जोर मारने जा रही थी, वहीं रोक लगा दी.

अचानक मुझे वह बात याद आ गयी. जिसे मैं कुछ देर पहले सोच रहा था. मैं बिल्कुल संयत हो गया. अगली जानकारी के लिए बात शुरू करना जरूरी था. बोला——तुम रो क्यों रही हो?

वह बोली——तुम मुझ पर अविश्वास कर रहे हो.

मैं चौंका, लगा पकड़ा गया हूं. पर संभल कर बोला——कैसी बातें कर रही हो! तुमने अविश्वास का क्या देखा? यही न कि तुम्हारे प्रश्न का सीधा जवाब न दे कर मैंने जरा घुमा कर दिया है? खैर छोड़ो. यह बताओ अब करना क्या है. डाक्टर क्या कह रहे हैं?

——डाक्टर तो डाक्टरों जैसी भाषा बोलते हैं. कहते हैं, 'अच्छे हो जायेंगे, कोशिश कर रहे हैं.' लेकिन मुझे तो कोई आसार दिखाई नहीं दे रहे, उसने हताशा के स्वर में बताया.

मैं थोड़ा आश्वस्त हुआ. मेरा क्रोध अब धीरे-धीरे छंटने लगा था. लगा मैं अपने दांव में सफल हो जाऊंगा. मैं सोचने लगा, हो सकता है यह मुझे ले कर कोई दूसरा स्वप्न देख रही हो. रुपये-पैसों की कमी तो बात की बात है. अगर यह बात न भी हो तब भी न जाने क्यों मुझे इस भ्रम पर विश्वास करना अच्छा लगा और मैं मन-ही-मन इस दांव को खेलने के लिए राजी हो गया.

हारे हुए को जीतने की आशा बिल्कुल छोड़ देनी चाहिए, ऐसा कौन कह सकता है , हार-जीत का खतरा तो उठाना ही चाहिए. शायद सुस्मिता को अंत में मेरी ही शरण में आना पड़े. और यह मेरी बहुत बड़ी जीत होगी. .

* *

करीब पंद्रह बीस रोज तक मैं अपने सौ रुपये के नोट को नहीं भूल पाया. बार-बार मुझे यही लगता रहा कि मुझे रुपये नहीं देने चाहिए थे. इसलिए नहीं कि रुपये बहुत ज्यादा थे बल्कि इसलिए कि बात कुछ बनी नहीं और रुपये बेकार ही गये. इसके अतिरिक्त उसके लिए भी ये रुपये पर्याप्त नहीं थे. यह जान कर भी मुझे बहुत बुरा लगा. सुस्मिता की तरफ से अभी तक कोई खबर नहीं मिली थी. हर हालत में मुझे यही लगा, मैंने रुपया यूं ही बहा दिया . लेकिन मुझे लगा काफी दिन हो चुके हैं, मुझे वहां जाना चाहिए. न जाने में ही कौन-सी शान है ? जरा यह तो पता चले कि क्या प्रतिक्रिया हुई? उसके पति की तबीयत के बारे में भी पूछना जरूरी था. दिखाने के लिए भी और अपने स्वार्थ के लिए भी. मुझे पूरा यकीन था कि उसका पति अब बचेगा नहीं.

मैं आज बिल्कुल साधारण कुरता-पायजामा पहन कर गया था. वही कमरा था. बिल्कुल जैसे का तैसा. सुस्मिता मुझे कुछ ज्यादा चिंतित-सी लगी . मैंने पूछा——कैसी तबियत है मजूमदार साहब की? उसने बताया अब पहले से अच्छे हैं, और उनके एक मित्र ने जिनके भाई डॉक्टर हैं, इलाज के लिए विशेष व्यवस्था करवा दी है कम खर्च में. सुन कर मुझे बड़ी निराशा हुई . मुझे लगा अब रुकना नहीं चाहिए. लगा सुस्मिता को अब मुझसे कोई काम नहीं है. उसके चेहरे की उदासी से यही लग रहा था. मैंने महसूस किया, अब मैं न कोई बात शुरू कर सकता हूं न समाप्त. बड़ी जड़ परिस्थिति थी. मैं उसकी तरफ देखने लगा कि शायद वह ही कोई बात कहेगी पर वह चुप थी. अपनी अंगुली की अंगूठी को जो गफ गयी थी, खोलने की कोशिश-सी करती रही. उसके चेहरे पर उदासी के कई रंग आ-जा रहे थे. मुझे यह सब भावुक अभिनय-सा लगा. मैं झटके से उठ खड़ा हुआ, और "अच्छा, अब चलूं" कह कर चलने को हुआ. मुझे एक बार फिर आश्चर्य हुआ और क्रोध भी कि उसने मुझे थोड़ी-देर बैठने तक को नहीं कहा. मैंने अपने को संयत किया और बिना उसकी तरफ देखे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस घटना को हुए एक साल गुजर गया. न मैंने उसकी कोई खबर ली और न उसने ही कभी फोन किया. बीच-बीच में मुझे अपने सौ रुपये के नोट की याद आ जाती थी. शर्म की वजह से मैंने इस घटना के बारे में अपने दोस्तों को कुछ नहीं बताया था.

इस बीच में मैंने एक निहायत साधारण-सी लड़की से शादी कर ली थी. जिससे मेरा परिचय लोकल ट्रेन में रोज के आने-जाने के दौरान हुआ था. इस शादी से मेरे दोस्त तो खुश हुए ही थे, मैं भी खुश था. मैं पिछली बातों को भुला चुका था. विशेष कर दांव खेलने और प्रतिशोध लेने जैसी बातों को. बल्कि इन सबकी जगह सुस्मिता के प्रति मात्र एक हिकारत भरी भावना शेष रह गयी थी.

दो दिन से मेरी पत्नी नर्सिंग होम में थी. उसके प्रीमैच्योर बच्चा होने वाला था. मैं उसके लिए बुरी तरह परेशान था, उसकी हालत बहुत नाजुक थी. मैं आफिस से छुट्टी ले कर आ रहा था कि लिफ्ट में एक साथी ने बताया कल तुम टेबल पर नहीं थे.दो बार तुम्हारा फोन आया था. मैं कल भी छुट्टी ले कर चला गया था, याद करते हुए मैंने उसीसे पूछा कि कौन था ? उसने बताया उसने नाम नहीं बताया, किसी लड़की की आवाज थी. मैं इतना चिंतित और व्यस्त था कि सोच नहीं पाया कि वह कौन हो सकती है. एक बार लगा, जरूर नर्सिंग होम से किसीने फोन किया होगा. पर वहां तो मैं कल भी गया था और आज सुबह भी. किसीने फोन के बारे में नहीं बताया .

दूसरे दिन मैं नर्सिंग होम जाने के लिए तैयार हो रहा था. सुबह मेरी पत्नी का आपरेशन हुआ था. वहां से आ कर नहा-धो कर फिर जा रहा था. दिमाग बहुत बोझिल था. लग रहा था कोई बुरी खबर मिलने वाली है. हालांकि डॉक्टर ने बताया था ऑपरेशन सफलतापूर्वक हो गया है, लेकिन २४ घंटे तक निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता. चिंता के लिए यह काफी था. मैं निकलने को ही था कि डाकिया एक पत्र डाल गया. पते की लिखावट देख कर मैं चौंका. पत्र सुस्मिता का था. पहले सोचा आ कर पत्र पढ़ूंगा लेकिन फिर सोचा पढ़ ही लूं. लिखा था. . .'एक सप्ताह पहले मजुमदार साहब का देहांत हो गया. . .तुम आ सकोगे तो मुझे काफी राहत मिलेगी. . . .और अंत में अपने नाम के पहले –'तुम्हारी' लिखा था. एक गाली के साथ मैंने पत्र को एक तरफ डाल दिया और कमरे में ताला लगा कर बाहर निकल गया. मैंने देखा, पत्नी सोयी हुई थी. शायद बेहोश थी. मैंने डाक्टर और नर्स से उसके बारे में पूछताछ की. दोनों ने आश्वासन दिया––सब ठीक है. मैं पत्नी के पीले चेहरे को एकटक देख रहा था. मुझे उसकी तरफ देख कर अजीब अनुभूति हो रही थी. नाक में नली और खून दिये जाने के दृश्य को देख कर मेरा दिल बैठा जा रहा था. नर्स और डाक्टर आ-आ कर उसकी नब्ज देख रहे थे.

करीब एक घंटे बाद पत्नी ने कराहते हुए आंखें खोलीं. डाक्टर ने झुक कर उससे तबीयत के बारे में पूछा, उसने कोई जवाब नहीं दिया सिर्फ कराहने जैसी आवाज करती रही. मैंने आगे बढ़ कर उसका हाथ अपने हाथ में लिया, उसके सर पर हाथ फेरा. आधा-घंटे बाद उसने फिर आंखें खोलीं-तबीयत के बारे में पूछने पर अपने संकेत से बताया कि ठीक है. मैं आश्वस्त हुआ. नर्स चार्ट में कुछ लिखने लगी, उसने थर्मामीटर भी लगाया, यह सब देख कर मुझे तसल्ली-सी हो रही थी. दो-घंटे बाद जब मैं उठने की सोच रहा था, तब उसने बहुत आहिस्ते से पूछा––कोई चिट्ठी आयी है?

मैं चौंक सा-गया था. बोला––नहीं. पत्नी का आशय उन पत्रों से था जो उसकी तबीयत खराब होने की वजह से रिश्तेदारों के आते थे. उठने के पहले मैंने प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरा और काफी भरोसा दे कर चला गया.

घर आ कर मैंने सुस्मिता के पत्र को तह-दर-तह फाड़ कर कूड़ेदान में फेंक दिया और खाना खाने बैठ गया. सालों बाद मैं अपने को बहुत हल्का महसूस कर रहा था. □□□

२२/५/२, रुस्तमजी स्ट्रीट, कलकत्ता–१९

एक लघुकथा

शिव ओम का छुरा

• रामसरूप अणखी

और फिर जब वह तबादले के बाद इस स्कूल में आयी थी, तो उसने शिव ओम मास्टर को फांस लिया था.

शिव ओम की जिंदगी में वह पहली औरत थी.

एक निश्चित समय तक ही वह किसी मर्द को अपने साथ संबंधित रखती . . . और फिर दूसरा मर्द . . . फिर तीसरा . .

शिवओम के लिए यह बहुत बड़ा हादसा था. वह तो पागल होता जा रहा था.

उसके पुराने यार भी कभी-कभी स्कूल आते. वह उन सबसे हंस कर मिलती, चाय पिलाती और कोई बहाना बना कर चलता करती. शिवओम को लगता, वह कितनी विशाल-हृदया है––लेकिन शारीरिक संबंध तो केवल उसीसे हैं.

लेकिन जब उसे यह ज्ञात हुआ कि वह भी छोड़ दिया गया है तो वह पागल होता जा रहा था.

और फिर एक दिन शिवओम ने उसकी बगल में छुरा घोंप दिया था.

उस दिन के बाद से इस स्कूल में एक सहमसा छा गया है. शिवओम तो सर्विस में रहा नहीं. लेकिन उसकी रूह बिखर कर हर मर्द में समा गयी है. हर अध्यापिका ने अपने-अपने प्यार को दोनों हाथों से थाम रखा है. शिवओम का छुरा हरेक की आंखों के सामने लटक रहा है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक आधुनिक औरत की मौत

•स्वदेश दीपक

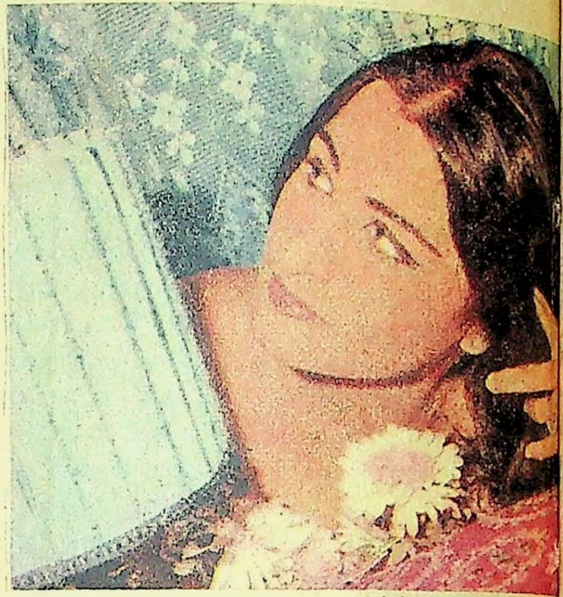

• प्रबोध गोदीवाला

दोपहर के बाद सो कर उठा ही था कि जितेंद्र आ गया. सबसे पहले उसने मेरे हाथ का चाय का प्याला ले कर, मेरी उंगलियों से जलता हुआ सिगरेट छीन कर पीना शुरू कर दिया. उसके बाल पहले से भी लंबे हो गये हैं. एक कान बालों से बिल्कुल ढक गया है. यही हाल रहा तो कुछ दिनों के बाद दूसरा कान भी दिखना बंद हो जायेगा. अब उसने चाय का प्याला खत्म करके नीचे रख दिया है. फिर उसने नजरें जमा कर मेरे चेहरे की ओर देखा और एक शरारती मुसकान उसकी आंखों में, होंठों पर कौंध गयी. आजकल कालेज में पढ़ाने से छुट्टियां हैं. जानता हूं लेट–लेट कर मैं और मेरा चेहरा कुछ मोटे-से हो गये हैं, भर गये हैं. जितेंद्र ने कहा––सुना भाई हलवाई, आजकल क्या लिखा जा रहा है? सच पूछ तो तेरे चेहरे को कोई देखे तो यही कहेगा कि वेल फेड हलवाई है. अपनी दुकान पर बैठा सारी मलाई खुद खा जाता है.

––देख ओये पंडित, नजर न लगा देना. बड़ी मुश्किल से वजन बढ़ाया है,

––छोड़ बेटे, क्यों मजाक करता है, मेरी सारी रेजिमेंट के जवान अगर लाईन में खड़े हो कर तुझे दो घंटे देखते रहें न तो भी तुझें नजर नहीं लगेगी.

हम दोनों हंस पड़ते हैं. जितेंद्र जब भी थोड़े वक्त के बाद मिलता है, पहली बात मेरी अच्छी होती हुई सेहत के बारे में होती है. वह खुद खूब-खूब हैल्दी है. लेकिन इस बात को वह भी टालरेट नहीं कर सका, स्वीकार नहीं सका कि हिंदुस्तान में कोई लेखक क्यों कर स्वस्थ हो सकता है. इस देश की धरती तो केवल फिल्मों में ही हीरे-मोती और सोना उगलती है.

––तू पंद्रह दिन कहां गुम रहा?

––बस जरा पाकिस्तान तक गया था.

––क्यों अब क्या हो गया? युद्ध तो बंद हो चुका है.

––राजे युद्ध तेरी कहानियों में बंद हो गया होगा. हमारे लिए तो अगर शत्रु की कोई भी सैनिक हलचल हो तो युद्ध होने का सिगनेल समझो.

जितेंद्र सेना में कैप्टन है. वह करता क्या है, इसका अंदाजा ही लगाना पड़ता है. परिचय हुआ था तो पहला ख्याल उसका लंबा पतला चेहरा, बड़े-बड़े बाल देख कर यही आया था कि चित्रकार होगा. वह अपने बारे में, अपने काम के बारे में बिल्कुल बात नहीं करता. काफी लंबे परिचय के बाद उसने बताया था कि शत्रु–क्षेत्र में कोई मील अंदर जा कर उसकी सैनिक गतिविधियों की टोह लेने का वह विशेषज्ञ है. तब मैंने पूछा था कि वह खाता-पीता क्या है, इतने दिन शत्रु-क्षेत्र में रह कर. उसने कहा था, की न हलवाइयों वाली बात. पहली फिक्र तुझे खाने-पीने की लगी है. अरे मैंने ब्रिटेन में जा कर कमांडो कोर्स किया है. जंगल में सांप, मेंढक, और कितने छोटे-मोटे जानवर होते हैं. मजे से जब जी चाहे, लंच-डिनर करो. बिल देने की भी कोई चिंता नहीं. यह सब जानने के बाद मुझे पता चला कि सेना वालों ने उसे लंबे-लंबे बाल क्यों रखने दिये हैं. अगर शत्रु-क्षेत्र में पकड़ा जाये तो सिविलियन दिखे, अपने आपको सिविलियन बताये और आराम से शत्रु-जेल में कई साल गुजार आये. सेना उसकी किसी प्रकार की जिम्मेदारी नहीं लेगी.

अब तक वह मेरे तीन सिगरेट खत्म कर चुका है.

––और बता? कोई शेर-चीते वाली कहानी लिखी कि नहीं.

मेरी कुछ कहानियों में जानवरों के प्रतीक जरा ज्यादा आ गये थे इसलिए जितेंद्र ने उन्हें शेर-चीते वाली कहानियों का नाम दे रखा है. सेना में होने के बावजूद भी हिंदी की कहानियां वह खूब जम कर पढ़ता है, उन्हें समझता है. मैं कोई जवाब नहीं देता. वह फिर कहता है–सुन, शाम को स्टैंडर्ड में आ जाना. और तीस-चालीस रुपये भी जेब में डालते आना. एक लड़की को खाने पर बुलाया है.

––लड़की? कौन लड़की? मुझे उससे क्या लेना है?

––बेटे, तुझे तो सिर्फ लिख देना है. लेना तो मुझे कुछ है हीं. हां, कहानियों पर रिसर्च कर रही है. पचास के बाद के लेखकों पर. दो चार लाइनें तुझ पर भी लिखना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहती है. मेरी मुलाकात चंडीगढ़ में हुई थी. बातों-बातों में तेरा जिक्र चल निकला. मैंने तुझे मिलाने के लिए उसे यहां बुला लिया.

—क्यों! कुछ काम बनने की उम्मीद है क्या? उस पर इतना प्रभाव जमाने की कोशिश कर रहा है.

—देखते जाओ. मैं टोह तो ले चुका हूं. दुश्मन कमजोर ही समझो. आज रात आक्रमण भी हो ही जाये शायद.

—ठीक है. तेरे लिए यह भी कर दूंगा. वह चंडीगढ से आयेगी कैसे?

—शर्मा अपनी कार में उसे लेता आयेगा.

—शर्मा? अब वह बीच में कहां से टपक पड़ा?

—उसी ने तो मुझे केतकी माथुर से मिलाया था. अच्छा, सात बजे पहुंच जाना. पैसे ले कर. सुन? मैं तेरे लिए सिगरेट लिये जा रहा हूं. तू और मंगवा लेना. और वह मेरी शिमला की डिब्बी उठा कर चलता बना.

तो उसका नाम केतकी है. मैं मन ही मन कुछ खूबसूरत वाक्य अपनी कहानियों के बारे में तराशने लग पड़ा. किसी सुप्त कोने में अच्छा भी लगा कि मेरा नाम थीसिस में आ जायेगा. . . .यह शर्मा के साथ उसकी जान-पहचान कैसे हो गयी? शर्मा एक सफल सेल्जमैन है दवाइयों का. जितेंद्र के साथ ही कालेज में पढ़ा है. हिंदी कहानियों के बारे में मेरी और जितेंद्र की बहसें सुनकर वह बोर हो गया था. इसलिए एक बार उसने तीन सौ रुपये की कहानियों की पुस्तकें खरीद कर पढ़ डालीं ताकि हमारी बातचीत में में वह भी हिस्सा ले सका करे. हम तीनों में वह ही कैपिटेलिस्ट है इसलिए शाम को होटल का बिल और खर्चा उसे ही देना पड़ता है. ऊपर से उसके अमीर होने की वजह से हम जी भर कर उसे गालियां भी दे लेते हैं. मैंने जिंदगी में ऐसा आदमी कभी नहीं देखा जिसे जितनी गालियां दो, बदले में उतना ही प्यार करता है.

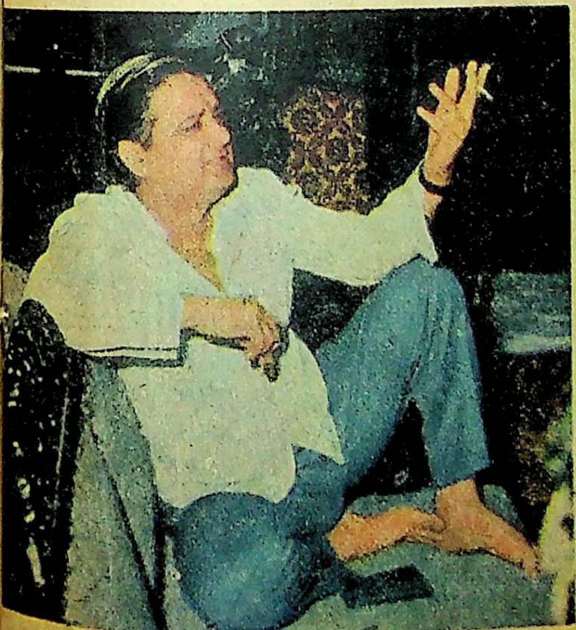

● कमेश व्यास

शाम को मैं स्टैंडर्ड जानबूझ कर देर से पहुंचा. लंबे सोफे पर शर्मा, जितेंद्र बैठे थे और उनके बीच में केतकी. जितेंद्र ने मेरा उससे परिचय कराया. उसने मोटा-सा चश्मा पहन रखा है. क्षणभर को मेरी ओर रिसर्च वाली निगाह से देखा फिर हल्के-से 'हैलो' कहकर चुप हो गयी. मैंने डिब्बी से सिगरेट निकाला. शर्मा ने विदेशी सिगरेट का पैकेट मेरी ओर बढ़ा कर कहा—ले मेरे महान लेखक, क्यों सरदी में शिमला सिगरेट पीता है? आज इम्पोर्टेड सिगरेट पी और ऐश कर!

शर्मा में यह खूबी है कि माहौल को कभी भी भारी और गंभीर नहीं होने देता. उसके होते किसी प्रकार की लिट्रेरी बातचीत करना भी कठिन है. आजकल की कहानी पर बात हो रही होगी तो वह मोपासां की कहानियों को बीच में घसीट कर सब कुछ चौपट कर डालेगा, बहस का खून कर देगा.

केतकी ने भी एक सिगरेट निकाल कर जला ली है. होटल में बैठे दूसरे लोगों ने उसकी ओर चौंक कर देखा है. यह शहर सेना की छावनी होने के कारण ही महत्वपूर्ण है. औरतें अगर शराब पियें तो कुछ अजीब नहीं समझा जाता क्योंकि आर्मी और वायुसेना के अफसरों के साथ आयी औरतें अक्सर ड्राई जिन के दो-तीन पैग पी लिया करती हैं.

बेरा आर्डर लेने के लिए बड़ी देर से आसपास मंडरा रहा है. मैं, जितेंद्र और शर्मा रोज यहां आते हैं. उसे हमारी पसंद का पता है. बिना पूछे उन दोनों के लिए रम के लार्ज पैग और मेरे लिए चाय ले आया करता है. लेकिन आज लड़की को साथ देखकर आर्डर की प्रतीक्षा कर रहा है. मैंने उसे चाय का सेट लाने के लिए कहा. जितेंद्र ने बीच में टोक दिया—की न हलवाइयों वाली बात! तू चाय अपने लिए मंगवा. हम तीनों रम पियेंगे.

तभी केतकी मुझसे पूछती है—आप ड्रिंक नहीं करते?

—नहीं, मैंने जरा चिढ़ कर कहा, कोई लेखक अगर ड्रिंक न करे तो उसे इस बात की पूरी एक्सप्लेशन देनी पड़ती है.

—कभी नहीं पी क्या?

मेरे बोलने से पहले शर्मा ने जवाब दिया—साला पीता था! तेरा जितना वजन है न केतकी, उतनी शराब पी चुका होगा. अब डाक्टरों ने डंडा दिखाया है तो मसीहा बन गया है.

उन तीनों ने पीनी शुरू कर दी है. केतकी ने रम का पहला घूंट भरा तो मैं उसका चेहरा देखता रहा. हिंदुस्तान की सबसे तेज शराब पीने पर उसका चेहरा क्या कड़वायेगा? लेकिन नहीं. बड़े आराम से वह लंबे-लंबे घूंट भर रही है. मैंने नोट किया कि उसकी आंखें धीरे-धीरे चश्मे के अंदर नहीं घूमतीं बल्कि छोटी-छोटी छलांगें लगा कर इधर-उधर जाती हैं. जितेंद्र ने तब उससे कहा— जो कुछ इस राईटर से पूछना है, पूछ लो. ताकि फिर आराम से काम की बातें की जा सकें.

अब वह संभल कर बैठ गयी है. शिकार पर उछलने से पहले बिल्ली की तरह. मुझे लगता है कि उसके रम पीने के कारण और मेरे कुछ न पीने के कारण एक अदृश्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सी टेंशन की दीवार हमारे बीच उठ रही है. उसने पहला सवाल गोली की तरह मेरी ओर दागा--आप कहानियां क्यों लिखते हैं?

सचमुच इस सवाल से मैं उखड़ गया. मैं उस जैसी समझदार लड़की से किसी अर्थयुक्त प्रश्न की आशा रखता था. जितेंद्र शायद सेंस कर गया है कि उसके सवाल का मैं बुरा मान गया हूं. शर्मा मुझसे जवाब देने को कहता है.

--बस लिखता हूं. मेरी मरजी. आप तो यूं सवाल कर रही हैं जैसे कोई थानेदार किसी चोर से कहे कि तुम चोरी क्यों करते हो?

वह पलभर अपनी कैंची जैसी आंखों से मेरी ओर एकटक देखती है. फिर गिलास उठा कर रम खत्म कर देती है.

--आप काम क्या करते हैं?

--तुझे बताया तो था, कालेज में पढ़ाता है. जितेंद्र ने कहा

--तभी, आपका सोचने का तरीका भी प्राध्यापकों जैसा है. यह मत करो, वह मत करो.आपको मुझे सिगरेट, शराब पीते देख कर शॉक लगा है. आप सोचते हैं, औरत सिर्फ वही है जो कहानियों, किस्सों में रहती है, वास करती है. आपने सोचा होगा कि मैं आपको पूजा की निगाह से देखूंगी. वह रविश है. आज की औरत मॉर्डन है. आधुनिक है. वह टसवे बहाती हुई, गालों पर आंसुओं के नदी-नाले फैलाती हुई मर्दों के पीछे नहीं घूमती.

--चियर-चियर! शर्मा ने उसे शह दी, वैसे लगता है, कालेज की किसी डिबेट से कोई टुकड़ा काट कर तुम बोल गयी हो. हम पढ़ते थे तब अगर आधुनिक नारी पर बात होती थी तो लड़कियां इसी प्रकार की दलीलें दिया करती थीं.

--शर्मा यू आर ए रियल बास्टर्ड, वह खीझ कर बोली.

--आई डोंट नो. यह सवाल तुम मेरी मां से पूछना. शर्मा ने बिना परेशान हुए जवाब दिया. अब फिर वह आक्रमण की मुद्रा में मेरी ओर मुड़ी.

--आपकी वह कहानी जिसमें आपने चीते का प्रतीक लिया था, हम सबको बहुत अच्छी लगी. यूनिवर्सिटी में हम लोगों ने उस पर खूब बहस की लेकिन उसका अंत कमजोर था.

मैं जानता हूं, यह वह नहीं बोल रही. कोई उसका प्राध्यापक, आलोचक बोल रहा है जिसे हम नये लेखकों ने मिलकर यह खिताब दे रखा है कि हिंदुस्तान में केवल वही है जिसने आलोचना में चुटकलेबाजी आरंभ की है. आजकल उसका एक वाक्य बड़ा प्रसिद्ध है. मैंने खिंचाव कम करने के लिए उसी आलोचक का वाक्य कोट किया.

--कहानी का आरंभ अंत है और अंत आरंभ.

उसने झटके के साथ गिलास नीचे रख दिया. उसे पता चल गया है कि उसी के हथियार से मैंने उस पर वार किया है.

--अरे ठीक से जबाब दे. क्या हठयोग के फारमूले बता रहा है! टेक हर सिरयसली. जानते हो, अलीगढ़ की गोल्ड मेडलिस्ट है. इसका डाक्टरेट का थीसिस पूरा ही समझो. साले तुझे इम्मार्टल कर देगी, जितेंद्र ने मुझे टोका.

मेरे जवाब देने से पहले ही शर्मा बोल पड़ा--अरे केतकी, तू अलीगढ़ की है. कमाल है. अच्छा तेरे पिताजी क्या करते हैं?

वह समझ रही है, शर्मा उसे बनाने की कोशिश कर रहा है. वह जवाब में सवाल पूछती है--अलीगढ़ की क्या चीज फेमस है?

--ताले! शर्मा ने झट से जवाब दिया.

--तो बस, मेरा बाप ताले बनाता है.

--अच्छा! फिर तो ठीक है. अपने बाप से कह न तेरे लिए भी मजबूत-सा ताला बना दे. चेस्टिटी-बेल्ट पर लगा लेना.

शर्मा की बात पर होटल में हंसी का एक गोला फूट गया. हंस केतकी भी रही थी लेकिन उसकी हंसी केवल मुंह से निकल रही थी, दिल से नहीं. मैंने शर्मा को टोका कि उसे ऐसी बेहया बातें नहीं करनी करनी चाहिये. जवाब केतकी ने दिया--मुझे डिफेंड करने की कोई नीड नहीं. तुम मर्द लोग अंदर से सब कमजोर होते हो. कमजोर और अर्थोडाक्स. अब अगर मैं सिर्फ एक आदमी के साथ शारीरिक संबंध रखूं तो तुम लोग मुझे 'अच्छी प्रेमिका' के नाम से पुकारोगे. अगर मैं उसे छोड़ कर किसी और के पास जाऊं, वही काम करूं, तो तुम लोग वेश्या और काल-गर्ल कहोगे. काम तो मैं वही एक-सा करती हूं.

--हियर-हियर! तूने इस लेखक की तो बोलती बंद कर दी, शर्मा ने केतकी को उकसाया. मैं जानता हूं, अब उसे मुझसे भिड़ा कर मजे लेना चाहता है.

--सुन शर्मा! मेरी साईड लेने की जरूरत नहीं. तू चाहे मुझे कार में घुमा, चाहे होटल में पिला, मैं तेरे साथ रात रहूंगी नहीं. और फिर मुझे बता, मैं तेरे साथ क्यों कर रात को रहूं? केतकी ने अब तक तीसरा पेग खत्म कर लिया है.

शर्मा ने बड़े फिल्मी अंदाज में जवाब दिया--मिस केतकी माथुर, तेरे मेरे साथ रात को रहने के कई रीजन हो सकते हैं. पहला रीजन तो यह है कि मैं हिंदुस्तान का सबसे बदसूरत और अगली आदमी हूं. मेरा कद पांच फुट, चार इंच है और वजन दो सौ दस पौंड. मुहल्ले की औरतें अपने बच्चे को मेरा नाम लेकर डराती हैं इसलिए मैं अपनी किस्म का अकेला, यूनीक आदमी हूं. दूसरा रीजन यह है कि मेरे ख्याल से तुम भी हिंदुस्तान की नहीं तो इस प्रांत की सबसे बदसूरत औरत हो. तुम्हारा माप क्या होगा? मेरे ख्याल से ४०-४०-४०. बस हम दोनों यूनीक हैं. इसलिए क्या हमारे दोनों के साथ सोने के लिए यह रीजन काफी नहीं? केतकी उसे घूर कर देखे जा रही है. शर्मा बड़े आराम से मुसकरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा है.

जितेंद्र कहता है—सुन बे ड्रेकुला की औलाद! क्या किसी औरत को परेशान करने से, तंग करने से, तू सोचता है कि तू उसे मना सकता है, फंसा सकता है?

—बेटे, तू अपनी फौज की बातें ही किया कर. तुझे साईकालोजी से क्या लेना! मेरा सोचने का अपना तरीका मैंने तो शादी भी इसी तरह अपनी बीवी को फंसा कर, डरा कर ही की थी. तू क्या सोचता है, वर्ना मेरी मैरिज हो सकती थी क्या?

अब तक होटल से ग्राहक उठकर जा चुके हैं. होटल लगभग खाली है. मैनेजर और वेटर शायद हम लोगों के उठने की इंतजार में हैं. एक वेटर काउंटर के साथ पीठ लगाये लगातार हमारी ओर देख रहा है. नया-नया आया है. हम लोगों को पहली बार देख रहा है. हमारी बातें उसे अजीब लग रही हैं.

केतकी जान गयी, शर्मा उसे बातों में हरा गया है. वह उससे भी ज्यादा आधुनिक सिद्ध हुआ है. अब उसे रम हिट कर चुकी है. वह बौखला रही है. जितेंद्र की ओर देखती है. वह वैसे ही तटस्थ बैठा है. मैं जानता हूं, जितेंद्र किसी का पक्ष नहीं लेगा.

यह शायद इंटेलिजेंस वालों की ट्रेनिंग का परिणाम है. वह हमेशा सब कुछ वाच करता है. खुद कहीं भी हिस्सा नहीं लेता किसी बात में. फिर परिणाम निकाल दिया करता है.

वह फिर मेरी ओर देखती है. शायद वह मुझे तीनों में सबसे कमजोर समझ लेती है. इस वक्त उसकी आंखें बिल्कुल सुरंग जैसी दिख रही हैं. काली स्याह, और धुंये, धुंध से भरी हुई. वह झगड़ने वाले अंदाज में मुझे कहती है— आप अपने आपको बहुत बड़ा लेखक समझते हैं!

जवाब शर्मा देता है. उसने आजकल कई कहानी लेखकों को पढ़ लिया है. शायद केतकी पर अपने साहित्यिक होने का प्रभाव डालना चाहता है—अरे यह अपने को प्रेमचंद और चेखव बनाने के सपने देखता है!

—अरे यह लोग प्रेमचंद्र का क्या मुकाबला करेंगे? वह तो साहित्य-समम्राट है. यह क्या अच्छी कहानियां लिखेगा. शेर-चीतों और भरी हुई चीजों के सिवा इसे दिखाई क्या देता है?

—आ गयी न टिपिकल हिंदी वालों की मीन और कमीनी बातों पर! तुम लोग प्रेमचंद से आगे बढ़ ही नहीं सकते. और जानती हो, फारेन में दुनिया की हर अच्छी कहानी पर फिल्में बनती हैं. तुम लोग आधुनिक बातें कर सकते हो. तुम्हारी मेंटल स्टेज अभी प्रेमचंद युग वाली ही है. सत्य का बोलबाला, झूठ का मुंह काला. आगे बढ़ने से, आगे सोचने से डर क्यों लग जाता है? इस वक्त क्या तुम्हारे अंदर चीता नहीं दहाड़ रहा है जो किसी न किसी का मुंह नोच लेना चाहता है? जितेंद्र ने धीमी लेकिन सर्द आवाज में कहा. जितेंद्र इसीलिए मेरे इतने करीब है कि वह सोचने में भी आधुनिक है, केवल बातें करने में नहीं. जिंदगी में सिर्फ साहित्य ही ऐसी चीज है जिसे वह सीरयसली ले सका है.

केतकी की आंखों की सुरंगें सुलग रही हैं. मुझे बुरा लगता है कि जितेंद्र को इतनी बड़ी बात नहीं करनी चाहिए थी. वह फिल्टर वाला सिगरेट मुंह में रखती है. हम नोट कर रहे हैं कि सिगरेट वह उल्टा लगा रही है, फिल्टर की ओर से सुलगा रही है.

वह वेटर जो काउंटर के पास खड़ा था, अब बिल्कुल केतकी के सोफे के सामने खड़ा हो कर उसे घूरे जा रहा है. जवान है, शायद नया-नया आया है. उसे मैनर्ज का पता नहीं.

केतकी की काली सुरंगों जैसी आंखें वेटर पर पड़ती हैं उसे शायद अब पता चलता है कि वेटर बड़ी देर से वहां खड़ा उसे घूरे जा रहा है. वह सुलग रही है.

—यह तुम किस होटल में मुझे ले आये हो? ब्लडी, डर्टी पीपल. वेटर को इतनी तमीज भी नहीं. कैसे सामने खड़ा देखे जा रहा है!

—अरे, तुम्हें क्या कहता है! तुम्हारे लिए तो सब मर्द एक जैसे हैं. तुम तो आधुनिक हो, जितेंद्र ने कहा.

—जितेंद्र, प्लीज उसे हटा दो. मुझे बुरा लग रहा है!

—मैं कुछ नहीं कहता, जितेंद्र ने उसे, वेटर को, हम सबको वाच करते हुए कहा.

—तुम कावर्ड हो. डरपोक हो. एक औरत को प्रोटेक्ट नहीं कर सकते तो साथ किस दम पर लाये थे?

—अच्छा, तो तुम्हें भी प्रोटेक्शन की जरूरत है, जितेंद्र ने पूछा.

शर्मा शायद ऐसी ही मनोवैज्ञानिक स्थिति की तलाश में था. वह अपनी जगह से उठा. वेटर के सामने जा कर खड़ा हो गया. फिर उसने वेटर को कमीज के कॉलर से पकड़ा. उसे खींच कर अंदर, किचन के दरवाजे पर छोड़ आया. वह लौट कर अपनी जगह पर आ गया है.

केतकी बड़ी प्रशंसायुक्त आंखों से उसे देख रही है. और मैं फिर महसूस करता हूं, एक आधुनिक औरत की मेरे सामने मृत्यु हो गयी है. आधुनिकता पंख लगा कर उड़ गयी है, ओढ़ा हुआ लबादा उतर गया है. उसे भी साधारण मिडल-क्लास औरतों की तरह मर्द का संबल चाहिये. अब उसकी आंखों की सुरंगें सुलगनी बंद हो गयी हैं. केवल अंधेरा ही अंधेरा, गहरा, घना और अकेला वहां दिखाई दे रहा है. और अचानक बाकी सारी दुनिया मर गयी है. हम बाहर निकलते हैं. जितेंद्र अपना स्कूटर स्टार्ट करता है. शर्मा की कार स्टार्ट हो जाती है. केतकी पहले जितेंद्र के स्कूटर को देखती है, फिर शर्मा की कार को. फिर वह एक झटके से शर्मा की कार का दरवाजा खोल कर उसके पास जा बैठती है.

शर्मा शरारती अंदाज में कार के तीन छोटे-छोटे हार्न देता है, बजाता है. और उस अंधेरे में कार आगे सरक जाती है. □□□

अंग्रेजी विभाग, जी. एम. एन. कालेज,
अंबाला छावनी.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मरचना (२७)

गर्दिश के दिन

• राजेंद्र यादव

जून, १९७२ से 'सारिका' में इस महत्वपूर्ण लेखमाला की शुरुआत हुई थी और अब तक आप इसमें हरिशंकर परसाई, शानी, से. रा. यात्री, राही मासूम रजा, मोहन राकेश, भीष्म साहनी, चंद्रकांत बक्षी, शैलेश मटियानी, मधुकर गंगाधर, ईश्वर चंदर, शांतनु आचार्य, कृष्णा सोबती, मधुकर सिंह, इब्राहीम शरीफ, रवींद्रनाथ त्यागी, फिक्र तौंसवी, दामोदर सदन, हृदयेश, रामसरूप अणखी, एम. टी. वासुदेवन नायर, कृष्णप्रसाद मिश्र, श्रीलाल शुक्ल, तथा रॉबिन शॉ पुष्प की आत्मरचनाएं पढ़ चुके हैं. तमाम संघर्षों, व्यक्तिगत तनावों और दुख-सुख के क्षणों के बीच से गुजरते हुए कोई प्रतिभा किस तरह रचनात्मकता ग्रहण करती जाती है और साथ ही सामान्य व्यक्ति के रूप में किस तरह संघर्षरत रहती है—— इसी संघर्षशील यथार्थ का निरूपण करने वाली प्रख्यात लेखकों की आत्मरचनाएं इस स्तंभ के अंतर्गत दी जा रही हैं. इस अंक में पढ़िए प्रख्यात हिंदी कथा-लेखक राजेंद्र यादव की यह आत्मरचना जो अपने आप में स्वतंत्र कथा-रचना भी है. यादवजी ने इसका शीर्षक दिया है——'वहां तक पहुंचने की दौड़.'

• •

बस, उस सामने वाली झाड़ी तक ही तो पहुंचना है...

उसे लगता है, इस बार वह काफी सुरक्षित जगह आ गया है. इस खेत को पार करते ही पगडंडी और फिर झाड़ियों का झुरमुट . . .वहीं बैठ कर वह कुछ देर सुस्तायेगा, तभी देखेगा कि गोलियों की खरोंचें, स्पलिटर्स या टूटते मकानों के ईंट-पत्थर शरीर में कहां-कहां लगे हैं. अभी तक अपने बचे रहने पर आश्चर्य होता है. शायद कोई भी चीज किसी खतरनाक जगह नहीं लगी है, वरना वह तो वहीं ढेर हो जाता. उसने फिल्मों, टेलीविजन में देखा है. उपन्यास-कहानियों में पढ़ा है. और सुन-समझ कर ऐसा लगता है, जैसे उस सबको आंखों और चेतना से भोग भी चुका है : गोली या फटते गोलों के टुकड़े उछलते हैं, धूल-मिट्टी या दूसरी चीजों के परखचे उड़ते हैं और धुआं साफ होते-होते तो आदमी मलबे का ढूह रह जाता है. इस तरह मरने से पहले अपने शरीर को ऐंठते और मरोड़ खाते खुद कितनी स्पष्टता से जी चुका है. वह दौड़ रहा है, जाने कितने घंटों और युगों स दौड़ता रहा है और अभी भी उसे सामने की झाड़ी दीख रही है, निरंतर कम होती दूरी दीख रही है; इसीसे क्या यह साबित नहीं होता कि वह मरा नहीं है?

पर सुनते हैं, लड़ने और भागने के दौरान जो चोटें महसूस नहीं होतीं, वे बाद में जिंदगी भर टीसती रहती हैं. ऐसे समय तो एक ही उन्मत आवेश, एक ही उन्माद होता है, इस स्थिति से जैसे भी हो, बच निकलो. . . लेकिन इसके बाद गुजरी हुई स्थिति का बार-बार लौटता आतंक, शरीर और चेतना पर लगे घावों का नस-तोड़ दर्द, खुली आंखों में मंडराता संत्रास—आदमी सिर्फ चारपाई पर पड़ा पागलों की तरह चीखता और कराहता है. . . क्या वह भी इसी तरह असहाय और अपंग. . .कहीं ऐसा तो नहीं होगा कि वह झाड़ी के नीचे बैठे और उठ ही न पाये . . .? या बैठते ही देखे कि चारों तरफ से हमलावरों ने उसे घेर लिया है और वह सिर्फ निरुपाय हो कर मौत के नंगे पंजों का अपनी तरफ बढ़ना देख रहा है?. . .तब इस 'गुड्डी' का क्या होगा? कहीं वह झाड़ी भी तो दुश्मन को छिपाये उसकी घात में नहीं बैठी? फिर किधर जायेगा?. . . .कोई-न-कोई रास्ता वहां भी निकलेगा— उसने अपने आपको समझाया.

पहले किसी तरह वहां तक पहुंचे तो सही—वह अपने आपसे बोला, और कंबल में लिपटे बंडल को उसने और भी जोर से छाती पर चिपका लिया——इस तरह कि उस पर दबाव न पड़े; और तब धिक्कार में उसने अपने आपको गाली दी; देखो, वह सिर्फ अपने बारे में सोच रहा है, अपने शरीर और जीवन की चिंता कर रहा है और गुड्डी की बात एकदम भूल ही गया है. लेकिन इस क्षण वह और गुड्डी अलग कहां हैं? बल्कि इस समय जिस स्थिति से गुजर रहा है, वह तो सिर्फ गुड्डी के ही लिए है. उसे अपने आपको नहीं, सिर्फ इस गुड्डी को सुरक्षित जगह पहुंचा देना है. . . किसी तरह इसे बचा ले, फिर भले ही झाड़ियों के नीचे ढेर हो जाये. . .मुन्नी, मैं अपने लिए नहीं, सिर्फ तेरे लिए भाग रहा हूं. . .यह बात वह गुड्डी का नाम ले कर कहना चाहता था, लेकिन अचानक लगा, जैसे उसका नाम ही भूल गया. . .अरे, यह क्या हुआ? वह चौंक कर सहसा ठिठक गया, इसका नाम मुझे क्यों नहीं याद आ रहा? उफ, क्या नाम है तेरा. . .? आयशा, मरियम, मीना. . .नहीं, नहीं. यह इसका नाम नहीं है. सचमुच ही अपनी बच्ची का नाम भूल गया क्या? कहीं उसकी याददाश्त तो एकदम नहीं खत्म हो गयी? अब, अच्छा, मेरा अपना, खुद का क्या नाम है? अभी-अभी कुछ हुआ जरूर है उसके साथ! लेकिन फिर उसने जोर से सिर को झटका दिया और दौड़ने लगा. . .नाम-वाम पीछे याद आते रहेंगे, पहले वहां पहुंचो. . .जैसे भी हो. . .

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

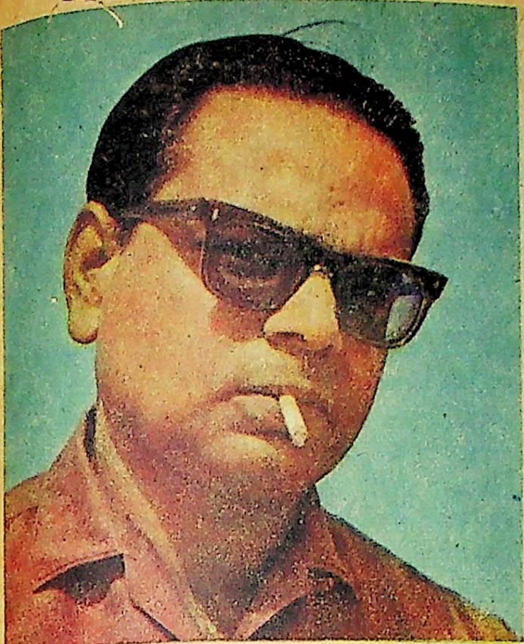

काश, वह झाड़ियों के भीतर जा कर पाये कि वहीं कोई और भी छिपा बैठा है. . .चौंक और डर कर वह वहां से भी भागने की बात सोचे और तभी लग कि वह एक औरत है. . .तब तो वह गुड्डी को उसे सौंप ही सकता है. हर औरत मां होती है. वह जरूर इसे बचा लेगी. पाल देगी. . .लेकिन दोनों को ही आगे या वहां किसी ने पकड़ लिया या मार दिया तो? नहीं, नहीं, ऐसा नहीं होगा. जो इस मार-धाड़, गोलाबारी और अंधाधुंध भाग-दौड़ में नहीं हुआ, वह वहां कैसे होगा? होना होता तो अभी तक हो जाता. अभी भी तो हो सकता है! और मान लो कि ऐसा चमत्कार हो कि वह औरत इसकी मां ही हो तो? वह तो शायद खुशी से वहीं मर जायेगी. . .अपनी गुड्डी को पाने की खुशी में जोर-जोर से रोने-धोने लगे तो? इन औरतों के साथ यही मुसीबत है. बहुत खुश होंगी तो रोयेंगी, बहुत दुखी होंगी तो रोयेंगी. . .वह कमबख्त उस वक्त हम तीनों को पकड़वा देगी. पहचानते ही मैं उसका मुंह दबा दूंगा. . . .

जरूर वहां झाड़ी के पीछे कोई चमत्कार उसकी प्रतीक्षा कर रहा है, हजारों बार की तरह फिर एक विश्वास उसके भीतर एटम-बम के धुएं जैसा कुमुरमुत्ते की शक्ल में आकार ग्रहण करता महसूस होता है. मान लो, ऐसा चमत्कार हो ही जाये और हम तीनों फिर से मिल जायें . . .? फिर तो दोनों मां-बेटी मिल कर मेरी इन खरोंचों, घावों और बाहरी-भीतरी चोटों को अपनी सेवा से संभाल लेंगी. . .भले ही वह फिर जिंदगी भर चारपाई से न उठ पाये. उसने देखा कि वह एकदम असहाय और असमर्थ पड़ा है और मां-बेटी चिंता से उसके आस-पास घूम रही हैं. कभी उसकी सेवा-सफाई करती हैं, कभी करवट बदलती हैं, कभी कुछ खिलाने पिलाने के लिए सहारा दे कर उठाती हैं. . . गुड्डी पास बैठ कर उसे अखबार और किताबें सुनाती है, अपने और उसके बचने-भागने की पूरी कहानी विस्तार से सुनती है, और भय, आतंक, आश्चर्य से आंखें फैला कि उस सबकी कल्पना करती है. सुनाते-सुनाते वह फिर इसी क्षण में लौट आता है. गुड्डी, मुझे तो विश्वास नहीं होता कि मैं तुझे लिये हुए इस सबसे गुजरा हूं. . .

★ ★

गुजरा कहां हूं, सुअर, गुजर रहा हूं! उसने अपने को झकझोर कर फिर वापस हांका. उल्लू के पट्ठे, यह समय भविष्य में जीने का नहीं, इस क्षण को पार कर लेन का है, दहकते अंगारों की इस पट्टी को फलांग कर दूसरी तरफ चले जाने का है. मान लो, आज या कल इस स्थिति से बच कर निकल भी गया तो क्या इसी बीच गुड्डी इतनी बड़ी हो जायगी कि सेवा करते हुए तुम्हारी चारपाई के आस-पास घूमे? या बैठ कर कहानियां सुनें-सुनाये? डेढ़-साल की बच्ची, अभी पूरे वाक्य तो बोल नहीं पाती. . .कभी-कभी यह साली कल्पना भी कैसी प्रखर हो जाती है! कल्पना नहीं, सिर्फ इस क्षण से छूट भागने का बहाना. गुड्डी तो वह है जो इस फट कर चिथड़ा हो गये कंबल में लिपटी तुम्हारे हाथ में है. . . पता नहीं, इसमें लिपटी सांस भी ले पा रही है या नहीं. बेहोश तो जरूर हो गयी है. . . .कहीं एकदम ही. . . और वह याद करने की कोशिश करने लगा कि घर से भागते हुए जब चौखट गिरी थी तो उसे मैंने अपनी बाहों और कंधों पर ही तो झेला था, गुड्डी को चोट कहां लगने दी थी? कंधे से ले कर कुहनी तक बायां हाथ बहुत दर्द कर रहा है. कपड़े और खाल फटने की तो कोई चिंता नहीं, कहीं हड्डी न टूट-टाट गयी हो. . .अभी नहीं, अभी नहीं—उसी झाड़ी के नीचे बैठ कर देखूंगा कि क्या टूटा है, क्या बचा है. . .वहां बैठ कर वह जरूर सुरक्षित सांस ले सकेगा. . . .इस अंधी और दिशाहीन दौड़ को समाप्त करके सोचेगा कि आगे क्या करना है. काश, उसे जरा दम लेने का मौका मिल जाये. . . बस, फिर तो पचास मील आगे और दौड़ लेगा. . .

लेकिन वहां से भी अगर पिछली दर्जनों बार की तरह भागना पड़ा तो? पता नहीं, कितनी बार उसे लगा है कि उस दीवार की आड़ में सुरक्षा है, उस मोड़ को पार कर ले तो खतरे से बाहर हो जायेगा! इस गली के पास ही तो पुरानी इमारत का खंडहर है, उससे लगा कब्रिस्तान है, वहां जरूर सांस ले सकने की गुंजाइश मिलेगी. लेकिन हर जगह ही तो खतरा उसे और बड़ा हो कर मिला है—खूंखार, पागल भेड़िये की तरह उस पर झपट्टा मारने को तैयार. . . .कहीं उसे बहुत पास ही बूटों और लोगों के भागने की भारी धमकती हुई आवाजें मिली हैं, कहीं पहले से ही कराह कर दम तोड़ते कटे-फटे, सुरक्षा की खोज में भागे हुए उसी जैसे लोग मिले हैं, और कहीं उसके पहुंचने से पहले ही आकाश-पाताल को फोड़ने वाले धमाके हुए हैं. और सब कुछ खूनी कौंध के साथ आंख-फोड़ विस्फोट से टुकड़े-टुकड़ों में बिखर गया है. तब हर बार उसने गनीमत की सांस छोड़ कर सोचा है, अच्छा हुआ वहां नहीं था. वरना. . .बचपन में उसने बनैले सुअर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को मारे जाते देखा था. . .चारों ओर से लोग भाले, गंडासे, कुल्हाड़ियां और डंडे लिये दौड़ते थे, ढोल बजाते, चीखते, पुकारते, हांकें लगाते. . .कमी-कमी तो फेंके हुए भाले की पूरी फाल पेट में लिये-लिये ही सुअर दौड़ता था. . .भाले के पीछे घिसटते डंडे के साथ खून की धार छोड़ता हुआ, चिचियाता और चीखता हुआ. . .

समझ में नहीं आता, कौन हैं जो यों एक-एक घर को फूंक रहे हैं, सभी कुछ तोड़े-फ़ोड़े और तहस-नहस किये जा रहे हैं? कभी-कभी उसे लगता है जैसे माहौल में 'हर हर महादेव' और 'अल्लाहो अकबर' का शोर हो रहा है. तो कभी लगता है जैसे हमलावरों में जनेऊ और भारी मूंछों वाले लोग हैं जो दहाड़ रहे हैं : नीच, कमीनो! ठाकुरों और ब्राह्मणों की बराबरी करोगे. . .हम एक-एक घर फूंक देंगे. . .बच्चे-बच्चे को चीर देंगे. . .कभी कहीं से सुनायी देता है : साला जनखा, बंगाली—हम पंजाबियों और पठानों के मुंह लगता है, तेरे काजी नजरुस्सलाम और मुजीब की मां. . .नहीं, नहीं, ये सब तो बहुत पुरानी पढ़ी-सुनी अखबारी बातें उसे याद आ रही हैं. . .यह तो कोई और ही आफत है. शायद कुछ लोग कह रहे थे, शहर को दुश्मनों ने चारों तरफ से घेर लिया है, यह उन्हीं का हमला है. . .एक-एक घर की ईंट बजा देंगे. . .या शायद कोई यह भी कह रहा था कि अपनी ही हारी हुई फौजें पीछे भाग रही हैं. सब जानते हैं, हारी हुई फौजें, हमलावर फौजों से ज्यादा खूंखार होती हैं. वे अपने ही शहर, फैक्टरियां और पुल उड़ाती हैं. अपने ही रसद और हथियारों के गोदामों को आग लगाती हैं, फसलें, खेत, दूकानें जला कर फूंक देती हैं और अगर बची रहीं तो अगले दिन मुनादी करा देती हैं, यह सब दुश्मन ने किया है. . .दुश्मन की फौजें अपने जैसे कपड़ों और निशानों में आयी थीं. . . हां-हां, हमारे लिए तो 'दुश्मन' ही हैं, 'जीत की योजनाओं' में मारे जाते हों, या 'हार के बचाव में. . .' मरना तो हमें ही है, हमारे तो दोनों ही दुश्मन हैं. सरहदों पर बैठे हुए, या सरहद बनाने वाले. शहरों, खेतों, या पुलों की भी कैसी बदकिस्मती है. . .हर हालत में रौंदा उन्हें ही जाना है. . . लेकिन आज स्थायी सरहद रह कहां गयी है? हारे हुओं की सरहद क्या होती है? चाहे कितने पीछे सरकते जाओ, फुफकारते अजगर-सी सरहद उतनी ही पीछे दौड़ती आती है. . .

मगर कहीं कोई दीखे, या पहचान में आये तो कम-से-कम यह तो समझ में आये कि दुश्मन है कौन! अपने 'दुश्मन' हैं या बाहरी? यह भी तो याद नहीं आ रहा कि यह लड़ाई कब शुरू हुई थी, किन-किन के बीच शुरू हुई थी. अब तो चीजें कुछ-कुछ दीखती हैं, वरना जब 'हमला' हुआ था, तब तो बहुत ही अजीब हालत थी. आसमान में छाया हुआ गाढ़ा-गाढ़ा धुआं, बीच-बीच में इधर से उधर उछाली जाती या फेंकी हुई टूटी-फूटी चीजें. . .किवाड़, कुर्सियां, शहतीरें या शरीर के हिस्से. . . लेकिन सबसे ऊपर एक-दूसरे के पीछे दौड़ते काले धब्बों और चकत्तों की शक्ल में निरंतर और लगातार गूंजता एकरस शोर. . .पता नहीं चलता था कि यह शोर टैंकों, मोटर-गाड़ियों, हवाई-जहाजों का था या माहौल में गूंजती चीख-पुकार, नारों और दहाड़ों का मिला-जुला गड्मड् शोर था. . .कभी बहुत ही पास, कभी कहीं बहुत दूर गूंजते धमाके और धड़-धड़, भड़-भड़ की कराहों के साथ गिरते मकान, फाटक, मीनारें या परकोटे की दीवारें. . .ऐसे में कोई किसे पहचाने? गौर से किसी भी चीज को देखने की फुरसत किसे है? सिर्फ ऐसा लगता था जैसे दिमाग में किसी भारी चक्की का इंजन चल रहा है और उसे बंद करने का स्विच टूट गया है : देखते रहो, कुछ पता ही नहीं चलता कि आखिर देख क्या रहे हो. मानो दूसरी और चीजों की तरह देखने और समझने को जोड़े रखने वाले सारे तारों को किसी ने डायनामाइट से उड़ा दिया है, और वहां सिर्फ लगातार गूंजती मशीनी थरथिट और सांय-सांय गोलियों-सा गुजरता कुछ है. . . जो मौत को देख कर डरे हुए कुत्ते-सा रिरियाता-भौंकता है. भागो-भागो, यह जगह ठीक नहीं है, इस जगह खतरा है; यहां से भागो. देखो, उधर से कोई आ रहा है. उस दीवार के पीछे बंदूक की नली-सा कुछ दीखता है. . .धांय की आवाज के साथ ही चीख कर कोई लुढ़क जाता है. . .कहीं भी जाओ, किसी की भी आड़ लो, लेकिन यहां से भागो. . .

* *

हर क्षण लगता है, यहां नहीं, वहां. . .वहां नहीं, उधर. बिना चेहरे के कुछ लोग हैं; लेकिन दहकते शोलों-सी आंखें हैं, हाथों में खून-सनी संगीनें लिये दल-के-दल पीछा कर रहे हैं, इधर से उधर दौड़ रहे हैं. लोग नहीं, सिर्फ संगीनें, आंखें और भारी-भारी बूट हैं जो धमाधम हर गली, हर मोड़, हर दरवाजे और हर चौराहे पर खड़े हैं. . .कुछ लाइन लगा कर सीढ़ियों पर चढ़-उतर रहे हैं, कुछ निशानों की ताक में खिड़कियों से झांक रहे हैं. घिर गया हूं. . .घिर गया हूं. . .अब कोई बचाव नहीं है, अपने आप से वह कहना चाहता है, लेकिन सिर्फ एक रिरियाहट भीतर से उभरती लगती है. क्या कोई उसे अपने लिए नहीं, अपने लिए कतई नहीं, बस सिर्फ इसलिए माफ नहीं करेगा कि वह निरीह, निरपराध बच्ची को बचाने के लिए ही भाग रहा है. . . वह न कुछ चुरा कर भाग रहा है, न उसका इरादा किसी को नुकसान पहुंचाने का है. चेहरों पर इन लोगों ने चढ़ा क्या रखा है? किसी का अलग से कोई नाक-नक्श पहचान में ही नहीं आता, सब एक जैसा थोबड़ा चढ़ाये हैं. अगर इस तरह के ढाटे न बांधे होते तो हो सकता है किसी को पहचान ही लेता. . .हो सकता है उनमें कोई उसका परिचित होता. सभी तो बाहर से आये हुए नहीं होंगे. . .कुछ तो यहीं के, हो सकता है, उनके पास-पड़ोसी ही हों, और उसे जानते हों. मगर यह पता कैसे लगे?. . .मान लो, इधर-उधर से, सामने-पीछे से आंखों, संगीनों, भालों-गंडासों और बूटों का एक झुंड अचानक घेर लेता है, तो वह क्या करेगा? कंबल लिपटे बंडल को आगे बढ़ा कर घिघियाते हुए भीख मांगेगा : भाइयो, मुझे मत मारो, मैं अपने लिए नहीं, इस बच्ची के लिए इधर से उधर जान बचाता भाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा हूं, इस पर रहम करो. . .इसने किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा. . .बिगाड़ा मैंने भी नहीं है, लेकिन इसे तो अभी कुछ भी करने-न करने का मौका ही नहीं मिला. . .लेकिन वे लोग उसकी गिड़गिड़ाहट सुनेंगे? उसकी बात का विश्वास करेंगे?. . .नहीं, उनमें से एक संगीन या बर्छी झपट कर उससे बंडल छीन लेगी और फिर वे उसके सामने ही उसे गेंद की तरह इधर से उधर उछालेंगे. . .संगीनों और भालों पर लोकेंगे. . .कुछ देर वे मनोरंजन करेंगे और फिर धांय की एक आवाज के साथ सभी कुछ समाप्त हो जायेगा. . .

और इस भयानक कल्पना के बाद वह और भी बेतहाशा भागा है. कहीं यह कल्पना एक चालाकी ही तो नहीं है—एक हलका-सा सवाल उसके भीतर उठा है; क्या ऐसा तो नहीं है कि वह भीतर से जानता है कि गुड्डी मर चुकी है, अब उसको दिखा कर, हमलावरों की दया उभार कर वह अपने-आपको बचा लेना चाहता है?. . .अपनी जान बचाने के लिए गुड्डी की लाश का इस्तेमाल कर रहा है? इस प्रश्न ने उसे भीतर तिल-मिला जरूर दिया था. . .लेकिन भागने में कहीं कोई ढील नहीं आयी थी. उसकी दौड़ और जोर से जारी रही. . .कभी लेट कर जमीन पर घिसटते हुए, कभी घुटनों के बल, और कभी तीर की तरह. . .सिर्फ एक जगह, अंधेरी-सी गली में, मलबे और कूड़े के ढेर के पीछे उसे पल भर का अवसर मिला था. उसने बंडल जमीन पर रख कर थरथराते हाथों से कमीज उतार डाली थी, उसकी बांहें फाड़ डाली थीं, कमीज फिर से पहन कर बंडल छाती से चिपकाया था और ऊपर-नीचे बांहों को रस्सियों की तरह बांध लिया था ताकि बंडल कमीज के अंदर और ऊपर-नीचे से सुरक्षित रहे. बड़ी अजीब, सुखद, सांत्वना देती-सी गर्मी उसे छाती पर महसूस होती रही थी. और इस तरह उसके दोनों हाथ खाली हो गये थे. लेकिन भागते हुए वह दोनों हाथ वहां रख कर बंडल को साथ लेता था. जमीन पर रेंगते हुए, उसे बचा कर कुहनियों और घुटनों के बल सरकता था और उसे हर समय लगता रहता था जैसे ऊपर और नीचे पेटियों की तरह कसी कमीज की बांहें ढीली हो गयी हैं और बंडल अब सरक कर गिरने ही वाला है. . .नहीं, वह उसे गिरने नहीं देगा. जैसे भी हो, उसे तो कहीं बचाव की जगह पहुंचा ही देना है (काश, आदमी के पास भी कंगारू की तरह की ऐसे अवसरों के लिए एक थैली होती. . .) शायद इस तरह अलग शब्दों में वह सोचता भी नहीं था. उसकी संपूर्ण चेतना में समायी हुई निश्शब्द और अनकही स्थिति ही यही थी. . .लेकिन इसके साथ ही दो बातें और दिमाग में आयी थीं. हाथ में, सामने, बच्ची रहती है तो हमला करने वाला एक बार सोचता है. हो सकता है वह खुद भी बाल-बच्चों वाला हो और अपने भीतर दया महसूस करे. . .अब तो किसी को कुछ पता ही नहीं चलेगा कि उसके पास कोई बहुत नाजुक, नन्हीं-सी, धड़कती जान है. फूली हुई कमीज के भीतर तो कुछ भी हो सकता है, चुरा कर उठायी हुई चीज, कोई कीमती सामान, या दूसरों को मारने के लिए कोई गोला-

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद जिन कथाकारों ने हिंदी कथा-लेखन को नयी दिशाएं दीं और कहानी को रोमांसवादी प्रवृत्तियों से निकाल कर उसे यथार्थवादी परिवेश से जोड़ा, उन कथाकारों में राजेंद्र यादव का नाम अग्रिम पंक्ति में आता है. 'नयी कहानी' आंदोलन के प्रणेताओं में इनका स्थान प्रमुख है. विशिष्ट कृतियां हैं — 'जहां लक्ष्मी कैद है,' 'छोटे-छोटे ताजमहल', 'अपने पार', 'टूटना और अन्य कहानियां' (कहानी-संग्रह); 'उखड़े हुए लोग', 'सारा आकाश', 'मंत्र-बिद्ध', 'कुलटा' (उपन्यास); 'एक दुनिया समानांतर' (संपादित कहानी-संग्रह) आदि.

बारूद, या दुश्मन की खबर कहीं अपनों तक पहुंचाने के लिए वायरलेस-सेट. . .यानी इससे खतरा और बढ़ गया है. दूसरी बात पर उसने खुद अपने आपको धिक्कारा. . . बच्ची मर तो गयी ही है, बेजान शरीर और मिट्टी के ढेले में फर्क क्या है? अगर किसी ने सामने से संगीन, भाला या ऐसी ही कोई चीज मारी तो हो सकता है उसके अपने शरीर तक पहुंच ही न पाये. . .लेकिन इस विचार के साथ ही ग्लानि का एक ऐसा ज्वार उसे अपने भीतर उमड़ता लगा कि मन हुआ, वहीं ढह कर बैठ जाये और चीख-चीख कर पुकारे : आओ, आओ, मुझे मारो, मारो, मुझे गोद दो, संगीनों और गंडासों से मेरी बोटी-बोटी काट डालो. मेरे पास बचाने के लिए कुछ है, इस बात पर बिल्कुल रहम मत करो. . .तुम्हें कसम है जो मेरा रेशा-रेशा न बिखेर दो. . .मैं नीच, कायर, इसे भी इस्तेमाल करना चाहता था. . .इसे. . . मेरे ऊपर थूको, रहम दिलो. . .!

पता नहीं, कितनी बार यह बात उसके मन में आयी कि इस आतंक और तनाव के नस-नस तोड़ देने वाले दबाव को वह कितनी देर और बर्दाश्त करेगा? क्यों नहीं यहां पड़ कर दम तोड़ देता? क्यों नहीं लोगों के सामने जा कर भीख मांगता : मेरे ऊपर दया करो. मुझे मार दो. . .इस अंधी दौड़ से मैं तंग आ गया हूं, जहां न कोई बचाव है, न रास्ता, न मौत है, न भागने की दिशा. . . तुम्हारे हाथ की जरा-सी हरकत से मैं मुक्त हो जाऊंगा. . .मुझे जिंदगी नहीं, सिर्फ इस यातना से मुक्ति चाहिए. . .इस संत्रास से खींच कर मुझे बाहर निकाल दो. . .मैं तुम्हारा बहुत-बहुत शुक्रगुजार रहूंगा. बहुत बार तो सचमुच उसे खुद डर लगा कि कहीं वह ऐसा कर ही न डाले और अपने को ले जा कर उनके सामने न फेंक दे—या पुकार कर उन्हें ही न बुला ले. . .नहीं जानता, उसे ऐन मौके पर कौन रोक लेता था—अपनी कायरता या इस . . .इस गुड्डी को बचाने की इच्छा. . . .

उसे लगता है जैसे एक अंध-विश्वास उसके भीतर, उसके अस्तित्व में, समाया हुआ है—वह अब तक बच और भाग इसीलिए पा रहा है कि उसके पास यह 'बंडल'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है! वरना ऐसे हालात में, उसके यूं बचे रहने का, इधर से उधर भागने की जी-तोड़ कोशिश या अपने भीतर उस शक्ति को पाने का कोई कारण है? उसके भीतर मर-मर कर जीता हुआ यह बल इस 'बंडल' के साथ होने का है, या इस अनकहे निर्णय या कसम का कि यह है, तो इसे बचाना ही है? हर कसम क्या मुक्का तान कर ही खायी जाती है? कुछ कसमें, आपके अनचाहे-अनजाने आपके अस्तित्व में अपने आप एक रूप नहीं ले लेतीं? बल्कि वह कसम और आप अलग नहीं होते. . .ऐसे संकटों में तो कसम है, इसीलिए आप होते हैं. चूंकि यह कसम शब्दों का आकार दे कर आपके 'होने' से अलग नहीं कर दी जाती, इसलिए 'अंध-विश्वास' जैसी लगती है. . .

पता नहीं, कितनी बार उसे लगा है कि अब उससे एक इंच नहीं सरका जायेगा, अगला पांव उठा सकना असंभव है, लेकिन कोई है जो उसे पीछे से धकेल देता है—सामने से खींच लेता है! गुड्डी के नाम पर वह एक बेजान बोझ को व्यर्थ ही तो नहीं ढोये फिर रहा? कई बार उसने अपने से पूछा है. इसमें अब कुछ नहीं रखा, इसे एक तरफ फेंको और हलके हो कर देखो, इस स्थिति में क्या हो सकता है. मगर फिर फौरन ही दूसरी आवाज उभरती है, मरी नहीं है, मरी नहीं है, सिर्फ बेहोश हो गयी है. मर गयी होती तो उसकी सारी शक्ति उसी क्षण चुक गयी होती. . . उसके भीतर की यह शक्ति, उसे बचाने की यह आस्था गुड्डी ही तो दे रही है, उसकी अपनी तो नहीं है, कहीं और से ही आ रही है. एक बार तो शायद ऐसा हुआ भी था (देखो, साथ-साथ घटित होतीं हुई बातों को वह कैसे भूलता चलता है, पता ही नहीं कि हुआ था या सिर्फ सोचा था!) कि टूटे हुए किवाड़ के नीचे उसने बहुत आहिस्ता से बंडल सरका दिया था, और वह अपने को तोड़ कर वहां से हट आया था. पर फिर उसे लगा, इतने मलबे, लाशों में आज नहीं तो कल, कुत्ते-बिल्ली जरूर अपना भोजन तलाश करेंगे. कौन छोड़ देगा इस मुलायम और स्वादिष्ट भोजन को? दूर ओट से खड़े हो कर गठरी को ताकते हुए उसे लगा था जैसे उसमें हलकी-सी जुंबिश हुई है. और फिर उससे रहा नहीं गया. दुगने वेग और आवेग से उसे उठा कर उसे छाती से चिपका लिया और तब आसपास के प्रति झटके से संयत हो कर एक तरफ भागा. . .

★ ★

अपने आप पर उसे बेहद आश्चर्य भी होता है: इतना प्यार, इतना लगाव और गुड्डी को बचा लेने की ऐसी अदमनीय, उद्दाम भावना उसके भीतर कहां छिपी थी? यह सही है कि 'बाप' होने के बाद उसने अपने भीतर ऐसे अनेक परिवर्तन पाये थे, जिनकी उसने कल्पना भी नहीं की थी. लोगों के प्रति उसका रवैया कुछ अजीब ढंग से कोमल हो गया था. पहले वह चीजों और बातों को सिर्फ अपनी निगाह से ही देखता था, निर्द्वंद्व और लापरवाह था, लेकिन गुड्डी के बाद ऐसा नहीं कर पाता था. जैसे उसकी कल्पना-शक्ति एकदम उर्वर हो गयी थी. पहले वह लोगों और स्थितियों को सिर्फ इकहरा और इकलौता देखता था; अब उनके पीछे बहुत कुछ दीखने लगा था. हर व्यक्ति जैसे एक झरोखा था और उसके पार वह एक निहायत परिचित, अपने जैसे संसार को देखता था, कहीं उसमें हिस्सा लेता था. उसके साथ उसका अतीत और भविष्य भी दीखता था. हर बच्चे के पीछे कहीं एक छोटा-सा घर, उसके मां-बाप, भाई-बहन दीखते थे. अपने इस बदलाव से वह भीतर ऐसा भरा-भरा महसूस करता था, कि खुद-ब-खुद उसका मन कुछ भला और अच्छा करने को करता; खराब और बुरा करने की बात सोचते ही कोई उसका हाथ पकड़ लेता. शरीर-विज्ञान की यह मशीनी बायलॉजिकल प्रक्रिया और उसका परिणाम इस तरह के आध्यात्मिक और भौतिक कायाकल्प करती है, जैसे इस अनुभूति ने भीतर से उसे बहुत समृद्ध और उदात्त कर दिया था. बाप होना सिर्फ एक घटना नहीं, मानसिक जीवन का एक बहुत ही महत्वपूर्ण मोड़ है, इस पर उसका मन घंटों बोलने को करता, लेकिन जब बोलने लगता तो खुद कानों को वे बातें वैसी ही साधारण और रोजमर्रा की लगतीं, जैसी सब लोग बोलते हैं. तब वह झेंप जाता. अकसर झुंझलाता भी कि ये झिझक, झेंप, आगा-पीछा सोचना, हर चीज को दूसरों की निगाह से देखना, जाने कितनी फालतू किस्म की बीमारियां उसे लग गयी थीं, जिन्हें पहले उसने कभी नहीं जाना. घर से बाहर निकलता तो गुड्डी मानो एक तार उससे बांध देती. वह कहीं भी रहता, उस तार का खिंचाव लगातार महसूस होता रहता.

हालांकि एक अफसोस भी उसे कम नहीं था: सारे दिन में उसके साथ बिताने के लिए मुश्किल से घंटा-आध घंटा निकाल पाता होगा. हर क्षण एक चीज को महसूस करते रहना और सबसे कट कर केवल उसी के साथ होना दो अलग बातें हैं. . . वही अपने काम, इधर-उधर की भाग-दौड़, दोस्त, राजनीति, या अपनी ही योजनाओं में उसके पास घर के लिए समय ही कहां होता था!—यह सारे समय तुम्हारे लिए ही टुकुर-टुकुर देखती है, जब तक आते हो, थक कर सो जाती है! उसकी मां शिकायत करती. और तब अपने सारे मानसिक कायाकल्प के बावजूद वह अपने आपसे सीधा सवाल पूछ लेता: सचमुच, उसके मन में पिता जैसी कोई भावना भी है, या सिर्फ उसने एक भ्रम पाल लिया है? गुड्डी की मां तो आरोप करती ही थी, लेकिन वह खुद शंका करता था कि क्या सचमुच 'बाप' जैसी कोई भावना उसमें है भी? दूसरों को देख कर यह बात और शिद्दत से उठती: कैसे वे बच्चों को ले कर दुलराते हैं, बातें करते हैं, अकसर उन्हीं के बारे में बोलते रहते हैं, घंटों का समय निकाल कर उनके साथ खेलते-घूमते हैं, और तब अपने को धिक्कारता कि वह अपनी बच्ची के बारे में इस तरह क्यों नहीं बोल पाता? वह यही मान कर क्यों संतुष्ट और शांत रहता है कि गुड्डी है और घर में खेल रही है? औरों जैसा उसके भीतर वह सब कुछ क्यों नहीं उमड़ता? जरूर उसकी बनावट में कुछ कसर है, वरना ये सारी इच्छाएं तो बहुत स्वाभाविक हैं. लेकिन अब 'अचानक ही. यह प्यार, यह अपने आपको झोंक कर गुड्डी को बचा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेने वाला 'बाप' उसके भीतर कहां से फूट कर बाहर निकल आया है? और इस समय तो ऐसा लगता है, जैसे वह क्षणों और टुकड़ों में नहीं, अपने पोर-पोर में, अपनी संपूर्णता में मुजस्सिम बाप है. हो सकता है, इस क्षण को पार करके वह बच जाये. किसी तरह इसे बचा ले, सब कुछ पहले जैसा शांत और व्यवस्थित हो जाये, कहीं से पत्नी भी सुरक्षित आ मिले और सारा जीवन पहले की तरह चल निकले, तब क्या वह फिर से अपनी उसी दुनिया में नहीं लौट जायेगा? वही जीने और जीविका की समस्या, वही दोस्तों और देश की राजनीति, वही सुबह से शाम तक की भागदौड़, वही रात देर-देर से आना. . . शायद उन सब में उलझ कर, दिन के चौबीस घंटों में उसे कभी खयाल भी नहीं आयेगा कि वह 'बाप' भी है, उसकी एक बच्ची भी है. है तो है, उसके लिए क्या चौबीस घंटे गले में तख्ती लटका कर घूमता रहे?. . . यह सही है कि इन भीषण क्षणों से गुजर कर ऐसी लापरवाही तो वह नहीं दिखा पायेगा, लेकिन इस क्षण, काश, 'वह' औरत देखती कि कैसे मैं अपने रेशे-रेशे से 'बाप' हूं! उसे अपने पर गर्व हुआ और न जाने किन अदृश्य लोगों को संबोधित करके उसने कहा—गधो, चौबीस घंटे अपने को बाप-बाप कहना, बच्चों से खिलवाड़ करके अपने को ताजा कर लेना—तुम्हारा अपना अहंकार और स्वार्थ है! जब तुम बच्चों के प्रथम आने पर, इनाम जीतने पर, लोगों को चकित कर देने वाली प्रतिभा या कला पर फूल कर उनके साथ तस्वीरें खिंचवाते हो, उस समय तुम 'बाप' बिल्कुल नहीं होते, बाप का गौरव भोगते उस समय निहायत स्वार्थी और दंभी व्यक्ति होते हो, और बच्चे का 'कमाल' तुम्हारे इस दंभ को सींचने का बहाना होता है! वह सिर्फ खाद होता है, जिसे खा कर तुम पौधे की तरह इठलाते हो. उस समय तुम बच्चे पर गर्व नहीं करते—तुम्हें सामाजिक प्रतिष्ठा देने का एक जीवित माध्यम तुम्हारे अपने पास है, इस पर गर्व करते हो. . . मूर्खो, आदमी 'बाप' जिंदगी के सिर्फ ऐसे ही कुछ क्षणों में होता है—संपूर्ण और अखंडित. . . ठीक उन्हीं क्षणों में जब औरों के लिए वह बिल्कुल 'बाप' नहीं होता...

* *

लेकिन बिना किसी द्वंद्व, शंका या दुविधा के क्या ठीक ऐसा ही उसके साथ नहीं हुआ है? क्या उसके मन में इस स्थिति से बचने की बात नहीं आयी थी? जब पागलों की तरह सायरन चीखा था और माहौल में जैसे हजारों घंटे-घड़ियाल बजने लगे थे, विराट चक्की चलने का शोर चारों तरफ गूंजने लगा था—उस समय उसने क्या एकदम वैसा ही व्यवहार किया था जैसा इस क्षण सोच रहा है? तब क्या वह बौखलाया-सा, घबराया, छिपने की तलाश करता इस कमरे से उस कमरे में नहीं भागा था? और जब अचानक गोलियां चलने और गोलों के फटने के साथ, लोगों की चीख-पुकार, रोने-धोने की आवाजें आने लगी थीं, तो क्या वह दौड़ कर बड़े-से पलंग के नीचे ठीक वैसा ही औंधा नहीं जा लेटा था, जैसा कि बताया गया था—कुहनियों के बल थोड़ा-सा उठा हुआ, कानों में उंगली दिये हुए. इस बीच एक क्षण भी गुड्डी का खयाल आया? वह तो बाद में, बहुत बाद, जब उसने अपने आपको सुरक्षित होने का आश्वासन दे लिया, तो झटके से चौंका : अरे गुड्डी? तब भी क्या पहली बार यही नहीं सोचा था कि आदमी में जीने की, बचाव की आदिम इच्छा बहुत प्रबल होती है, वह जरूर कहीं-न-कहीं आड़ की जगह चली गयी होगी. जब यह सब गुजर जायेगा तो उसे कहीं-न-कहीं से जरूर खोज निकालूंगा! इस समय अपनी जगह छोड़ कर बाहर निकलना खतरनाक है. मगर फिर उससे वहां लेटे नहीं रहा गया था और वह फटे-मर्राये गले से 'गुड्डी' पुकारता इस तरह भागा था जैसे जलते घर में भागते हों. . . बक्सों के पीछे गुड्डी दबी-दुबकी बैठी थी. उसने सहमे, भयभीत खरगोश जैसी उस चीज को उठा लिया था और फिर वापस अपनी जगह आ लेटा था, अपने को उस पर बिछाये हुए—लेकिन बोझ संभाले. तब उसे उसकी मां का खयाल आया था. पता नहीं कमबख्त कहां चली गयी है! अब याद ही नहीं आ रहा, क्या कह कर गयी थी. उस उल्लू की पट्टी को नहीं पता था क्या, कि बाहर की हालत क्या है?

. . . काश, इस समय वह भागती-हांफती कहीं से प्रकट हो जाये तो उसे उसकी अमानत सौंप कर जान छुड़ाये. . . इस वक्त 'बाप' वह जरूर है, लेकिन, गुड्डी को सौंपना तो उसे ही है, यह अमानत उसी की है. सारे लगाव, भय, परेशानी और चिंता के बावजूद वह इस बात को एक क्षण नहीं भूल पाया था! हर क्षण लगता था कि किसी भी पल वह आ सकती है. . . झुंझलाहट भी होती थी कि क्या झंझट छोड़ गयी है मेरे लिए! . . .

* *

फिर तभी रोशनदान, कांच की खिड़कियां, किवाड़ जोर के धमाकों से हिलने और भड़भड़ाने लगे थे, चारों तरफ कांच के टुकड़े उछलने लगे थे. छत और दीवारों के टुकड़े, धूल और धुआं, सीमेंट के ढोके धड़-धड़ बरसने लगे थे. और अचानक चारों तरफ अंधेरा-सा छा गया. अभी तक उसके भीतर एक विश्वास पल रहा था, आस-पास की बिल्डिंगों और मकानों पर हमले हो सकते हैं, बम और गोलियों की जद में सब कुछ आ सकता है, लेकिन उसका अपना घर अछूता रहेगा. . .लेकिन अब कहीं उसके भीतर के चौकन्ने पशु ने सूंघ लिया था : यहां से जितनी जल्दी हो सके भाग निकलो. . . घिर जाओगे, निकलने का कोई रास्ता नहीं रहेगा. यही क्षण है, सब कुछ तोड़ो और भागो. बाहर सिर्फ एक हमला होता है और अगर वह आपकी अपनी किलेबंदी को तोड़ देता है तो आपके बचाव की अपनी सारी चीजें, एक-एक करके आपके ऊपर हमला करना शुरू कर देती हैं. दुश्मन को दूर रखने वाले सारे तरीके आपको खुद घोंट कर मार डालने को आपके सामने आ खड़े होते हैं. अपनों से आप बच कर कहां जायेंगे?

वह फुर्ती से, आहिस्ता, सरक कर बाहर आया, चुपके से खींच कर पलंग पर पड़ा कंबल उठाया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जल्दी-जल्दी उसमें बंडल की तरह गुड्डी को लपेटा और फिर बगटुट भागा––बाहर. . .और बाहर निकलने से पहले ही वह चौखट गिरी थी, जिसे उसने दोनों बाहें उठा कर कंधों पर झेलने की कोशिश की थी. . . . तब जैसे बेबस भाव से, बंडल उसके हाथों से सरक कर नीचे जा गिरा था, उसके दोनों हाथ लुंज की तरह झूल आये थे. लगा कि अब जिंदगी भर कभी कोई चीज नहीं उठा पायेगा. पहली बार तो कई क्षण अंधेरी आंखों के आगे तारे नाचने लगे थे और खड़े रहना मुश्किल हो गया था. . . फिर पता नहीं कैसे, उसने झूलते हाथों को साध कर बंडल संभाला था. अचानक तब उसके भीतर एक नया आदमी उठ खड़ा हुआ था. . . . जो 'गुड्डी' का 'बाप' था!

अब तो लगता है, वह काफी सुरक्षित जगह आ गया है, अंगारों में दहकता, भट्टी-सा नरक कहीं पीछे छोड़ आया है. . . वह खेत, वह पगडंडी और फिर वह झाड़ियों का झुरमुट. . .फिर शायद कोई खतरा नहीं रहेगा. वहीं बैठ कर वह सुस्तायेगा. . . . तब फिर इस सारे भयानक दृश्य को दुबारा जियेगा–– अभी तो सिर्फ वहां तक भागना है, जैसे भी हो. . .

* *

लेकिन इसका क्या यकीन कि वहां पहले से कोई खतरा उसकी ताक में नहीं बैठा? सैकड़ों बार टूट कर, धोखा खा कर भी क्यों ऐसे विश्वास फिर-फिर मन में सिर उठाते हैं? क्या इसी भ्रम में वह अब मौत के जाल में फंसे एक चूहे की तरह इधर-उधर नहीं भागता फिरता है? क्या उसे अभी भी ऐसा नहीं महसूस होता जैसे सुरंगों की एक भूलभुलैयां के बीचो-बीच वह दिग्भ्रांत-सा खड़ा है, बाहर निकलने की पागल उत्तेजना में कभी वह एक सुरंग में भागता है और आगे जा कर पाता है कि वहां रास्ता बंद है, फिर वापस लौटता है, और दूसरी में दौड़ लगाता है. . .जहां सुरंग बंद होती है, वहां उसे भयानक बदबू आती है, जैसे कुछ लोग वहां पहले भी पहुंचे होंगे और हताश हो कर वहीं दम तोड़ बैठे होंगे. . . सड़ी हुई लाशों की बदबू देर तक उसका पीछा करती है. . . मैं भी शायद कहीं पस्त हो कर लाशों के ढेर में एक हो जाता. . . मेरी बदबू भी शायद इसी तरह निकास के रास्ते की खोज में भटकने वालों के पीछे फेंके हुए नाग-पाश-सी लपकती. . . अगर मेरे पास. . . यह गुड्डी न होती. . . जरूर इन लोगों के पास 'बचाने' के लिए कुछ न रहा होगा. . .हो सकता है ये भी गुड्डी जैसा कुछ-न कुछ ले कर घरों से भागे हों, और रास्ते में हार कर इधर-उधर उसे फेंक दिया हो. . .नतीजे में उनकी सारी जीवनी-शक्ति इकहरी रह गयी हो––तभी तो चुक गयी!

लेकिन आखिर, मैं भी इसे या अपने को बचा कर क्या कर लूंगा? जिंदा रह कर ही क्या होता है? लाखों-करोड़ों लोगों में एक गुड्डी, या एक मैं––रहे, न रहे. . . फर्क कहां है? अपने आपको या गुड्डी को संसार की सबसे कीमती चीज मान कर बचाये रखने के मोह से छुटकारा पाना ही, इस यातना से बच निकलना है. इस बंडल ने उसे शक्ति दी हो, या न दी हो, लेकिन भीतर से कमजोर जरूर बना दिया है. जैसे अभी ही उसके भीतर प्रार्थना जैसी कुछ गूंजने लगी थी : हे भगवान, तुम्हें मैंने कभी नहीं माना, आज सच्चे मन से प्रार्थना करता हूं, इसे बचा लो! इसे सुरक्षित कहीं पहुंचा दो. . . अगर इस बार यह चमत्कार हो गया तो सारी जिंदगी भगवान का विश्वास फैलाने में लगा दूंगा. . . वह है. जरूर है. उसने मेरी गुड्डी को बचाया है. . . या अगर मैंने इस खेत को किसी तरह पार कर लिया तो मान लूंगा कि मेरा कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता. . . उस झाड़ी का आकार दूर से बिल्कुल मंदिर के कलश जैसा दीखता है. . . .

* *

उसे सचमुच ऐसा लगता रहा है जैसे वह हर सड़क पर दौड़ कर उसी एक चौराहे पर निकल आता है. क्या सारे समय वह इसी चौराहे के आसपास घूमता रहा है, घूमता रहेगा? क्या उसकी यह सारी दौड़ सिर्फ एक दायरे में घूमने की दौड़ है? कभी खतरे के बिंदु से बहुत दूर और बाहर निकल आने का भ्रम, और फिर अचानक अपने को उसके बीचो-बीच पाना. . . कहीं ऐसा तो नहीं है कि वह इससे बाहर निकलना ही नहीं चाहता? किसी खतरे और हमले के भय से भागते रहना, कहीं उसकी आदत ही तो नहीं बन गयी है? बाहर निकल आयेगा तो चूर-चूर हो कर गिर पड़ने के सिवा रास्ता ही क्या बचेगा? और गिरना वह नहीं चाहता, इसलिए जानबूझ कर खतरे के आसपास बने रह कर, अपने को चाबुक मार-मार कर भगा रहा है–– लेकिन कब तक? टूट कर ढह जाने का बिंदु जब तक स्थगित हो सके. . . फिर गिरना तो है ही––सांस कब तक साथ देगी?. . . क्यों जी, ठीक इसी क्षण भी तो कुछ लोग ठीक इसी तरह अपना कुछ 'कीमती' बचाने के लिए भाग रहे होंगे, उसी की तरह खतरे और मौत के साथ चूहे-बिल्ली की मजबूरी का खेल खेल रहे होंगे? काश, उनमें से कुछ मिल जाते तो अकेले पड़ जाने की यह घुटन तो नहीं होती. . . जरूर ऐसे लोग उसे मिले होंगे. लेकिन निगाह टिका कर उन्हें पहचानने की फुरसत उसके पास कब थी? उसे तो हर भागता हुआ आदमी 'दुश्मन' लगता था. हो सकता है औरों को खुद वह 'दुश्मन' लगा हो! जरा किसी को रोक कर पूछ ही लेता, लेकिन अनजान आदमी को एक-दूसरे पर विश्वास कैसे होता? फिर अपनी कीमती चीज, उसे बचाने की कमजोरी, किसी को बतायी भी तो नहीं जाती––झपट कर छीन ही ले तो? मगर क्या उनके दिमाग में भी यह बात नहीं आती कि हम सारे भागे और खदेड़े हुए लोग मिल कर एक-दूसरे की हिम्मत ही नहीं बंधाते, शायद अपनी-अपनी कीमती चीजों को बचाने के लिए एक मोर्चा भी बना सकते हैं. . . सवाल यही है कि पहल कौन करे. . .? अकेला आदमी, कब तक अपनी भीतरी शक्ति को निचोड़-निचोड़ कर अपने को घसीटता रहेगा?. . .

उसने कभी एक पोलिश फिल्म देखी थी. उसका एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृश्य दिमाग पर इस तरह खुद गया है कि न चाहने पर भी बार-बार, समय-असमय उभर कर उसे कंपा देता है. कुछ लोगों ने सत्ता के खिलाफ विद्रोह किया था. उन्हें पकड़ कर एक अकेले किले में यातनाएं दी जाती थीं. यातना का एक तरीका कितना भयानक था. . . कैदियों को छत पर बैठा दिया गया : खुले मैदान में सिपाहियों की दो लाइनें आमने-सामने खड़ी हो गयीं— बीच में गली-सी छोड़ कर पच्चीस इधर, पच्चीस उधर. हरेक के हाथ में कोड़े. इस 'गली' के दोनों सिरों पर मुहाने बंद करते हुए दो सिपाही. बीच में अठारह-उन्नीस साल की एक 'विद्रोही' लड़की, एकदम नंगी छोड़ दी गयी. हर सिपाही उसे कोड़ा मारता था, वह बिलबिला कर आगे भागती थी— और फिर कोड़ा पड़ता था, फिर अगला सिपाही, फिर उसके बाद वाला. . . सिरे वाला सिपाही उसे धक्का दे कर फिर वापस मोड़ देता. दोनों ओर लगातार कोड़े खा कर, चीखती, हांफती, कराहती वह जिस तरह इस सिरे से उस सिरे तक भागती थी, वह दृश्य पता नहीं क्यों उसके दिमाग से निकलता ही नहीं है : बहुत बार वह लड़खड़ा कर गिरती, उसे फिर खड़ा कर दिया जाता. दौड़ा-दौड़ा कर उसे उन्होंने चूर-चूर कर दिया था, और हर क्षण लगता था कि वह अब गिरी, अब गिरी. इस बार नहीं उठ पायेगी. आखिर वह गिर ही पड़ी और फिर कोड़ों या ठोकरों के बावजूद उठी ही नहीं. ऊपर से देखते कैदियों में कुछ उस दृश्य को देख कर पागल ही हो गये, कुछ ने वहीं से छलांग लगा कर आत्महत्या कर ली. . . खुद जब यह दृश्य उसके सामने आता है, नाभि से उठ कर कै करने जैसी अनुभूति उसे होने लगती है. बार-बार समझाता है कि वह सिर्फ सिनेमा का एक दृश्य था और वे सभी लोग अभिनेता थे. लेकिन इससे उस दृश्य के आतंक में कोई अंतर नहीं पड़ता. इस क्षण वह यातना भोगती हुई लड़की कौन है? वह खुद? बंडल में लिपटी गुड्डी?. . . इस समय इन सारी बातों को छांटने का मौका कहां है? सब कुछ तो गड़मड़ हो गया है. इस समय तो सच्चाई सिर्फ इतनी है कि कहीं धुंधलके में एक लड़की है और उसे कोड़े खाते हुए दौड़ना है,. इस सिरे से उस सिरे तक. वह जानती है कि यह दौड़ उसे कहीं नहीं ले जायेगी, उसे तो जब तक सांस लेने की संभावना है, या जब तक होश है, तब तक सिर्फ कोड़े खाना है और दौड़ना है— जब तक बिल्कुल चूर-चूर हो कर ढेर नहीं हो जाती. . . झाड़ियों के उस झुरमुट तक तो उसे पहुंचना ही है. . .

* *

क्यों जी, आदमी के मन में यह उम्मीद नाम की चीज क्या है? क्यों नहीं यह एक-दो बार टूट कर ही समाप्त हो जाती? क्यों हमेशा कहीं कुछ बचा रहता है और जरा-सा बहाना पा कर इस तरह सारे सोच पर छा जाता है? यही नहीं, आपके सारे क्रिया-कलाप, हर हरकत को वही तय करने लगता है? अब, वह अच्छी तरह जानता है कि वहां झाड़ी में कुछ नहीं है. हर आड़ और बचाव ने उसे इसी तरह के झूठे आश्वासन दे कर दौड़ाया है. अकसर वहां पहुंच कर उसने देखा है कि दूर से जो जगह बहुत सुरक्षित लगती है, पास पहुंच कर बिल्कुल वैसा नहीं होता. पहुंच कर पाता है कि यहां तो घिर जाने या पकड़ लिये जाने के और भी ज्यादा खतरे हैं : तब, इस दायरे में घूमते रहने का अर्थ क्या है? इस निरर्थक और लक्ष्यहीन दौड़ को यहीं खत्म कर देने से उसे रोके कौन हुए है?

मान लो, वह यह ठान ले कि कहीं कोई गुड्डी नहीं है, कहीं वह खुद नहीं है, उसे कोई भय नहीं है. जब खतरा ही नहीं है, तो उसे बचाने की भावना या कहीं पहुंच जाने की दौड़ भी नहीं है . . . आस-पास कहीं कुछ नहीं हो रहा. मेरे साथ कुछ भी नहीं हुआ है. मैं किसी भी स्थिति से नहीं गुजरा. . . मेरा कोई कुछ भी बना-बिगाड़ नहीं सकता, इसलिए मुझे भी कुछ नहीं करना. . . मान ही लो, वह ऐसा तय करके यहां बैठ भी जाये, खुले में, तो क्या फर्क पड़ेगा? अपने सोचने की ही तो बात है, बाकी तो सचमुच कहीं क्या फर्क पड़ता है? आदमी सोच लेता है, इसीलिए समय, स्थान और चीजों से जुड़ जाता है. यानी समय, स्थान, चीजें उससे नहीं जुड़तीं— वह अपने-आपको उनसे जोड़े होने का भ्रम पालता है. मान लो, वह इसी क्षण तय कर ले कि न उसका कोई अतीत है, न भविष्य, न वर्तमान— न वह कहीं से भाग कर आया है, न उसे कहीं भागना है— घर, गुड्डी, वह झाड़ी, इन सबसे उसका कोई संबंध नही है— तो? मैं सिर्फ एक बात कहता हूं. अगर सोच ले तो कहां, क्या बदल जायेगा? क्या वह उतना ही निश्चित नहीं हो जायेगा जितनी ये और 'चीजें'? मैं इसीलिए तो इन सबसे बंधा, या जुड़ा हूं कि ऐसा सोचता हूं, अपने आपको उन सबसे 'जुड़ा हुआ' मानता हूं. मेरे भीतर की सारी प्रतिक्रियाएं इस जुड़े होने के तनाव से ही पैदा होती हैं. लड़की को इस तरह कोड़े मार-मार कर दौड़ाना तो वास्तव में एक रूपक है. सोच को खींच कर अपने को वापस लाने का निर्णय कर लो, तो कोई भी आपका क्या कर सकता है? एक बार अपने को वापस खींच कर इस स्थिति को देख लेने में हर्ज ही क्या है?

सुनते हैं, योगी लोग इसी तरह अपने आपको सबसे तोड़ कर अपने आपको खींच लेते हैं और मुक्त हो जाते हैं. न उन्हें धूप लगती है न ठंड. भूख-प्यास भी शायद महसूस नहीं होती. वे कांटों की सेज पर भी उसी आराम से सोते हैं, जैसे गद्दे पर. सिर्फ अपने मन को मोड़ लेने की बात है. . . मगर सिर्फ इस तरह की कल्पना करना अच्छा लगता है, ऐसा हो कहां पाता है?. . इसे कहीं सुरक्षित जगह पहुंचाने की इच्छा को क्या वह एक पल भी मन से निकाल पाया है? हां, कभी-कभी बीच बीच में उसे एक अजीब-सी बात जरूर महसूस होती है लगता है जैसे गुड्डी, उसका अपना शरीर, पता नहीं कब के छूट चुके हैं, उसके हाड़-मांस उसके साथ नहीं हैं, वह सिर्फ एक हवा है, भागते रहने की एक इच्छा है— अशरीरी और निराकार. . . इसी को शायद लोग 'प्रेत

(आगे पृष्ठ ७६ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक और वापसी

• अमरेंद्र अमर

रिक्शेवाले को पैसे देने के बाद निश्चित-सा वह गली में मुड़ा. सामान के नाम पर एक चमड़े का मृतप्राय सूटकेस और छोटे-मोटे सामानों से लथपथ एक प्लास्टिक की डोलची. गली लंबी थी. गश्त लगाने वाला सिपाही आता दिखाई पड़ा. वह धीरे-धीरे चल रहा था. हर कदम पर लगता घर का फासला थोड़ा और बढ़ जाता. सुनने वाले के लिए विचित्र बात थी. आधी रात का वक्त होगा. सिपाही नजदीक आ गया. टार्च की रोशनी बेमतलब ढंग से फेंक कर बोला–– कौन हो तुम?

एक क्षण के लिए उसकी बोलती बंद हो गयी. फिर संभलते हुए उसने कहा–– पास ही रहता हूं. छुट्टी पर घर आया हूं, कोई खास बात है––आखिरी पंक्ति अपने आप उसके होठों से छूट पड़ी थी–– अंधेरे की वजह से वह सिपाही की आंखों की हिंस्र चमक को नहीं देख पाया. फिर भी उसे लगा––अब मार खाने की बारी आ सकती है.

––चुपचाप घर चले जाओ इसी में खैरियत है. सिपाही आगे बढ़ गया. वह हताश भाव से आगे बढ़ा–– दूर पर कुत्तों का भौंकना. गली का स्तब्ध चिर-परिचित सन्नाटा अपने आप में कितना सुकून देने वाला है––उस पराये बड़े शहर में ऐसी बात कहां? वह भीतर से कुछ आर्द्र हो चुका था.

. . . पूरे छह महीने बाद वह लौटा था–– उस दिन चूल्हा ठंडा था. पत्नी और छोटे बच्चों का उतरा हुआ चेहरा उसे भीतर तक तराश गया था. सारा दिन यूंही भटकता रहा. परिचितों ने मुंह फेर लिये थे. बार-बार पैसे कौन देता–– और क्यों देता? पराये शहर की बेतरह भाग-दौड़, भूख और तिरस्कार के बीच अचानक एक उद्योगपति ने अपने यहां नौकर रख लिया. घर के कामकाज के लिए उसे रखा गया. धीरे-धीरे काम काफी बढ़ गया. आराम के नाम पर सिर्फ रात को चार घंटे सोना. हां, खाने-पीने का सुख था. उसने कई किताबों में सेठों व मिल मालिकों का जिक्र पढ़ा था–– यहां बात मिलती थी. मालिक कम बोलते थे पर बला का तेज गुस्सा था. साफ-सुथरा रहने और नियम से तड़के काम पर हाजिर होने के संबंध में उन्होंने कहा था–– अगर आपको हमारे घर का नियम-कायदा पसंद न हो तो सैकड़ों जगहें हैं––वहां जाइए. मैं बार-बार समझाता नहीं. वह सकते में आ गया था. जीवन में पहली ऐसी कड़क झिड़की किसी ने दी थी. अपने छोटे-से शहर में चौक के पास उसकी छोटी-सी परचून की दुकान थी. यार-दोस्तों में बैठ कर वह बड़े फक्र से कहता––यार, मैं किसी का गुलाम नहीं जो वक्त पर हाजिरी दूं. तुम लोग हो कि दस बजते-बजते जैसे-तैसे खा कर भाग खड़े होते हो. जवाब में दोस्त फब्तियां कसते––शेखी मत बघारो मियां, इस छोटी-सी दुकान पर गज भर की जबान चलाते हो जिसमें मुश्किल से दो हजार का माल होगा.

किसकी नजर लगी–– परिवार को दो वक्त की रोटी देने वाली हर दुकान चलती हुई कहलाती है–– वहीं 'खंखर' हो उठी-स्थिति का अंदाजा लगाया जा सकता है. एक वक्त खाना बनने लगा.. दिन में हलका नाश्ता, फिर भारत की 'पौष्टिक अमृतधारा चाय'. शुरू-शुरू में बच्चों ने प्रतिवाद दिया–– फिर धीरे-धीरे तमाचे, झिड़कियों ने उनके दिमाग बदल दिये. राकेश बीस साल का था. रात-दिन फिल्म में काम करने के सपने पाले हुए रहता. अपने कम कपड़ों के बावजूद अपनी सुगठित देह-यष्टि के कारण वह काफी स्मार्ट दिखाई देता. दूसरी तरफ रीना सोलह की थी. दोनों समय चूल्हे-चौके की इबादत में मशगूल रहती. वक्त मिलता तो पॉकेट बुक सीरीज के उपन्यास पढ़ती और खोई-खोई आंखों से देर तक खुले आसमान को अपलक देखती रहती.

कई दिनों से दुकान बंद रखने का खयाल उस पर हावी रहा. सामान के नाम पर खाली डिब्बे और टूटी-फूटी जंग खाई कुछ वस्तुएं, नहीं, अब और इसकी नुमाइश नहीं करेगा. घनघोर अंधेरी सुबह थी उस दिन. पानी बेतहाशा रात से बरस रहा था. कुहरे में बंद शहर, अंधेरे में गुमशुदा कोठरी की मानिंद लग रहा था. रात भर वह दुकान में रहा. खास दोस्तों के बीच शराब और भूनी मछलियां चलती रहीं. उसने दुकान भीतर से बंद कर रखी थी. पीछे की तरफ वाली खिड़की खुली थी. वहां पहुंचता कौन? गहरा नाला आठों पहर बुदबुदाता रहता. कहकहों का दौर रह-रह कर चलता. बाहर राकेश बुरी तरह भीग रहा था. मगर कान सटाए बड़े मनोयोग से कुछ सुनने का प्रयत्न कर रहा था. कुछ देर तक की दम-साध मेहनत ने असर दिखाया था–– साले को मारो गोली–– बस यही टुकड़ा राकेश के कानों से टकराया. यही पिताजी की आवाज है. वह वापस मुड़ा. काफी भीग चुका था. जूते-चप्पलों को पचाने लायक पानी सड़क पर बह रहा था.

'मां-मां' चीखता हुआ वह चौके में घुस गया था. मा-बेटी रोटी-दाल गले से उतार रही थीं. सब्जी महीने में शायद ही किसी दिन मयस्सर होती थी. जवान बहन की बिलकुल परवाह न करते हुए एक बारगी उबल पड़ा था ––पिताजी दुकान में बैठ कर शराब पी रहे हैं. मैंने अपनी आंखों से देखा है–– मां! इस तरह कब तक चलेगा? हम तबाह हो रहे हैं और पिताजी जश्न मना रहे हैं.

दिन के दस बजे वह लड़खड़ाता हुआ सड़क पर चल रहा था. वर्षा हो रही थी. सवारियां और लोग बहुत कम थे. घर में मृतवत् सन्नाटा था. वह जानता था–– आज कयामत आयेगी. पिछले कई महीनों की चखचख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

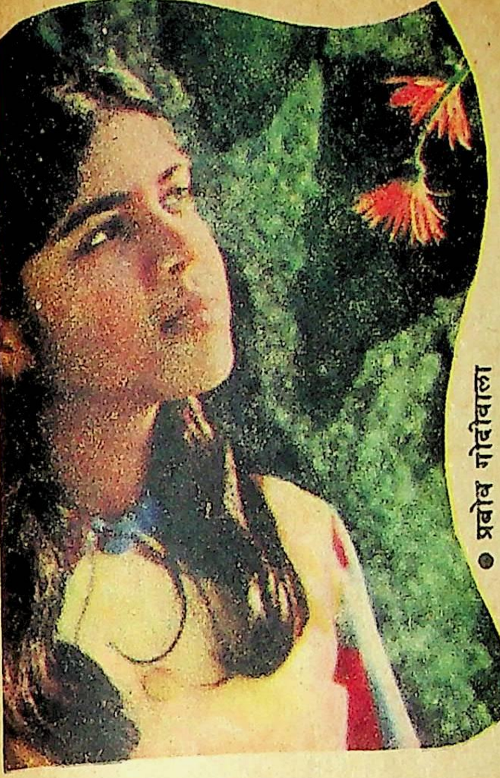

● प्रबोध गोदीवाला

का पूर्ण विराम आज हो जाये. उसने भी सोच लिया था—किसीने चूं-चपड़ की तो वह सिर फोड़ देगा. लोगों ने समझ क्या रखा है उसे?

दरवाजा पत्नी ने ही खोला था. ताज्जुब कि एक शब्द भी मुंह से नहीं निकला. पहला बार बुरी तरह खाली गया. रीना दीनता की प्रतिमूर्ति बनी बरामदे में खड़ी थी. वह देर तक गरजता रहा और सन्नाटे से जवाब-तलब करता रहा. कहीं कोई शब्द नहीं. पत्नी ने होंठ कसम खा कर सी लिये थे इस बार. गजब की रणनीति उसने इख्तियार की थी. हवा में तलवार कब तक भांजता रहता— मर्माहत-सा वह चुप हो गया. मुलायम हो कर, उसने पूछा—बच्चे सो गये. . .खाना -वाना खा चुके?

—रात से एक दाना अन्न नहीं है. पानी पिला कर सुलाया है. स्वर अत्यंत संयत—दूर से आती हुई किसी टूटती आवाज की तरह.

—और तुमने कुछ खाया है? गलती से उसने पूछ लिया था— शायद तेज नशे की वजह से.

—एक मुसकराहट पत्नी के होंठों पर बिजली की तरह कौंधी और राख हो गयी.

उसका चेहरा मुर्दे जैसा हो गया. काश, वह अपनी आंखें देख पाता इस वक्त. वह कट कर रह गया. क्या ही अच्छा होता— पत्नी उस पर थूक कर चली जाती. या वह उसे गोली मार देता. इस वक्त एक ही कमरे में दोनों का एक दूसरे का सामाना करना कितना असह्य और दुखदायी है. फिर कुछ नहीं हुआ. 'क्लाइमेक्स' आ जाने के बाद स्थितियां अपने आप वापस लौट जाती हैं, जैसे बमवर्षक यान अपना काम पूरा करने के बाद खुद-ब-खुद लौटते हैं.

उसके बाद की निरर्थक दौड़-धूप के बाद उसने चुपके से यह संकल्प लिया—राकेश सयाना है. वक्त पड़ने पर वह सब संभाल लेगा. संभालना ही होगा. यही सोच कर उसने दिल को मना लिया. आज रात को वह कलकत्ता चला जायेगा.

★ ★

अभी बरसात की मनहूस दोपहरी बीती न थी. वह हार कर अपने कमरे में लेट गया था. कल से यह कमरा कहां, पत्नी और बच्चे कहां? वह फिर उन्हें देख पायेगा, उसकी आंखें भर आयी थीं. बला से उसे कोई कापुरुष कहे, वह निरुपाय प्रस्थान कर रहा है. पत्नी पड़ोस में चली गयी थी. वह उपन्यास नहीं पढ़ सकती. क्लब जाने का तो खैर सवाल ही नहीं उठता. ऐसे में यह भोंडी औरत दुखों से बिलबिला कर किसी सहेली की शरण लेती है तो हर्ज ही क्या है? कल से इन्हीं पड़ोसियों की सहानुभूति पर उसे जीना है. उसकी आंखों से आंसू बह चले थे.

दिन ढलते ही वह सुनार की दुकान पर था. जमाने दराज की एक हलकी सोने की अंगूठी उसने बढ़ायी—खीझे हुए चेहरे के साथ दुकानदार ने बिना मोल-तोल किये कहा था— चालीस रुपए मिलेंगे. ज्यादा एक पाई भी नहीं दे सकता. उसे बुरा लगा था. रुपए ले कर वह तेज कदमों से घर लौट रहा था.

ठंडी रसोई में गुमसुम पत्नी को बैठे देख कर उसने हंसते हुए कहा—आज भूखों मारने का इरादा है क्या? गुस्सा थूको. लो ये रुपये, सामान मंगवा लो. मैं जानता हूं, तुम्हारे छूते ही रसोई जानदार हो जायेगी. बच्चों का घर है, इस तरह मातम नहीं मनाना चाहिए. भगवान दयालु है कहीं न कहीं से वह इंतजाम कर देते हैं. पत्नी का चेहरा चमक उठा था—शायद उसकी बातों ने बहुत दिनों के बाद उसे छुआ था. इस तरह होशो हवास में बात करना उसके लिए कुछ महीनों से कभी न हुआ था. तैयारी के नाम पर कुछ नहीं. एक सफेद साफ बुश्शर्ट और पैंट और फटा हुआ चमड़े का पोर्टफोलियो बैग. दुकान जाते वक्त यही लिबास रहता था उसका.

पत्नी ने पूछा—कहां चले? खाना तो खा लो. दिन-रात काम की फिक्र करोगे तो क्या हाल होगा? उसका ईमान कांप गया था. चट्टानी संकल्प थरथराता-सा जान पड़ा था.

फिर किसी तरह उसने खुद को संभाला —बस अभी आता हूं. राकेश कहां है?

—वह घर पर रहता ही कब है? यार दोस्तों के साथ बेमतलब घूम रहा होगा. तुम कुछ कहते ही नहीं.

उसने सिर झुकये हुए कहा था— आज उसे डांटूंगा. तुम बच्चों को खिलाओ मैं अभी आया. शायद उसे यकीन था अगर उसने पत्नी की तरफ ताका तो जाना नहीं हो सकेगा.

गाड़ी जब चली तो ऐसा लगा—वह जाग रहा है या दुःस्वप्नों से लड़ रहा है. उसे जड़ भाव से बैठा देख कर एक जटाधारी ने गांजे की चिलम बढ़ायी—लपलप सुलगी हुई आग—उसने एकबारगी वह आग अपने

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

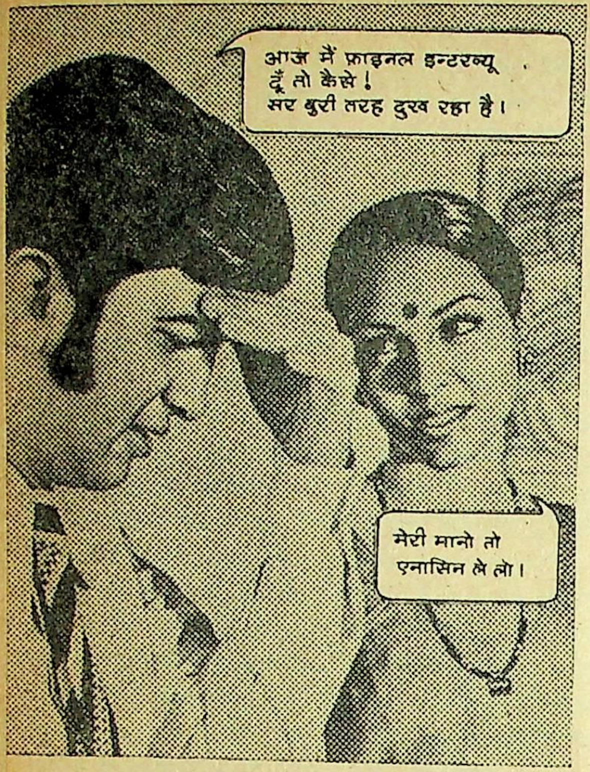

जल्द आराम पाने के लिए तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन लीजिए

ज़ असर—एनासिन में वह दर्द-निवारक दवा ज़्यादा है, जस की दुनिया-भर के डॉक्टर सिफ़ारिश करते हैं। सी लिए एनासिन दर्द से जल्द आराम दिलाती है।

श्वसनीय-एनासिन आपके डॉक्टर की दवाई की तरह वाओं का नपा-तुला सम्मिश्रण है। इसी लिए एनासिन र लाखों लोगों को पूरा भरोसा है।

ासिन बदन के दर्द, दाँत के दर्द, सर्दी-जुकाम और नू की पीड़ा से भी जल्द आराम दिलाती है।

तेज़ असर और विश्वसनीय

एनासिन

रत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक दवा

/8-74

Regd. User of TM: Geoffrey Manners & Co. Ltd.

भीतर उड़ेल ली थी. चिलम की तीसरी आवृत्ति ने उसे सोचने पर मजबूर कर दिया था—वह 'सिद्धार्थ' हो गया है. वह सोचने लगा——सिद्धार्थ उसकी दैनिक परिस्थितियों से नहीं लड़ सकते थे——हार जाते, किसी लायक न रहते.

★ ★

. . . सूटकेस रख कर वह बुत बन गया था. संयोग की बात थी, आस-पास के घरों से कोई बाहर नहीं निकला था— कहीं वह सिपाही लौटता तो बस मौत थी. अपनी मूर्खता पर उसे बड़ा गुस्सा आया. वाकई वह ज्यों का त्यों रहा— आवेश के गुजरने के बाद भीगा-भीगा-सा आर्द्र पुरुष. दरवाजे की सांकल बजाने से पहले उसने बची-खुची हिम्मत बटोरी. आवाज को सहज बनाने के क्रम में उसने पुकारा——राकेश. एक सन्नाटा-सा खिंचा वातावरण में और किसीके आने की आहट सुनाई पड़ी. उसका दिल धड़कने लगा था —— कौन हो सकता है? राकेश नहीं आ सकता – पत्नी ही होगी.

वह सामने खड़ी थी. आश्चर्य, खुशी का कोई भाव नहीं था चेहरे पर एक कृत्रिम सहजतावश बोली— आ गये? पहले तो मुझे यकीन ही न आया – तुम हो सकते हो! . . .

उसे धक्का-सा लगा —— क्या मेरे वापस लौटने की उम्मीद तुमने छोड़ दी थी?

——नहीं, नहीं – वह सकुचाते हुए बोली – इस बीच न कोई चिट्ठी, न तार. इसीसे मैंने समझा जब आओगे खबर हो जायेगी. वह चुप. यह कमबख्त शिकायत क्यों नहीं करती? ताने उलाहने से भरी बातें कहां भूल गयी? जरूर उसके पीछे कोई विस्फोट हुआ है और अब ज्वालामुखी शांत है.

——बच्चे – उसने सिर झुकाये पूछा.

——सो रहे हैं– पड़ोस में बारात आयी थी. थोड़ी देर पहले सब आपस में झगड़ रहे थे.

——और सब ठीक ठाक?

——सब ठीक ठाक है. उसने इस अंदाज में कहा जैसे उल्लू बना रही हो.

——अच्छा रीना कहां है – सो रही है?

——इतने उतावले क्यों हो रहे हो– हाथ-मुंह धो कर कुछ खाओ-पियो. सुबह उठ कर बच्चों की बारी-बारी से शिनाख्त करना.

इस सफाई से उसने भीतर खंजर घुसा दिया कि वह आह भी न कर सका. रास्ते में उसने इन चोटों के बारे में सोचा था. . . पर यहां अब सब खल रहा है. कमरे की हालत देख कर जी और कुढ़ गया. यहां-वहां मैले कपड़ों के ढेर-जूठे बर्तन और भी बहुत सारे गलीज.

चाय आ गयी थी .

——क्या बात है सुनीता? पहेलियों के अंदाज में बातें करोगी तो गला दबा दूंगा. साफ-साफ बताती क्यों नहीं? रीना मर गयी क्या? यह कहते हुए उसका जी धक् से कर गया.

——मर जाती तो ठीक. तुम्हारे गायब होने के दूसरे हफ्ते वह सहेली के घर गयी. राकेश छोड़ने गया था. वहीं लता के यहां– शर्माजी की बेटी. हम उनके घर वालों पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भरोसा नहीं करते तो किस पर करते! वहां से लौटी ही नहीं. लता कहती है कि उसने साथ चलने की जिद की. अपने छोटे भाई को साथ भेजा भी पर रीना ने जबर्दस्ती कह-सुन कर उसे रास्ते से लौटा दिया. उस लड़के ने भी यही बात कही. कहां गई— कुछ पता नहीं. राकेश ने जहर तक खाने की धमकी दी. उसे मैंने समझाया कि आफत अपने आप टल गयी बेटा तुम नाहक जान क्यों देते हो? वह चुड़ैल-बेशर्म इसी काबिल थी. हमारे मुंह में कालिख पोतने के लिए ही उसने जन्म लिया था.

वह तिल-तिल कटता जा रहा था. अभी पत्नी के आवेश पूर्ण संवाद जारी थे— जानते हो, एक दिन मेरे बहुत पूछने पर राकेश ने बताया था कि एक लड़के से उसका मेल जोल था. तुम्हारे रहते भर में यह सब चल रहा था और तुम्हारी आंखें बंद रहीं.

—तुम्हारे कहने का मतलब है यह सब मेरी वजह से हुआ है यकायक वह सुलग उठा.

—और क्या – लगा, रगों में भूचाल-सा आ गया. उसके हाथ उसकी गरदन को जकड़ने ही वाले हैं. फिर कैसे यह जलजला गुजर गया उसे नहीं मालूम. पत्नी सहम उठी थी.

—विश्वास करोगे? राकेश की आंखों में पहली बार मैंने बेबसी के आंसू देखे, वह बहुत निराश हो कर मेरे पास आया ——मां, अब क्या होगा? मैंने समझाया, अच्छा ही होगा, हिम्मत से काम लो, बेटा. एक रोज सामने वाले बैंक बाबू की बीवी आयी – वह भी पहली बार. बड़ी कुढ़न हुई. घर की बखिया उघड़ जायेगी. खैर, सोचा हुआ गलत निकला. कहने लगीं – राकेश लाटरी टिकटों की एजेंसी क्यों नहीं ले लेता. छोटे पैमाने से काम शुरू करे. फिर अपना स्टाल जमा ले. जब तक कुछ करता नहीं, यह शगल बुरा नहीं. मैंने भी देखा, पते की बात कर रही हैं. चंद, अनाथ लड़का जिसने पैरों पर खड़े होने के लिए क्या कुछ नहीं किया— आज एक रिक्शे पर लाटरी की टिकटें लिए दिन-रात फिरता है. मैंने हामी तो भर दी फिर खयाल आया यहां खाने के लाले पड़े हैं एजेंसी के लिए पैसे कहां से आयेंगे? मेरी चुप्पी वह ताड़ गयीं. जानते हो, एजेंसी के लिए रुपए देते हुए उन्होंने कहा— बहन, उधार दे रही हूं. जब हों तब लौटा देना. आदमी एक दूसरे के काम न आये तो उसे जानवर ही कहना चाहिए था. मैं अवाक रह गयी थी, क्या दुनियां में ऐसे लोग भी हैं? तुम्हारे राकेश ने तब से बड़ी मेहनत की है. आज भी उसीकी बदौलत दोनों वक्त चूल्हा जलता है. बच्चों को पानी पी-पी कर सोना नहीं पड़ता. . .

वह जड़वत सुनता रहा. वह इस लायक नहीं रह गया था कि सवाल जवाब करे. घुटन का बर्फीला सैलाब उसे चारों ओर से दबोचे था. पत्नी की ओर आंखों की टकटकी मरे हुए पक्षी के समान थी—— शायद अभी पत्नी के आवेश की लहर बची थी— विनय मुद्रा में बोली —— देखो, राकेश से रीना की बात मत करना. उसका दिल टूट जायेगा. . .

उसने सुना या नहीं वही जाने. □□□

द्वारा कृष्णकांत प्रसाद, कोयरी बारी, धर्मशाला रोड, गया

femina विशेष उपहार अंक १९ दिसंबर '७५ अंक

बडे दिन का उपहार
आपके
बजट के
अनुसार

इस साल अपने मित्रों को आप एक सुखद आश्चर्य भेंट दीजिए—हर बार की तरह वही घिसा-पिटा नीरस उपहार नहीं. दोस्तों को आप कोई ऐसी चीज दीजिए जो चमक-दमक रखती हो, जो टिकाऊ हो और जो प्रसन्नता लेकर आये, और आपकी जेब को भी जो भारी न पड़े.

फेमिना के उपहार-परिशिष्ट में से चुनाव कीजिए. अधिकतर उपहार ५० रु. से कम मूल्य के.
आपके सामर्थ्य की सीमारेखा में
बागवानी के लिए पौधे, सुगंधित सिगार, सुनहरी मछली... सब वर्कस्
खरी-खोटी चीजें
चुहल भरे कोस्टर्स, मनोरंजक पोस्टर्स, नयी चलन के हाल्टर ब्लाउज, पिस्तौल, टार्च.
त्योहार की पसंद
अंगूर की शराब, मद्य ब्रांडी, चाकलेट, रम केक.
हमेशा के लिए यादगारें
मुलायम कालीन, आलीशान मेजपोश, पुरानी अमूल्य तस्वीरें, क्रिस्टल के पात्र
साज-शृंगार के लिए
सरकते-सरजते स्कार्फ, चांदी की पायल, जयपुरी आभूषण, पटसन के झोले...
साथ ही यह जानकारी कि उपहार कूपन, पुस्तक उपहार शुल्क,
संगीत समारोहों, फिल्म समारोहों और टेस्ट मैचों के सीजन टिकट कहां से प्राप्त करें?
इसके अलावा
बडे दिन की कहानी
कैसे इस त्योहार से जुड़े रीति-रिवाजों का जन्म हुआ?
क्या मलेरिया वापस आ गया है?
हां, पहले से भी ज्यादा प्रबल रूप का.
चिर-प्रतीक्षित प्रतियोगिता के परिणाम.
नारी की प्रतिष्ठा को कैसे सुधारा जाये?
व अन्य सभी स्थायी स्तंभ

femina
हर पखवाड़े में नयी उमंग नयी तरंग

टाइम्स ऑफ इन्डिया प्रकाशन

ARMS-BCP-38-713-HN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नये सफेद गुलाब

• उर्मि कृष्ण

चेतन का बायां घुटना सो गया था. दोनों टांगों में वह भारीपन और अकड़ाव महसूस कर रहा था. बिट्टू ने अपनी छोटी-छोटी बांहें उसकी गर्दन में डाल रखी थीं. और सिर उसकी छाती पर टिकाया हुआ था. चेतन ने उसे पीठ पर दोनों हाथों से थामा हुआ था. साथ वाली खाली सीट होने पर उसने सोचा था कि बिट्टू को वहां लिटा दे. पर दुःखी और उदास बिट्टू की नींद में विघ्न डालने को उसका मन नहीं माना.

––अंकल मम्मी क्यों रोती हैं ?

––अंकल हम मम्मी के पास फिर आयेंगे न ? . . . कब?

––अंकल, आनंद अंकल अच्छे नहीं हैं.

बस छूटने के बाद भी बिट्टू इसी तरह के प्रश्न दुहराता रहा था, और अंत में रोने लगा था. फिर रोते-रोते ही सो गया था. चेतन उसे दुलराता––बहलाता रहा था. पर उसका मन भी बार-बार भर आता था. बस पर उन्हें छोड़ने आयी भाभी का पथराया हुआ भावहीन चेहरा . . .उसका बिट्टू को खूब कस कर चिपटाये रखना और बार-बार उसका मुंह, माथा और सिर चूमना . . . या बिट्टू के प्रश्नों पर भी मौन ही रहना. जैसे वह नींद में चल रही हो, और फिर बिट्टू को उसे सौंपते समय उसके चेहरे पर पीड़ा की हजारों रेखाओं का एक साथ उभर आना . . . भाभी के चेहरे पर पीड़ा का वैसा जाल उसने इससे पहले कभी नहीं देखा था. भाई की मृत्यु का तार पढ़ते समय भी नहीं . . . तब तो भाभी एकदम पत्थर हो गयी थी.

इन आठ-दस महीनों में सब कुछ कितना बदल गया है––उसके लिए, बाऊजी के लिए, मां के लिए, भाभी के लिए. बिट्टू के लिए . . .वह मन में कितना उछाह ले कर गया था . . . खूब घूमे-फिरेगा, मौज करेगा, सेहत बनायेगा और साथ-साथ भैया उसे कंपीटीशन की तैयारी कराते रहेंगे. उसे चुना जाना लगभग निश्चित लगता था. इतनी अच्छी तैयारी और फिर भैया की पहुंच और संपर्क. सबसे बड़ी बात यह कि भाभी से उसकी खूब पटती थी. इतनी कि भाभी के पास जा कर रहने की बात सुन कर ही वह उछल पड़ा था.

कितने सुखद लगते थे वे क्षण. भाभी का टेबल पर चाय का कप रख कर जाना. बनावटी रोष में उसे रोज सुबह जगाना. कभी पानी के छींटे मारना या कभी बिट्टू से कान खिंचवाना और भाभी का शशि-रश्मि रूप, जो उसकी आंखों में अब तक बसा है, जरा नहीं धुंधलाया. सजी-सजी, सुंदर भाभी के सम्मुख नींद से आंखें खोलना चेतन को बहुत अच्छा लगता था. इसीलिए भाभी उसे झकझोर कर कह जाती––मैं तैयार होती हूं. तब तक तुम भी तैयार हो जाओ. पर चेतन सोता ही रहता.

––भई तंग कर दिया मुझे तुम्हारी नींद ने, चेतन.

––ऊं हूं, सोने दो ना.

––अपनी बीवी को ऐसे सिरहाने बैठा कर सोते रहना, तब बतायेगी .

भाभी का मधुर परिहास चेतन के रोम-रोम को गुदगुदा जाता. वह ऐसे क्षण एकटक भाभी को देखता रहता. ओठों तक कहने को शब्द आता––'क्या तुम जैसी पत्नी मिल सकेगी, भाभी?' पर ऊपर से मजाक का उत्तर मजाक में ही देता,

––भाभी जब तुम आधी तैयार हो लो तब मुझे जगाया करो. तुम्हें तैयार होने में घंटा भर लगता है और मुझे दो सेकंड.

––बस-बस रहने दो. जब देखती हूं हाथ में कंघा-शीशा लिए नजर आते हो.

भाभी हंसती हुई चली जाती. उसकी देह से फूटती महक कमरे के कोने-कोने में भर चेतन को और अधिक मत्त बना देती. उसका सोने-सा रूप, कोयल-सी आवाज, उन्मुक्त मजाक, सभी में एक ऐसा मोहक जाल था जिसने चेतन को बांध लिया था.

उस दिन वे दोनों लॉन में बैठे चाय पी रहे थे. उसको एकटक अपनी ओर देखते पा कर भाभी ने मजाक में कहा था––ऐसे क्या देख रहे हो चेतन? नीयत तो ठीक है?

भाभी की खुली मजाक पर वह मुसकरा दिया. पर भीतर-ही-भीतर लज्जित-सा हो उठा. कत्थई रंग की साड़ी पर लगी सफेद किनारी में भाभी खिल रही थी. उसे सदा गहरे रंग पहनने पसंद थे जो उसके गौर वर्ण को दूना उभार देते थे. जी में तो आया था उलट कर वह भी कोई जोरदार मजाक कर दे, पर तभी खतरे का सायरन बज उठा. भाभी का खिला चेहरा मुरझा कर पीला हो आया. खाइयां खुदी हुई थीं. पर दिन में वे लोग कभी खाइयों में नहीं घुसते थे. बल्कि प्रायः घरों से निकल कर आकाश में जहाजों को ढूंढ़ने लगते.

★ ★

सीतापुर के स्टैंड पर झटके से बस रुकी तो बिट्टू कुनमुनाने लगा. घुटन बढ़ जाने से वह जाग उठा. चेतन उसे ले कर बाहर निकल आया कि टांगें सीधी कर ले. बिट्टू को उसने चाकलेट बार ले दिया, जो हमेशा बड़े चाव से खाता था. बिट्टू ने उसे ले लिया पर बोला कुछ नहीं. न मुसकराया, न ही उसे खाना शुरू किया. उसकी आंखों में अब तक उदासी भरी थी.

लड़ाई के दौरान बिट्टू कितना उत्तेजित रहता था. वह अपनी सैनिक वर्दी पहने, एयरगन लिये जिस तिस पर ठांय-ठांय करता फिरता. हवाई हमले के दौरान भी वह घबराता नहीं था. भाभी उसकी सुरक्षा के लिए अकुलाती. उसके पीछे-पीछे भागती फिरती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर वह खंदक में जाने को तैयार न होता. चेतन के साथ बाहर ही रह कर आसमान में जहाज तलाश करता.

भाभी काफी डर जाती थी. चेतन, बिट्टू और अपने से भी अधिक चिंता उसे भैया की थी. बीच में एक दिन भैया के तीन पत्र एक साथ आये थे. उसके बाद कोई नहीं. पूरी कॉलोनी में ऐसा ही हाल था. अधिकांश अफसर विभिन्न मोर्चों पर गये हुए थे. पीछे थीं महिलाएं, बच्चे या परिवार के अन्य व्यक्ति. अपने पूरे जोश-खरोश और राष्ट्रीय उत्साह के बावजूद सहमे-सहमे और चिंतित. अदृष्ट की आशंका जैसे सबको भीतर-ही-भीतर खाये डाल रही थी. दिन में पत्नियां झुंड बना कर घर-घर जातीं. सूचनाओं और कुशल-मंगल का आदान-प्रदान होता. लगभग नित्य ही किसी-न-किसी घर में तार आता और वहां मातमी भीड़ जुड़ जाती.

रोज घर से मां और बाऊजी की चिट्ठियां आतीं. चंदनपुर पर भी बमबारी हो रही थी और उसके वहां चले जाने पर मां-बाऊजी को काफी धीरज बंधता. पर भाभी और बिट्टू को अकेले छोड़ जाने की वह कल्पना भी नहीं कर सकता था. वह मां-बाऊजी को रोज सांत्वना भरे पत्र लिखता. भैया जाते समय कह गये थे कि वह मां-बाऊजी के पास चला जाय. सावित्री के लिए उतनी चिंता की बात नहीं है. वैसे वह भी भाभी के साहस से अपरिचित न था. पर ऐसे मौके पर उसे अकेले छोड़ने का प्रश्न ही नहीं उठता था. और फिर एक दिन उनके दरवाजे पर भी तार वाले ने दस्तक दी थी. तार वाले को देखते ही वह सब कुछ समझ गया था . . . भाभी भी. भाभी का बदन कांपने लगा था. पर वह रोयी नहीं थी. निढाल-सी हो कर सोफे में धंस गयी थी और उसकी आंखें शून्य को ताकने लगी थीं. उनके यहां भी भीड़ इकट्ठी होने लगी थी. कुछ आने वाली स्त्रियां रो भी पड़ीं. पर भाभी बुत बनी बैठी रही. वह जब बिट्टू को उसकी गोद से ले कर अलग लिटाने लगा था तब सहसा भाभी फफक-फफक कर रो पड़ी थी. चेतन ने भाभी के हाथ मजबूती से थाम लिये थे. वह कुछ भी कह नहीं पाया था. भाभी बहुत देर तक रोती रही थी और वह केवल चुपचाप उसके कंधों पर हाथ रखे रहा था या उसके हाथ थामे रहा था.

मां और बाऊजी के आने पर घर में कुहराम मच गया था. पर भाभी की आंखों के आंसू शायद बहुत लजीले थे जो सबके सामने नहीं निकलते थे. उसने भाभी को छिप कर रोते देखा था. वह मौन, निःशब्द रुदन चेतन को कंपा देता था. ऐसे में वह बढ़ कर उसके हाथ थाम लेता था. उसे धीर बंधाने के सहारे शायद इससे उसका अपना त्रास भी कम होता था. आज यह जान पड़ता है भाभी भी उसके सामने रोने में संकोच नहीं करती थी.

बिट्टू हाथ में चाकलेट का बार लिये फिर ऊंघने लगा था. चेतन ने उसे गोद में सुला लिया और सिर पर थपकियां देने लगा. थपकियां देता उसका हाथ

• मुरलीधर जालान

धीरे-धीरे कब रुक गया उसे ध्यान नहीं. आज जिस घर को भाभी छोड़ आयी है, उसीको उसी दिन न छोड़ने पर वह कितनी दृढ़ थी.

मां और बाऊजी ने अपने साथ चलने के लिए भाभी को कितना कहा था पर भाभी ने शांत ठंडे स्वर में कह दिया था कि वह अभी यहीं रहेगी. भविष्य के लिए किसी निर्णय पर वह अभी नहीं पहुंची है. वे उसके स्वभाव से परिचित थे. भाभी के मौन को देखते हुए उन्हें अधिक कहने का साहस भी नहीं हुआ था. चेतन के लिए भाभी ने इच्छा की थी कि वह अभी वहीं रह जाय. उसे प्रतियोगिता की तैयारी के अतिरिक्त और कुछ काम भी न था. मां-बाऊजी उसे कह गये थे कि वह बहू को समझाने का प्रयत्न करे कि वह उन्हीं के साथ रहे. इस आग्रह के पीछे और कितने दबाव काम कर रहे थे, यह चेतन जानता था. पर उसे इस विषय में सोच कर भी ग्लानि होती है. वैसे यह सच था कि बाऊजी बिट्टू को बेहद प्यार करते थे. वह उनका एकमात्र पौत्र था. वह भी जेठे लड़के की संतान. पर भाभी के लिए यह बात उतनी गण्य न थी. भाभी ने अपने पीहर जाने से भी इनकार कर दिया था. उससे यह बात छिपी नहीं थी कि जीवन का भार ढोने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए उसे तुरंत सक्रिय हो जाना होगा. भैया की पेंशन का अभी कुछ निश्चित नहीं था. फंड से कितने दिन चल सकता है? भाभी पीहर में भी और अब यहां भी अभिजात रहन-सहन की अभ्यस्त थी. चेतन भी भाभी के इससे वंचित होने की कल्पना नहीं कर पाता था. ऊपर से बिट्टू का दायित्व . . . क्वाटर भी शायद देर-सबेर छोड़ना पड़े.

★ ★

उस दिन कैप्टन आनंद आये थे. मोर्चे से लौटते ही सबसे पहले वे उनके यहां आये थे. चेतन उन्हें भाई के घनिष्ठ मित्र के रूप में जानता था. सदा के गंभीर कैप्टन आनंद का चेहरा आज अधिक गंभीर हो उठा था. वे तीनों देर तक बैठे रहे थे. चुपचाप. उठते समय भाभी के कंधे थपथपाकर उन्होंने केवल इतना कहा था कि सावित्री, साहस रखो, बहादुर लड़की बनो. आज चेतन ने पहली बार किसी के सामने भाभी की आंखों में आंसू देखे थे. कितने ही लोग आ कर और आंसू बहा कर चले जाते थे पर भाभी निर्विकार मुद्रा में बैठी रहती, पाषाण-प्रतिमा-सी. मिस्टर आनंद की संवेदना ने शायद भाभी को कहीं गहरे में छू लिया था. नहीं तो सांत्वना के लंबे-लंबे भाषणों पर भी चेतन ने भाभी की आंखें सूखी ही देखी थीं.

कैप्टन आनंद रोज आने लगे थे. वे और भाभी चुपचाप बैठे रहते. बिट्टू उनके बीच खेलता रहता. भाभी ने अब काली साड़ी पहनना छोड़ कर सफेद पहनना शुरू कर दी थी. कभी-कभी शाम के समय वह उसे किसी हलके रंग की साड़ी में देखता. पर बिना बिंदी का उनका सूना चेहरा देख कर उसके मन में कहीं एक कील-सी चुभ जाती. मेरून रंग की साड़ी से लिपटा, बिंदी लगा भाभी का चेहरा अकसर उसकी आंखों में भर जाता. चेतन को यह सोच कर दुःख होता कि भाभी का वह पुराना रूप शायद अब वह कभी नहीं देख सके.

कैप्टन आनंद प्रायः शाम को आ जाते. अकसर वे तीनों गुमसुम बैठे रहते. कोई कुछ न बोलता. बीच में नौकर आ कर चाय रख जाता या फिर बिट्टू कोई फरमाइश ले कर आ जाता. बिट्टू आता तो आनंद उसे गोद में उठा लेते और खिलाने लगते.

भाभी की ओर से आनंद प्राविडेंडफंड, पेंशन आदि के कागजात भरवा कर भिजवा रहे थे. उनकी राय थी कि भाभी को नौकरी कर लेना चाहिए. इससे भविष्य के लिए आधार बनेगा और मन भी दूसरी ओर लगेगा. चेतन का भी यही मत था और आनंद भाभी के लिए नौकरी खोजने में लग गये.

भाभी के मन पर जमी बर्फ की पर्त पिघलने लगी थी. वह अब कभी-कभी स्वयं नौकर को साथ ले खरीद-दारी को चली जाती थी चेतन के साथ टहलने निकल जाती. कैप्टन आनंद आते तो वह उनका स्वागत करती और वे बातों में लग जाते. कभी कोई हंसी की बात होती तो उसके चेहरे पर फिर मुसकराहट के फूल खिल उठते. वे लोग एक दो पिक्चरें भी देख आये थे. चेतन इससे काफी कुछ आश्वस्त और निश्चित अनुभव करने लगा था.

★ ★

मार्च का अंत चल रहा था. हवा में वह सर्दी न रही थी. धूलभरी तेज हवाएं चलती रहतीं और छोटा-सा लॉन झरते हुए सूखे पत्तों से भर जाता. अब शाम को खुले में लॉन-चेयर्स डाल कर बैठना अच्छा लगता. शाम की सुनहरी धूप और तेज हवा . . ., वे वहीं चाय मंगा लेते. चाय पीते हुए वह जब भी भाभी की ओर देखता वह उसे सूखे झरते हुए पत्तों की ओर देखती नजर आती. फिर कभी उसकी आंखें ऊपर पेड़ की डालियों को देखने लगतीं. डालियों के सिरे पर नन्हीं-नन्हीं कोपलें आ रही थीं. उन्हें देखना चेतन को भी अच्छा लगता.

चेतन चाय लेने के बाद उठ जाता, पर भाभी और आनंद वहीं बैठे रहते. अक्सर अंधेरा घिरने के बाद तक भी. दूर से उनकी मुद्राओं से लगता कि वे धीमे स्वरों में बातें कर रहे हैं. या वे लॉन में ही धीरे-धीरे टहलने लगते. चेतन ने कई बार नोट किया कि कभी सहसा वह उनके सामने पड़ जाता है तो वे यकायक चुप हो जाते हैं. कोई नया विषय छेड़ना चाहते हैं पर स्थिति सहज नहीं हो पाती. तब से वह ध्यान रखने लगा था कि उनके एकांत में बाधा न बने.

सफेद गुलाब की क्यारियों में फूल खिलने लगे थे. भाभी को सफेद गुलाब बेहद प्रिय था. चेतन कुछ फूल तोड़ कर भाभी के पास ले गया—भाभी लो तुम्हारे गुलाब खिल आये हैं. जूड़े में लगाओ न. भाभी ने मुसकरा कर उससे फूल ले कर कानिस पर रख दिये.

शाम को आनंद के लौटने पर भाभी भीतर आयी तो उनके जूड़े में सफेद गुलाब सजे हुए थे. चेतन की दृष्टि सहसा कानिस की ओर उठ गयी—वहां सुबह वाले फूल वैसे के वैसे धरे थे.

चेतन के दायें पैर में झुनझुनाहट होने लगी थी इसलिए उसने बिट्टू को उठा कर बायें पैर पर सुला लिया. दूसरा पैर सीट के नीचे लटका लिया. किसी बड़ी नदी के पुल पर से बस निकली तो दो क्षण के लिए चेतन का ध्यान बाहर खिंच गया. नदी समाप्त होते ही वह फिर अपने में लौट आया.

उस दिन वह अचानक भाभी के कमरे में घुसा तो उसे समझ नहीं आया वह खड़ा रहे या चला जाय. मिस्टर आनंद को नमस्ते करने का भी उसे ध्यान न रहा. बिट्टू अपनी एयरगन से खेल रहा था. कैप्टन आनंद भाभी के गले में बांहे डाले उन्हें बिट्टू का खेल दिखा रहे थे. (आज कितने लंबे अर्से के बाद चेतन ने भाभी के चेहरे पर खिली मुसकान देखी थी) इस समय भाभी से जब उसकी आंखें मिलीं तो मुसकराना चाह कर भी वह मुसकरा नहीं सका था.

उस दिन शाम तक भाभी के सामने नहीं गया. अंधेरा होते-होते उसका मन भाभी के लिए अधीर होने लगा. वह भाभी के कमरे तक आया. कमरे में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंधेरा भर जाने पर भाभी ने बत्ती नहीं जलाई थी. दरवाजे के पास लगे स्विच को उसने दबा दिया. भाभी टेबल पर सिर रखे औंधी बैठी थी. चेतन ने जा कर जब उसका सिर उठाया तो सारा चेहरा आंसुओं से तर था. उसने भाभी के दोनों हाथ कस कर पकड़ लिये. देर तक चुपचाप खड़ा रहा. नौकरानी बिट्टू को दरवाजे पर छोड़ गयी तो चेतन ने उसे उठा कर भाभी की गोद में बैठा दिया. उसका विचार था बिट्टू के गोद में आने पर भाभी कुछ बहल सकेगी. पर उसे सीने से लगा भाभी और अधिक फफक पड़ी.

अब भाभी जब बिट्टू को सीने से लगाती उसकी आंखें भरी होतीं. जब बिट्टू खेलता रहता तो वह उसे देर तक एकटक देखती रहती. कई बार खेलते हुए या सोते हुए बिट्टू को उठा कर वह अपनी छाती से चिपटा लेती.

कई बार चेतन देखता, भाभी अलमारी की अपनी सारी साड़ियां फैला कर बैठी है. उन्हें देखती रहती है और फिर रख देती है. अपनी शादी की साड़ी को हाथ में ले कर सहलाती, देर तक देखती रहती और फिर एक उदासी से घिर कर उसे जहां की तहां रख देती. कई बार अपने गहनों के डिब्बों को खोलती, देखती और धीरे से रख देती. वह घर की सभी वस्तुओं को घंटों खड़ी देखती रहती. कभी हलके से उन पर हाथ घुमाया करती और कभी किसी से सिर टिका आंखें बंद किये देर तक खड़ी रहती. उसके ऐसे व्यवहार से चेतन डर-सा जाता.

★ ★

उस दिन दोपहर के खाने के बाद भाभी ने उसे अपने कमरे में बुला कर कहा था—चेतन, तुमसे एक बात कहनी है भैया, भाभी के कांपते स्वरों से चेतन चौंक उठा.

—इस घर में उनके अतिरिक्त तुम ही मेरे सबसे अधिक अपने रहे हो. तुमने सदा मुझे समझा है. आशा है अब भी गलत न समझोगे.

—कहो तो भाभी, चेतन के शब्द बहुत धीमे-से निकले थे.

—और मुझे तुम्हारी सलाह भी चाहिए, चेतन. मैं गलती पर होऊं तो मुझे वैसा कह देना. रोक देना, पर घृणा की दृष्टि से न देखना.

—कैसी बातें करती हो भाभी ?

भाभी कुछ क्षण मौन रही फिर धीमे से बोली—मैं कैप्टन आनंद से विवाह कर रही हूं.

चेतन को अपनी छाती के भीतर गोला-सा उठता अनुभव हुआ. वह कुछ बोल नहीं पाया. सिसकी की आवाज से ही उसकी निगाह भाभी की ओर गयी. उसके चेहरे पर आंसुओं की धाराएं बह रही थीं. आंसू और पीड़ा की असंख्य रेखाएं—चीनी के बर्तनों पर पड़ी—'क्रेजिंग' जैसी.

चेतन ने उसके आंसू पोंछने के लिए हाथ बढ़ाया. पर फिर उसे कंधे से लगा लिया उसका शरीर सिसकियों से हिल रहा था. चेतन उसकी पीठ भी न सहला सका, केवल कंधे थामे रहा.

शांत होने पर भाभी ने कहा था—चेतन अकेली स्त्री बहुत कमजोर होती है भैया! पढ़ाई-लिखाई अपनी जगह ठीक है. पर . . . आनंद से आशा है कि वह बिट्टू को भी प्यार दे सकेंगे. उलझनें तो इसमें भी बहुत-सी हैं . . . . पर और कौन-सा रास्ता सरल है?

चेतन ने कहा—भाभी मैं तुम्हें गलत नहीं समझ रहा.

शाम को कैप्टन आनंद आये थे.

चेतन रोज की तरह उनका स्वागत करने को उठा. उसने उनसे हाथ मिलाया, पर वह स्वयं अपने हाथ की पकड़ ढीली अनुभव कर रहा था. वह एक क्षणांश को ही उनसे आंखें मिला सका था. उसने अपने को बहुत अस्तव्यस्त अनुभव किया और बहाना बनाकर जल्दी से उठ आया.

बाद में उसे अपने आचरण पर झेंप और झुंझलाहट हुई थी. उसने कोई अभद्रता नहीं की—यह ठीक है, पर वह सहज क्यों नहीं रह पाया. आखिर भाभी और आनंद क्या बुरा कर रहे हैं? यह प्रश्न सारी रात उसको मथता रहा था. यह उसके सामने आरंभ से ही बहुत साफ था कि इसमें कहीं ऐसा कुछ नहीं जिसे बुरा कहा जा सके. उसने खूब सोच कर भी देख लिया था . . . पर. फिर वह इसे सहजता से क्यों नहीं ले पा रहा? क्यों वह उद्विग्न हो उठा है? भाभी के प्रति तो नहीं पर आनंद के प्रति वह कहीं गहरे में विरक्ति अनुभव कर रहा था और इसीको ले कर अपने ऊपर खीझ रहा था कि उसके और आनंद के मध्य जो एक अदृश्य पारदर्शी दीवार उठ आयी है, वह बहुत प्रयत्न करने के बावजूद गिर नहीं रही. वह आनंद से अब भी मिलता और बोलता था पर उसे अपना व्यवहार स्वयं उखड़ा-उखड़ा लगता. परिवार के घनिष्ट मित्र के रूप में आनंद से पहले जैसी आत्मीयता क्यों नहीं रही थी? उसने मां और बाऊजी को भाभी का निर्णय और अपनी सहमति की सूचना दे दी थी. उन्होंने अपना घोर विरोध तो प्रकट किया था पर साथ ही अपनी विवशता से समझौता भी कर लिया था.

सिविल विवाह के समय वह भाभी के साथ कचहरी गया था. भाभी की ओर से केवल वही उसके साथ था. आनंद ने कुछ चुने हुए मित्रों को एक होटल में पार्टी दी थी. भाभी बहुत साधारण से शृंगार में इसमें सम्मिलित हुई थी. आज उसके बिंदी लगे चेहरे को चेतन बार-बार देख लेता था. उसने नोट किया था भाभी बड़े प्रयत्न से अपने चेहरे पर मुसकराहट बनाये रख रही है.

परीक्षा को कुछ ही दिन शेष थे तथा भाभी के विशेष आग्रह पर चेतन भैया के उसी सरकारी क्वाटर में रुक गया था.

आनंद के साथ भाभी को विदा कर जब वह इस घर में घुसा था तो उसके पैर आगे नहीं बढ़ रहे थे. घूमने-फिरने के शौकीन बिट्टू का बार-बार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे टा-टा करना, भाभी का भरी आंखों से उसकी ओर देखना तथा आनंद का हाथ मिला कर उसकी पीठ थपथपा देना देर तक याद आता रहा. वह बगीचे में गुलाब के फूलों को तब तक खड़ा देखता रहा था जब तक कि अंधेरे ने उन्हें छुपा न दिया. जब बोझिल कदमों से वह अंदर घुसा तो यह पांच कमरों का मकान उसे किसी मुतहे महल से कम न लगा था. वह पलंग पर औंधा पड़ गया और माथा तथा नाक तकिये पर रगड़ता रहा था.

चेतन ने उस दिन पक्का सोच लिया था कि कल से वह किसी और जगह रहने चला जायेगा. . .पर इतनी जल्दी कमरा मिलना आसान कहां था.

कल तक जो भाभी थी वह आज मिसेज आनंद हो गयी है.

वह फिर भी सावित्री को भाभी ही कहता रहा था. भाभी तथा मिस्टर आनंद के बार-बार कहने पर भी वह उनकी कोठी में रहने नहीं जा सका था. हां कभी नित्य और कभी एक-आध दिन के अंतर से वह भाभी को मिल आता था. बिट्टू के साथ खेल आता था.

भाभी की सामाजिक स्थिति ही नहीं बदली थी और भी सब कुछ बदल रहा था. भाभी भैया के घर से एक भी वस्तु साथ नहीं लायी थी. यह सामान उन्होंने घर मां के पास पहुंचाने को कहा था, या जैसा भी वह चाहें करें. भाभी अपने कपड़े तक नहीं लायी थी. कई कीमती साड़ियां उन्होंने आया को दे डाली थीं. वह भाभी को नया घर सजाते देखता तो उसे सब याद आ जाता.

बिट्टू को नये घर में आना अच्छा लगा था. उसने पूछा था--मम्मी हम आनंद अंकल के घर क्यों जा रहे हैं? भाभी ने कहा था, बेटे अब इन्हें अंकल नहीं कहते, ये तुम्हारे नये डैडी हैं.

बिट्टू ने अपनी नजरें आनंद की ओर उठा कर बड़ी मासूमियत से झुका लीं. वह यह तो जान चुका था कि उसके डैडी अब नहीं आयेंगे, पर यह नये डैडी वाली बात उसकी समझ में नहीं आयी थी.

आनंद ने बढ़ कर बिट्टू को गोद में उठा कर चूम लिया--बिट्टू हमारा राजा बेटा है!

बिट्टू उनकी गर्दन में बाहें डाले-डाले बोला--अंकल अंकल हैं, डैडी नहीं हैं. भाभी और आनंद दोनों का मुख एकदम म्लान हो आया था.

★ ★

यों सब ठीक चल रहा था, पर कभी-कभी भाभी का व्यवहार कुछ विचित्र-सा हो उठता. कभी वह सारा सारा दिन छाया की तरह बिट्टू के संग-संग लिपटी रहती. उसके बाल सहलाते--सहलाते वह न जाने कहां खो जाती. उसका मुख विषाद की घटाओं से घिर जाता, किंतु सहसा वह उसे आया को सौंप देती कि उसे उनके पास से ले जाय. ऐसे में वह बिट्टू के रोने--बिलखने पर भी उसे पास नहीं फटकने देती. भोला बिट्टू अपनी मम्मी के इस मूड-परिवर्तन पर रो-धो कर रह जाता. पर चेतन और आनंद सावित्री की इस दशा पर चिंतित थे. आनंद अपनी ओर से बिट्टू का पूरा-पूरा ध्यान रखता. वह एक पिता का कर्तव्य पूरी ईमानदारी से निभा रहा था. पर भाभी . . .!

एक दिन भाभी सहसा बिट्टू पर, जो उनकी अथाह ममता का केंद्र था, बिगड़ उठीं. बिट्टू इस अप्रत्याशित आघात से बुरी तरह चिंघाड़ कर रो पड़ा. चेतन ने उसे भाभी से छुड़ाया तो भाभी भी फूट पड़ीं और सोफे में धंस कर फफकने लगीं.

बिट्टू के बाद चेतन ने भाभी को चुप कराया. वह भाभी से इस विषय पर बात करना चाहता था, पर क्या कहे और कैसे कहे, उसे कुछ भी सूझ नहीं रहा था.

फिर भाभी स्वयं ही भीगे कंठ से बोलीं--बिट्टू को तुम्हीं ले जाओ भैया, नहीं तो मैं पागल हो जाऊंगी . . .बाबूजी और अम्माजी भी बिट्टू को मांग रहे थे न. इतना कहते-कहते उन्हें फिर जोर की रुलाई आ गयी.

★ ★

भाभी बस स्टैंड तक उन्हें छोड़ने आयी थी. आनंद भी साथ आये थे. वे लोग समय पर ही आये थे, पर बस लेट थी. आनंद कुछ आवश्यक काम बता कर चले गये थे या शायद इस स्थिति को बर्दाश्त न कर पाने के कारण. भाभी रुकी रही, उसने बिट्टू को गोद में उठा लिया था, हालांकि बिट्टू को नीचे खड़े रहना अच्छा लग रहा था. वह एक दो बार ऊब कर कुनमुनाया भी, पर भाभी ने उसे नीचे उतारने के बजाय और अधिक कस लिया. बस के आने तक वह उसे इसी तरह छाती से चिपटाये खड़ी रही. जब बस में लोग चढ़ रहे थे तब भाभी बिट्टू को ताबड़तोड़ चूमे जा रही थी. उसकी आंखों में पानी उतर आया था और निचला ओंठ बार-बार थरथरा जाता था. बिट्टू को चेतन को देते समय उसके दोनों कपोलों पर आंसुओं की धार बह आयी जिसे उसने शीघ्र ही आंचल से पोंछ डाला. वह फिर-फिर आंखें पोंछती और फिर-फिर उनमें पानी उतर आता. बीच-बीच में उसके ओठों से सिसकी निकल जाती. चेतन को भाभी की यह अव्यवस्थित मुद्रा तथा संयत होने का प्रयास बुरी तरह बींध गया था. उसे लगा यदि उसने भाभी से आंखें मिलायीं तो उसकी अपनी आंखें भी भीज जायेंगी.

बिट्टू को पहले जब यह बताया गया था कि वह अंकल के साथ जायेगा. दादी और बाबा के पास जायेगा तो उसने खूब उछाह दिखाया था. पर अब वह रोने लगा था.

बस में चढ़ते हुए चेतन ने कहा था--भाभी औरों के लिए तो कुछ नहीं कहूंगा पर बिट्टू की ओर से तुम मुझ पर विश्वास कर सकती हो. चेतन आगे और कुछ भी कहना चाहता था पर उसका गला भर आया था.

बस चल पड़ी थी. चेतन को दूर तक भाभी के जूड़े में सजा सफेद गुलाब दिखाई देता रहा था. □□□

४१७४ कोतवाली मोहल्ला, अम्बाला छावनी (हरियाणा)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चोर

• सारंग बारोट

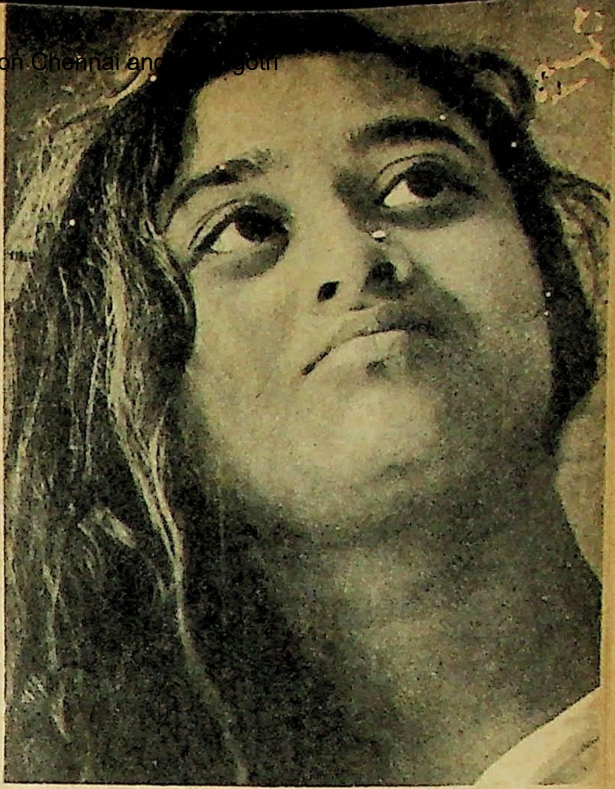

• रजनीकांत

सरल स्वभाव के दलाल दंपति के यहां रूखी की नौकरी का चौथा वर्ष चल रहा था. तभी एक दिन अचानक उसके सेठ दिनकरभाई और सेठानी शोभना कुछ चिंता में पड़ गये.

चार वर्ष की रूखी की नौकरी से दोनों काफी संतुष्ट थे. और इस संतोष का पुरस्कार वे उसे न देते, ऐसे वे कंजूस भी न थे; इसलिए रूखी को उसके काम के लिए अच्छे वेतन के अतिरिक्त हर वर्ष दीपावली पर कुछ अतिरिक्त उपहार भी मिलता था. रूखी खाना बनाने का काम करती थी और पचास रुपये से शुरू हुआ उसका वेतन चार वर्षों में सौ रुपये तक पहुंच गया था. वेतन के अतिरिक्त नौकरी के पहले वर्ष में पचास, दूसरे वर्ष सौ और उसके बाद के वर्ष में दो सौ रुपये उसे हर दीपावली पर मिले थे. कपड़े वगैरह और दूसरी जो छोटी-छोटी चीजें शोभना ने उसे खुले हाथों दी थीं, वे अलग. अकेली-अकेली रूखी के लिए यह सब उसकी आवश्यकताओं से अधिक था. उस परिवार के लिए रूखी अब खाना बनानेवाली न रह कर उस घर की सदस्या बन गयी थी.

दिनकर और शोभना के लिए रूखी लगभग अनिवार्य बन गयी थी. तीन वर्ष पूर्व जब से रोहित का जन्म हुआ, तब से तो उसके बिना काम चलता ही न था. उसके जन्म के बाद आया की आवश्यकता हुई तब रूखी ने आया रखने के लिए स्पष्ट मना किया था और रोहित की देख-भाल की जिम्मेदारी स्वयं उठा ली थी. और इस कार्य में वह इतनी सफल रही थी कि आज तक रोहित को लेकर उन्हें एक बार भी डॉक्टर के पास नहीं जाना पड़ा था. ऐसी सेविका को नौकरी से हटाना पड़े, तो यह विचित्र स्थिति ही थी. दिनकर और शोभना दोनों ही चिंतित थे.

चार वर्षों की नौकरी के बीच कभी चुटकी भर धूल भी न चुरानेवाली इस सेविका की गति अब बदल रही थी, बदल कर दिन-दिन अधिक बिगड़ती जा रही थी, ऐसा दिनकर और शोभना को लग रहा था. उन्हें विश्वास नहीं होता था किंतु पहले कभी नहीं होता था ऐसा कुछ न कुछ उस घर में घटता रहता था और उसके-पीछे रूखी के अतिरिक्त दूसरे किसी का हाथ नहीं हो सकता था.

—पिछले तीन दिन से रोहित का बंदर नहीं मिल रहा है, एक दिन शोभना ने दिनकर से धीरे-से कहा.

—बंदर! जनक ने जापान से भेजा था वह?

—हां.

—पूरे पचास रुपये का खिलौना इस तरह गायब हो जाय और हम धीमे स्वर में बातें करने के सिवा कुछ न करें यह स्थिति तो असह्य है, शोभना. अब तो इस संबंध में कुछ करना ही पड़ेगा. इधर कोई सप्ताह ऐसा नहीं गया जब घर में-से कुछ न कुछ गायब न हुआ हो.

—इस सप्ताह तो दूसरी बार ऐसा हुआ है. अभी चार दिन पहले चांदी के दो चम्मच गुम हुए थे और आज वह बंदर.

—मुझे लगता है कि रूखी से अब साफ-साफ बातें करनी होंगी.

—इस तरह बातें करने से समस्या नहीं सुलझेगी. वह तो कहेगी, भाई, मैं तो कुछ नहीं जानती.

—तो फिर क्या करें?

—मुझे तो कोई उपाय नहीं दिखता है. रूखी पर विश्वास रखकर अब तक मैं तीन नौकर बदल चुका, लेकिन चोरी का क्रम तो जारी ही है. इस बात से स्पष्ट है कि चोरी के पीछे उसी का हाथ है. नहीं तो सभी नौकर चोर नहीं होते.

—किसी न किसी तरह उसे चोरी करते हुए पकड़ना चाहिये. सिवा इसके दूसरा कोई चोरी नहीं करता होगा और वह ऐसा करती होगी, इसका विश्वास भी नहीं होता.

—मैंने बहुत प्रयत्न किये, किंतु किस समय कौन वस्तु गुम हो जाती है और कहां गायब हो जाती है, यह समझ में नहीं आया. एक बार रूखी रोहित को बाहर घुमाने ले गयी थी तब नौकर को एक निरर्थक काम के बहाने बाहर भेजकर रूखी के कमरे की तलाशी ली थी. उसका बक्सा भी देख डाला, लेकिन कुछ भी हाथ न लगा.

—तुम्हें एक बात समझनी चाहिये कि इस तरह चोरी की वस्तुएं कोई अपने पास नहीं रखता. या तो उसे तुरंत निकाल देता है अथवा ऐसी जगह छिपा देता है, जहां जल्दी कोई नहीं पहुंच पाता.

—किंतु हमारे बंगले में ऐसी कौन-सी जगह है? मैं तो प्रायः सभी जगह देख लेती हूं, पर कभी कुछ सुराग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाथ नहीं लगता. बालु तो बर्तन-कपड़े साफ कर तुरंत चला जाता है. और बालु जैसे तो तीन नौकर बदले, फिर भी चोरी होती ही रहती है. मुझे तो लगता है कि अब-तक हमारा विश्वास बनाए रखने के लिए अच्छा व्यवहार रख रूखी अपने मूल स्वभाव पर आ गयी है. मुझे तो इस बात का डर है कि कभी लंबा हाथ साफ कर वह स्वयं रफूचक्कर न हो जाए. आभूषण तो मैं सम्हाल कर रखती हूं, फिर भी. . .

—मुझे लगता है कि हम एकाध छोटा आभूषण कम करने की तैयारी करके भी रूखी को पकड़ने का प्रयत्न करें. पकड़ी जाए तब उसकी खबर लेंगे.

और योजनानुसार शोभना ने रसोईघर में हाथ धोने से पहले सोने के पट्टेवाली अपनी हाथघड़ी, रूखी आसानी से देख सके, इस तरह एक ताक पर रख दी और फिर घड़ी को वहीं छोड़कर ऐसे बाहर चली गयी जैसे भूल गयी हो.

पर उसकी योजना व्यर्थ सिद्ध हुई. कुछ देर बाद रूखी ने शोभना को घड़ी देते हुए कहा—लीजिये, बहन! आप रसोईघर में ताक पर भूल गयीं थीं. दिनकर को और शोभना को आश्चर्य हुआ. उनकी समझ में नहीं आया कि रूखी वास्तव में चोर है या नहीं?

घड़ी तो रूखी दे गयी, लेकिन आश्चर्य की बात यह हुई कि उसी दिन दो स्टील के कटोरे गुम हो गये. क्या समझा जाए? क्या किया जाय? दिनकर और शोभना की चिंता दिनों-दिन बढ़ रही थी, किंतु दोनों ने अब इस बात का किसी न किसी तरह अंतिम फैसला करने का निश्चय कर लिया था.

★ ★

कुछ ही दिनों बाद जब दिनकर का सिगरेट-लाइटर गुम हो गया तब उसने रूखी को बुला कर शोभना की उपस्थिति में कहा—मेरा सिगरेट-लाइटर देखा है, रूखी?

—नहीं तो.

—रूखी, घर में से आए दिन चीजें गुम होती हैं, यह तो तुम जानती हो न?

—हां, साहब!

—मेरी समझ में नहीं आता कि कौन चीजें चुरा ले जाता है.

—मेरी समझ में भी यह बात नहीं आती. पहले नौकरों पर शक होता था, लेकिन तीन चार नौकर बदलने के बाद भी चीजें निरंतर गुम होती रहती हैं. और बालु तो साहब, हाथ का साफ आदमी है, इसका तो मैंने इतमीनान कर लिया है.

—तो फिर चीजें जाती कहां हैं? जमीन तो खा नहीं जाती. बालु चोर नहीं है, तो फिर क्या मैं चोर हूं?

—मैं समझती हूं. साहब. . . .

—क्या समझती हो?

—यही कि यदि इस तरह वस्तुएं गुम होती रहीं तो संदेह मुझ पर ही किया जायगा. लेकिन साहब, मैं इतने समय से आपके यहां काम करती हूं, कभी एक पैसा भी. . .

—आदमी की मति फिरते देर नहीं लगती, रूखी.

—साहब!

—हां रूखी, घर में से कौन चीजें चुराता है, यह अब हमसे छिपा नहीं है.

—आपको मुझपर शक है?

—नहीं तो दूसरे किस पर शक करें?

—साहब. . .! भगवान की कसम खा कर कहती हूं कि जब से जन्म लिया है तब से मैंने कभी किसी की चोरी नहीं की.

—जो चोरी कर सकता है, वह झूठी कसमें भी खा सकता है.

—मेरा कौन है जिसके लिए मैं चोरी करूंगी? आगे-पीछे कोई खानेवाला नहीं है और पेट की खाई तो आप जैसों की सेवा करने से भर जाती है. मैं आपको किस तरह विश्वास दिलाऊं कि मैं चोर नहीं हूं. भगवान की कसम के सिवा मेरे पास दूसरा कोई तरीका भी तो नहीं है, साहब!

—लोग झूठी कसम भी तो खाते हैं. तुम्हें अपनी सफाई देने का प्रयत्न करने की जरूरत नहीं है. हम ने रास्ता सोच रखा है.

—तो साहब, जो रास्ता तय कर रखा हो, उसे आजमा कर देख लें. अंत में जो सत्य होगा, वह सामने आ जाएगा.

—हमने तुम्हें नौकरी से हटाने का निश्चय कर लिया है.

—ठीक है साहब, आप मालिक हैं. पर इस तरह माथे में काला टीका लगा कर न निकालें. मैं वास्तव में चोर नहीं हूं.

—यह तो तुम्हारे जाने के बाद अपने आप समझ में आ जाएगा. तुम्हारे जाने से चोरी बंद हो जाएगी तो हमें दूसरे किसी विश्वास की जरूरत नहीं रहेगी.

—हे राम! इस अवस्था में ऐसे सेठ-सेठानी की तरफ से ऐसा कलंक लगवा कर तुम मुझे किस पाप की सजा दे रहे हो, प्रभु! कहती हुई रूखी वहां से चली गयी.

★ ★

दूसरे दिन रूखी घर छोड़नेवाली थी. निर्णय दिनकर ने किया था और उसे हटानेवाला भी वह स्वयं ही था, फिर भी वह मन ही मन दुखी हो रहा था. शोभना को भी रूखी का जाना अच्छा नहीं लग रहा था. पर दोनों जानते थे कि ऐसी उदारता मात्र एक कमजोरी है. रूखी को हटाने के सिवा दूसरा कोई उपाय न था.

पर दूसरे दिन रूखी न जा सकी. उस रात को ही उसे ज्वर हो आया. दूसरे दिन डाक्टर को बुलवाना पड़ा, ऐसी स्थिति हो गयी और तीसरे दिन उसे सन्निपात हो गया. ज्वर के ताप में वह अनेक टूटे वाक्य बोलती थी लेकिन सब का भावार्थ एक ही था—मैं चोर नहीं. . . हे भगवान मेरे माथे ऐसा कलंक क्यों लगाते हो, प्रभु!

चार दिन बीत गये, लेकिन रूखी का ज्वर नहीं उतरा. डाक्टर ने धीमे-से कहा था कि वह शायद नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बचेगी. कोई बहुत बड़ा आघात लगा है इसे. ज्वर काबू में नहीं आ रहा है.

इस स्थिति में पांचवें दिन एक घटना ऐसी घटी कि दिनकर और शोभना दोनों कांप उठे.

दिनकर का कीमती सिगरेट-केस गुम हो गया था.

बीमार-बेहोश रूखी तो चारपाई से उठ नहीं सकती थी. तो फिर किसने चोरी की? और रूखी के बदले कोई दूसरा चोर निकला तो. . .तो? जैसे कोई बहुत बड़ी भूल हो गयी हो और उसका प्रायश्चित करना चाहते हों, इस प्रकार भारी मन से दिनकर और शोभना रूखी को जीवित रखने का जी-तोड़ प्रयास करने लगे. उसे अस्पताल में दाखिल करना पड़ा. बड़े-बड़े डाक्टरों का उपचार होने लगा. किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि एक गरीब विधवा के लिए दिनकर और शोभना इतना धन पानी की तरह क्यों बहा रहे हैं? उसका इतना अधिक ख्याल क्यों रख रहे हैं? दोनों के चेहरों पर उदासी छा गयी थी, दोनों पति-पत्नी एक दूसरे को भाषा की सहायता के बिना ही कह रहे थे, न हो ऐसी निष्कलंक सेविका की हत्या का पाप हमारे सिर लगे.

* *

जब-जब रूखी कुछ होश में आती तब दिनकर या शोभना जो भी उसके पास होता, उससे कहता—हमें विश्वास हो गया है रूखी, कि तुम चोर नहीं हो. तुम अस्पताल में पड़ी हो, फिर भी घर में चोरी होती रहती है. हमने नाहक तुम्हारे ऊपर संदेह किया.

कुछ दिनों तक तो रूखी ने ऐसे वाक्यों का जवाब नहीं दिया किंतु एक दिन उसकी तबीयत जरा ठीक थी, तब उसने कहा—मुझे जीवित रखने के लिए ऐसा कहते हैं! किसलिए बापू? एक बार इज्जत गयी, फिर मेरे लिए जीना बेकार है.

रूखी ने यह कहा तो सही, किंतु शोभना और दिनकर के शब्दों ने भी उस पर असर किया था और उसकी तबीयत में कुछ सुधार होने लगा था.

—हम झूठ नहीं कहते, रूखी! शोभना और दिनकर उससे कहते.

—सच कहते हों तो यह भी बता दें कि चोर कौन है ताकि मेरी आत्मा की सद्‌गति हो.

—अभी हम उसे पकड़ नहीं पाये हैं, पर उसका पता चलते ही हम उसे तुम्हारे सामने जरूर पेश करेंगे. फिर तुम्हें ही उसे जो सजा देनी हो, देना.

—सजा तो इस समय मैं भोग रही हूं.

—अब ज्यादा दिन नहीं भोगनी पड़ेगी. निश्चय ही कोई बाहरी आदमी चोरी-छिपे आता है या शायद शरीफ लगता बालु ही इस तरह आ कर चीजें उठा ले जाता होगा. सिगरेट-केस के बाद नये जूते गुम हो गये. बालु की अनुपस्थिति में ही जूते गये थे, लेकिन चोरी-छिपे वही आ कर नहीं उठा ले गया होगा, इसका क्या विश्वास? तुम चिंता न करो, रूखी! बालु हो अथवा बाहर का कोई आदमी, अब वह अवश्य ही पकड़ा जाएगा.

—और पकड़कर यहां मेरे पास लाएंगे, तभी मुझे विश्वास होगा.

—ऐसा ही होगा, रूखी! तुम जल्दी स्वस्थ हो जाओ. रोहित तुम्हारे बिना नहीं रहता है. तुम स्वस्थ हो कर घर नहीं आओगी तो शायद वह बीमार पड़ जाएगा.!

—भगवान उसे सौ वर्ष की आयु दें! ईश्वर मेरी लज्जा रखेगा और वास्तविक चोर पकड़ा जाएगा तो मुझे आप के घर की छाया से अलग कुछ प्रिय नहीं है. सेठ, वहां नहीं आऊंगी तो कहां जाऊंगी?

* *

और जल्दी ही वास्तविक चोर पकड़ा गया. चोरी गयी सभी वस्तुएं भी मिल गयीं. उन सभी वस्तुओं की थैली के साथ दिनकर और शोभना अस्पताल गये और जाते ही रूखी को सूचित किया—चोर पकड़ा गया, रूखी!

—सच?

—सच, रूखी! देखो, ये गुम हुई वस्तुएं भी वापस मिल गयी हैं, कहते हुई शोभना ने सारी वस्तुएं रूखी को दिखला दीं.

—अंत में मेरे भगवान ने मेरी लाज रख ली! कह कर रूखी आर्द्र बन गयी, मेरी प्रार्थना अंत में उसने सुन ली!

—अरे, यह तो पूछो कि चोर कौन था?

—मुझे यह जानकर क्या करना है? जाने दें साहब, वह अपना किया, आप भोगेगा!

—पर यहां तो उसका किया तुम्हें भोगना पड़ा न रूखी! पता है, चोरी कौन करता था?

—कौन करता था?

—यह बदमाश, कहते हुए दिनकर ने रोहित को आगे किया.

—यह! रूखी की आंखों में आश्चर्य था, यह मेरा रोहित?

—हां, रूखी! जो हाथ लगता, उस वस्तु को उठा कर घर में जो वर्षा का पानी जमा करने का कुआं है न, उसमें छोड़ आता था. आज पूजा में से भगवान की मूर्ति उठा कर कुएं में डालते हुए पकड़ा गया. बालु को कुएं में उतारा तो खोई हुई सारी वस्तुएं मिल गयीं.

—तो भगवान पानी में गये और सारी वस्तुएं ढूंढ़ लाए.

—बोलो रूखी, अब इस चोर को क्या सजा दें? शोभना ने रूखी से पूछा.

पर तुरंत रोहित ने सफाई दी.

—मैं चोरी नहीं करता था. . .मैं तो कुएं के पानी में 'भम्म' करता था. □□□

(गुजराती से अनुवादक : गोपालदास नागर)
७, करेलवाड़ी, ठाकुरद्वार, बंबई–२.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पारदर्शी चेहरा

• ब्रजकुमार मित्तल

जोरों से बारिश हो रही है. जैसे सारा आकाश धरती पर टूट पड़ेगा. बाहर-भीतर सब भीगा-भीगा-सा लगता है. भाभी पीछे की सीट पर लेटी हैं चुपचाप. ओबरा से मिर्जापुर जाना है. जाना ही है, रुक नहीं सकते भाभी के लिए. भैया चुपचाप ड्राइव कर रहे हैं. कहने को है भी क्या? इस तूफानी बारिश में एक प्रश्न मन में उठता है और चुप हो जाता है. . . . यह भयंकर तूफानी बारिश, क्या होगा? सच है, क्या होगा? इस प्रश्न का उत्तर अभी तक कोई नहीं दे सका इसलिए तो लोग इससे कतरा कर निकल जाते हैं. भाई साहब, ने पूछा—अखिल! सर्दी तो नहीं लग रही है?

मैंने पीछे लेटी भाभी की ओर मुड़ कर पूछा—भाभी. . . . ?

—नहीं. दबी-सी आवाज में भाभी ने कहा.

वाइपर शीशे पर बहने वाले पानी को बराबर पोंछ रहा है ताकि उस पार साफ साफ देखा जा सके. भैया ने सिगरेट जलाते हुए कहा—ड्राइव करोगे? मैंने उतरे मन से उनकी ओर देखा.

—अच्छा ठीक है. कह कर भैया फिर शांत हो गये जैसे अपनी किसी गहराई में डूब गए हों.

एक ठोस नीरवता को तोड़ती हुई भाभी की बुझी-बुझी खांसी—मैं एक बार भाभी को ध्यान से देखना चाहता हूं पर न जाने क्यूं डर कर अपनी जगह बैठा रह जाता हूं.

—जरा देखो, पेपर्स में क्या है? अपनी जेब की ओर इशारा करते हुए भैया ने कहा.

मैं रिपोर्ट निकाल लेता हूं. एक प्रश्न मेरे मन में उठता है—यह सब चुपचाप हो गया मुझे भैया ने यह सब पहले क्यों नहीं बताया? ये पेपर्स मुझे घर पर क्यों नहीं दिखाए? ये प्रश्न अंदर ही अंदर मर जाते हैं. मैं चुपचाप पेपर्स पढ़ने लगता हूं.

—केस इज सीरियस, इमीजिएट केयर. मैंने शीशे के पार आंखें गड़ा दीं—मुझे लगा जैसे आकाश कई टुकड़ों में बिखर गया है, और उसकी मोटी-मोटी दरारों से धरती पर पानी गिर रहा है, गिरता रहेगा, कब तक? जब तक सारी दुनिया पानी की पर्त से ढक न जायेगी—जब तक सब कुछ बदल न जायेगा. भैया गंभीर हैं. उनका चेहरा उदास है. वे पत्थर की तरह जड़ हैं. चुपचाप ड्राइव कर रहे हैं, जैसे बोलने के लिए उनके पास कुछ भी नहीं बचा. अब क्या होगा? मैं अर्थ पर अर्थ बुनने लगता हूं. आगे-पीछे का कितना कुछ सोच जाता हूं—हजरतगंज की एक शाम—एक तो अवध की शाम, दूसरे साथ में नयी भाभी. मैं अचानक पूछ बैठता हूं—एक कास्ट कलर की साड़ी खरीदोगी ना?

—हां, तुम्हारी पसंद की.

मैं अपनी खुशियों में डूब जाता हूं—एक बात कहूं भाभी?

—हूं.

—बुरा तो न मानोगी?

—अरे! बुरा क्यों? हंसते हुए भाभी ने कहा.

—आपको तो साड़ी पहनना अच्छा नहीं लगता.

—तब?

—तब! इस शब्द के साथ ही मुझे याद हो जाता है—युनिवर्सिटी में इंगलिश एसोसिएशन का क्लोजिंग फंक्शन है. मिस दवा को पहली बार साड़ी पहने देख कर मैं अपने आप को रोक नहीं सका था—माफ करना मैडम, तुम्हारा साड़ी पहनना कुछ अच्छा नहीं लगा.

—तब! उसने भी यही कहा था, ठीक यही.

मैंने यूं ही कही थी मन की एक बात. मुझे उससे आगे बढ़ने की कोई गुंजाइश नहीं लगी थी. मैंने भाभी की ओर देखा. वे हंस रही थीं. मेरे सिर से एक बोझ-सा उतर गया. मुझे कुछ हलकापन महसूस हुआ. भैया न जाने किस मूड में थे, बोले—ठीक ही तो कह रहा है, तुम तो अभी स्टूडेंट लगती हो. जाओ अखिल के साथ रिसर्च कर लेना इलाहाबाद.

सच, भाभी को अगर इलाहाबाद ले आता तो शायद यह न होता. ओबरा के पानी से यह सब हो गया, दो वर्षों में ही इतना परिवर्तन? इतना सब कुछ? पानी वैसे ही बरस रहा है, वायपर वैसे ही अपना काम कर रहा है, कार वैसे ही दौड़ रही है, भैया वैसे ही चुप हैं, शांत. एकदम शांत. मैं पीछे लेटी भाभी के सांसों की आहट पाने का प्रयास करता हूं. शीशे के बाहर अनवरत बूंदों का अंधेरा भरा हुआ है. सब राबर्टगंज पीछे छूट गया. मड़ियान जानेवाला है—सड़क के दोनों ओर बसा हुआ एक छोटा-सा बस-स्टैंड—यहां के रसगुल्ले बहुत अच्छे होते हैं. मन में आया भाभी को बता दूं कि कितना शौकीन हूं मैं रसगुल्लों का! वे कहेंगी, घर चल कर बना दूंगी. जी भर कर खाना. तभी भैया बोले—अखिल! इन्हें कोई बीमारी नहीं थी?

—कोई बीमारी नहीं थी?

—हां.

—इन्होंने खुद यह. . . . ये हर वक्त उदास रहती थीं, खोई-खोई-सी, पता नहीं क्यूं? मैंने शीशे के बाहर देखा—एक ठूंठ सड़क के दायीं ओर घोर बारिश में चुपचाप खड़ा है, उदास-उदास, बुझा-बुझा-सा हर वक्त क्या सोचा जा सकता है? भाभी हर वक्त क्या, . . . जो हर वक्त सोचेगा, उसका क्या हाल होगा? वह कैसे जिएगा? वही जो भाभी का हुआ. भाभी का चेहरा, उस पर ठहरी एक सहमी-सी उदासी. लगातार बंद रहनेवाले दो सूखे होंठ—जब भी खुलते तो बंद होने के प्रयास में लग जाते, कभी-कभी गहरा निःश्वास. बस यही शेष रह गया था भाभी के पास इन दो वर्षों में. हजरतगंज में मेरे साथ चलनेवाली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

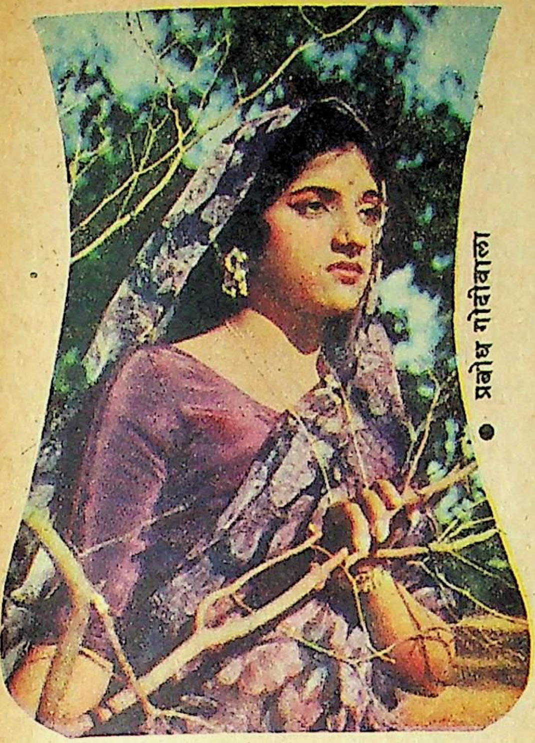

● प्रबोध गोदीवाला

खिली हुई भाभी, अब पीछे की सीट पर लेटी हैं, चुप-चाप, खाली-खाली, अस्तित्वहीन. ये ठीक हो जायेंगी? हो जायेंगी? वैसी ही? मन के एक कोने एक नुकीला तीर-सा चुभ कर रह जाता है.

जब मैंने इलाहाबाद से जा कर पहली बार भाभी को इतनी कमजोर देखा तो पूछा था— भाभी यह क्या हो गया आपको? इतनी कमजोर क्यों हो गयीं आप? —कुछ नहीं थोड़ी तबीयत खराब हो गयी थी. हलकी-सी हंसी में ढक कर भारी उदासी दे दी थी उन्होंने मुझे. वह अंदर ही अंदर छुप कर रह गयी थीं. इसी प्रकार जब भी मैंने भाभी की हालत की बात उठायी, हर बार वह इस सत्य से कतराते नजर आयीं.

भाई साहब ने एक दिन मुझे बैठाते हुए कहा था— हर वक्त सोचती रहती है न जाने क्या? बस घुल रही है यूं ही. वैसे बीमार नहीं है.

—लेकिन अब तो बीमार हैं ही.

—जब मैंने उन्हें हर वक्त खोई-खोई-सी देखा तो मुझे लगा जैसे उनका कुछ पीछे छूट गया है. वह पत्थर की एक शिला की तरह इस घर में हैं. बस हर वक्त काम-धाम और एक घोर चुप्पी, न हंसना, न बोलना. जब मुझसे न सहा गया तो मैंने बात साफ करनी चाही. उन्हें बैठा कर कसम खिलाई कि आखिर बात क्या है, इतनी उदासी का कारण क्या है? वह सच्चाई से भागने का प्रयत्न करती रहीं. फिर मेरे जिद करने पर उन्होंने बताया कि उनकी शादी पहले कहीं और होने को थी पर संयोग से वे यहां चली आयीं.

यकायक भैया चुप हो गये. उनकी आंखें फैल कर स्थिर हो गयीं, जैसे दूर उन्होंने कुछ पकड़ लिया हो जिसे वे छोड़ना नहीं चाहते थे. मैंने कहा— यह तो बहुत ही स्वाभाविक है, कि एक लड़की को शादी दस जगह होने को होती है पर होती तो एक जगह है.

—नहीं अखिल.

. . . .

—वह अब भी उसके बारे में सोचती रहती है. यहां तो वह सिर्फ एक पत्थर की तरह है. और मेरा उस पत्थर से क्या संबंध है, यह तुम जानते हो.

भैया कुछ भावुक हो चले थे. उनकी आंखों में एक गहरी खामोशी उतर आयी थी और वे उस खामोशी में डूब कर रह गये थे.

मैं सब कुछ समझ गया. भैया को मैं अच्छी तरह जानता हूं. उनकी आदत है कि जिस बात को पकड़ते हैं, फिर यूं ही नहीं छोड़ते. छोटी-सी-छोटी बात को भी खूब चीर-फाड़ कर देखते हैं. संदेह उनकी सबसे बड़ी कमजोरी है— भाभी कालेज में पढ़ती थीं, वहां के एक अध्यापक से या किसी एक लड़के से उनका प्रेम-संबंध रहा होगा. या फिर ऐसा ही कुछ, वे किसी को चाहती होंगी— अपने जीवन से भी अधिक. यह सब शादी के पहले की बातें हैं. शादी के पहले एक जिंदगी होती है, जिसे कई ढंग से जिया जाता है, या कहिए जीना पड़ता है. उसके लिए इतना आग्रह क्यों? इतने प्रश्न कैसे? पर कुछ लोग बीती बातों को इतना कस कर पकड़ते हैं कि उनका वर्तमान और भविष्य भी निष्प्राण हो जाता है. भाई साहब ने दुखी होते हुए कहा था—अखिल! वह इस घर में कभी संपूर्णता नहीं भर सकती क्योंकि वह खुद अधूरी है.

पर मैं जानता हूं भैया का संदेह भाभी को कभी पूर्ण नहीं होने दे सकता इसीलिए वह तिल-तिल कर कटती गयीं और आज केवल एक अस्तित्वहीन संदर्भ की तरह रह गयी हैं.

एक बार मैं जब ओबरा आया था तो डाइनिंग टेबुल पर खाते वक्त मैं भाभी को छेड़ बैठा था— भैया की हेल्थ का राज क्या है? आपका बनाया हुआ ऐसा खाना? ऐसा कहने पर भाभी अपने ही अंदर छुप गयी थीं. एक बार मेरी ओर देख कर जैसे दूर जा खड़ी हुई थीं. और भाई साहब वह तो जैसे छुपने के लिए खाने वाली प्लेटों के नीचे जगह ढूंढ़ रहे थे. बात टालने के लिए भाभी ने कहा था— अखिल! क्यों शेखर : एक जीवनी ले आ सकोगे. आखिर वह सब क्यों था? मैं आज उस सब का अर्थ समझ रहा हूं. क्या भाभी बीती जिंदगी को अब भी ढो रही हैं? क्या वे अपने आपको भैया से नहीं जोड़ पायीं? पर मुझे लगा कि उन दिनों के बीच एक दीवार बन चुकी है और वे दोनों उस के बाहर और पार जी रहे हैं. दीवार किसने बनाई, मैं इसको जानता हूं. भाभी की पग-पग परीक्षा ली गयी होगी, उनके एक-एक सांस पर संदेह किया गया होगा. और वे इस परीक्षा में घुल कर गयी.

मैंने पीछे मुड़ कर देखा— भाभी की आंखें बंद हैं और उनके होठों पर एक मरा हुआ हास स्थिर हो गया है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—भाई साहब?

—हां!

—यह सब क्यों हो गया?

—क्या बताऊं?

—तो क्या यह सब यूं ही हो गया? खेल-खेल में? औपचारिकता में? मैं उन दिन बहुत भरा हुआ था. मन करता था बहुत कुछ कह डालूं—आपके भाभी के संबंधों के बीच संदेह की दीवार जो आपने बनाई है, सदैव रही है. भाभी उसी की छाया में अपने-आपको दुबका कर जीने का प्रयास करती रहीं. इसीलिए अब वे केवल एक छाया रह गयी हैं. मात्र छाया—आज जिसे केवल देखा जा सकता है, स्पर्श नहीं किया जा सकता. आपने जिन आंखों से भाभी को देखा, उनमें एक प्रश्न सदैव तैरता रहा. और दृष्टि के इसी प्रश्न-चिह्न ने भाभी को तोड़ दिया, पूरी तरह. प्यार एक भावना है जो विश्वास की नींव पर खड़ा रेत का महल है. जरा से संदेह से वह धूल में बिखर सकता है.

भाई साहब चुपचाप सुन रहे थे. उनका चेहरा देख-कर लग रहा था कि जैसे वे अपनी सच्चाई को ढूंढ़ने का प्रयास कर रहे हों.

पीछे की सीट पर भाभी एक रेखा की तरह अचेत पड़ी हैं—मुख पर युगों की चिंता के अवशेष उलझे-उलझे हुए बाल, पारदर्शी-चेहरा— जिसके आर-पार सब कुछ स्पष्ट दीख पड़ता है. कोई भी उस चेहरे से भाभी को पूरी तरह पढ़ सकता है. मुझे लगा जैसे वह कह रही हैं— मुझ पर शक किया जा रहा है जो मुझे कहीं भी जुड़ने नहीं देता. सच, कहीं भी नहीं.

बाहर वही धुआंधार बारिश और पारदर्शी शीशे की धुंधलाती पानी की बूंदें. वही शीशे पर तेजी से रेंगता वैपर. इस अजीब-सी शांति में मेरा दम घुट रहा था. मेरे अंदर विचारों का दबाव बढ़ रहा था. मैं दर्द की परतों में दबता जा रहा था— आपने मुझे कुछ नहीं लिखा? मैं भाभी को इलाहाबाद बुला लेता. यह हालत तो न होती?

—क्या लिखता? कोई बीमारी तो हो. भैया ने बड़ी गहराई से कहा. सच है, संदेह कोई बीमारी तो नहीं है. जिसका इलाज ही न हो वह बीमारी ही क्या?

कार तेजी से सड़क पर पड़े पानी के छींटे उड़ाती दौड़ रही थी. भाभी डाक्टर तक पहुंच जाए तो मैं सब ठीक कर लूंगा, सब लौटा लूंगा. सब लौट आएगा? वैसा ही. भाभी के साथ मैं फिर वही अखिल. वही भैया. नहीं, यह शायद कभी न होगा. क्या सब कुछ बदल जायेगा? क्या भाभी उनकी नजरों में पीछे के जीवन से कटी हुई एक नयी चीज हो सकेंगी? क्या दीवार टूट जाएगी?

मिर्जापुर रेलवे फाटक बंद था. रिक्शाओं, बसों, तांगों तथा ट्रकों की एक लंबी कतार में जाकर हमारी कार भी रुक गयी. एक सरदार कह रहा था—ओ मुंडिया, तू की करदा पिया ऐं? ना सान्चा ते ना पाणी, ओए तू किना बेदर्दी ऐ...

बेदर्दी! निष्ठुर!! पत्थर!!! कौन?

मैंने अपने-आपको पकड़कर कहा— अखिल भैया का संसार भी ठीक हो सकता है. क्या जाने भाभी ही अपने आपको... पर इतनी सच्चाई ये जीने वाली कर सकती है, कुछ छुपा नहीं सकती.

हास्पिटल में अचेत पड़ी भाभी को अंदर ले जाया जाता है. डाक्टर गोपाल (भैया के दोस्त) भाभी को देखते हैं. मैंने सोचा कि वे कुछ पूछेंगे पर वे भैया के कंधे पर हाथ रख कर बोले—अच्छा, यह बताओ इंजीनियर! तुम तो बड़े फूंक-फूंक कर कदम रखने वाले थे, इतने लापरवाह कब से हो गए. शादी ने बदल दिया है शायद. भैया मेरी तरफ देखते हैं और मैं भाभी के कमरे की तरफ.

★ ★

कई दिनों से मैं भाभी के पास हूं. उनकी हालत कुछ ठीक हो रही है. उनके चेहरे पर फिर से ताजगी आने लगी है. भैया भी यहीं रहते हैं, पर कभी-कभी वे चले जाते हैं. मैं भाभी के पास बैठा हूं— भाभी सच बताओगी?

—नहीं मैं तो झूठ बोलूंगी. कहो क्या बोलूं?

—मेरे पास रह सकोगी एक आध साल?

—बस एक आध साल ही रखोगे?

बहुत दिनों के बाद इनमें इस तरह की बात देखता हूं.

—रह सकेंगी आप भैया से अलग? यह पूछकर मुझे लगा जैसे मैंने अपराध किया हो. पता नहीं क्यों.

—नहीं,... ना बाबा. कहकर भाभी ने मुझे देखकर आंखें नीचे कर लीं.

—तो फिर पूछना ही बेकार है. मैंने कुछ नाराज होते हुए कहा.

—अरे नाराज हो गए. मुझसे भी नाराज? एक ही तो भाभी हूं, मैं तुम्हारी, सिर्फ एक. अधिकार के स्वर में उन्होंने घोषणा की.

मुझे लगा जैसे नये ढंग से रहने के लिए नयी भाभी ठीक हो रही हैं. संदेह के दुःख से मुक्त, हंसमुख, अधिकार-युक्त भाभी.

भाई साहब कह कर गये हैं, आज नहीं आएंगे. कोई बात नहीं. अब भाभी ठीक हैं. मैं जी भर कर उनसे बातें करता हूं. मन की सारी उदासी छंट जाती है.

बाजार से लौटकर आया तो पता चला कि भाभी की तबीयत अचानक खराब हो गयी है. मैं उनके कमरे की ओर दौड़ जाता हूं. भाभी छाती पर हाथ रखे चीख रही हैं. एक नर्स उन्हें थामे हुए है. दिल पर मालिश कर रही है. दूसरी नर्स दवा तैयार कर रही है. डाक्टर गोपाल दौड़कर आते हैं. इंजेक्शन देते हैं. मैं भाभी का सिर उठाकर दवाई पिलाता हूं पर दवाई होंठों के दोनों ओर से बाहर निकल जाती है.

★ ★

मिर्जापुर से ओबरा लौटना है. कई दिन बाद भी इस शहर में वही उदासी, वही वीरानगी है. मैं स्टेय-रिंग पर बैठा हूं, भैया मेरी बगल में बैठे हैं. डा. गोपाल चुपचाप खड़े हैं. मैं कार स्टार्ट करता हूं. भैया हाथ उठाते हैं. डा. गोपाल भी हाथ जोड़ते हैं. वही रास्ता, पर बेहद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पराया-सा लगता है. वही सड़क पिघली-पिघली लगती है. मैं कार चला रहा हूं पर लगता है कि कार किसी खाई में गिरने को है. आसमान साफ है. धूप जैसे उफनकर बाहर आ गयी है. मैं चाहता हूं कार को ले जा कर किसी समुद्र की ऐसी गहराई में उतर जाऊं जहां हजारों लोगों की आखें सिर्फ पत्थर की हों. जहां आदमी को तोड़ताड़-कर जीने के लिए फेंक दिया गया हो. जहां आदमी का एक-एक कतरा काटा जा रहा हो.

मैं अचानक भैया को देखता हूं. उनकी उदासी मुझे खल जाती है. मुझे लगता है कि वे अभी-अभी ठहाका मार कर हंसेंगे. पर ऐसा नहीं होता. कुछ भी नहीं होता. कार की स्पीड बढ़ाने की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि आज पीछे की सीट खाली है. □□□

११८, हिंदू होस्टल,
इलाहाबाद युनिवर्सिटी,
इलाहाबाद.

लघुकथा

भिक्षा और दान

समूची श्रावस्ती नगरी निद्रामग्न है. प्रभात बेला समीप है, फिर भी मंदिरों में घंटे-घड़ियाल बजने अभी प्रारंभ नहीं हुए. इतने में ही नगर में मध्य मार्ग में एक पुरुष ध्वनि गूंज उठी—हे नागरिकों, क्या तुम सोते ही रहोगे, आंखें नहीं खोलोगे? मुझे भिक्षा चाहिए, अपने लिए नहीं, भगवान तथागत के लिए.

यह धीर-गंभीर स्वर सुनकर स्त्री-पुरुष, बालक-बालिकाएं सभी अपनी शैय्याओं से आंखें मलते उठ खड़े हुए. देखते क्या हैं कि एक भिक्षु भिक्षा का पात्र फैलाये कह रहा है—त्याग से बढ़कर संसार में कोई धर्म नहीं, तुम भी कुछ त्याग करो श्रावस्ती के धर्मप्राण नागरिकों.

भगवान बुद्ध के प्रिय शिष्य अनाथपिंडद् की इस चुनौती ने सभी नागरिकों को झकझोर कर रख दिया. राजा ने सोचा यह राजवैभव, ऐश्वर्य तथा अधिकार व्यर्थ है. गृहस्थ विचार में पड़ गये कि क्या वास्तव में गृहस्थजीवन, धनसंपदा का कोई अर्थ है? और कोमलांगियों के नयनों से तो आंसू झरने लगे. विलासी जन भी द्रवित हुए बिना न रह सके. उनके मन में विचार उठा कि आखिर कल शाम को जो माला उनके गले की शोभा बढा रही थी, जिसमें लगे फूल विहंस रहे थे, आज भोर होते ही क्या वे मुरझा नहीं गये? क्या यह सुख क्षणिक नहीं है?

प्रायः सभी के मनों में एक साथ विचार उठे—यह प्रातः बेला तो दान देने की सर्वोत्तम घड़ी है ही. क्यों न भगवान बुद्ध को दान देकर हम भी पुण्य तथा यश के भागी बनें?

फिर क्या था, मुख्य राजमार्ग पर माणिक-रत्नों, आभूषणों की वर्षा होने लगी. वृद्धा, वयस्क महिलाओं की कौन कहे, नवपरिणीताओं तक ने कण्ठों से हार, बाजूबंद निकाल कर फेंकने शुरू कर दिये. देखते ही देखते समूचा राजमार्ग हीरे-जवाहिरातों, माणिक-आभूषणों से भर गया.

किंतु यह क्या, भिक्षु अनाथपिंडद की पुकार तो चल ही रही है. अतुल धनराशि को रौंदता हुआ वह आगे बढ़ता ही जा रहा है. उसका भिक्षापात्र तो खाली ही है. वह कहता जा रहा है—भगवान् बुद्ध के लिए भिक्षा दो. आखिर कुछ नागरिकों से न रहा गया. अपनी-अपनी ऊंची अटारियों से नीचे उतर करबद्ध हो उन्होंने भिक्षु से पूछ ही तो लिया—हे भिक्षु, तुम श्रेष्ठ तो हो ही किंतु उससे भी बढ़ कर विचित्र हो! संसार की संपदा तुम्हारे पैरों तले है जो कोई भी वस्तु खरीद सकती है. किंतु एक तुम हो कि उसे रौंदे चले जा रहे हो. तुम्हें किस वस्तु की भूख है जो इससे खरीदी नहीं जा सकती? तुम्हारे प्रभु की इच्छा क्या है?

—तो सुन लो! वे हीरे-जवाहिरात नहीं बल्कि सर्वश्रेष्ठ दान चाहते हैं.

नागरिक एक दूसरे का मुंह ताकने लगे. न तो वे भिक्षु को समझ पा रहे थे और न उसके भगवान को. वे ठगे-से खड़े रह गये और भिक्षु नगर का द्वार लांघ चला गया.

दुपहरिया होने को आयी. भिक्षु अनाथपिंडद् अरण्य में से होकर गुजर रहे हैं, पसीने से लथपथ, किंतु उनका धीर-गंभीर स्वर अब भी गुंजरित हो रहा है—भगवान बुद्ध के लिए भिक्षा दो!

किंतु यह क्या? इस निर्जन वन में किसने उत्तर दिया? ओह यह तो भूमि पर पड़ी एक निर्धन नारी है जिसके शरीर पर न तो आभूषण है और न ही ओढनी. सिर्फ एक वस्त्र से वह अपने को किसी तरह ढके हुए है.

क्षीण मुसकान के साथ भिक्षु को संबोधित करते हुए उसने कहा—हे भिक्षुश्रेष्ठ, तनिक ठहरिये! महामना भगवान तथागत को मुझ निर्धन नारी की यह तुच्छ भेंट प्रदान करिये!

और इतना कहकर वह समीप ही झाड़ी में जा छिपी. कुछ समय उपरांत उसमें से निकला उसका दाहिना हाथ जिसमें था उसके शरीर में लिपटा हुआ एकमात्र वस्त्र

और ज्यों ही भिक्षु समीप आया, उस हाथ ने वह वस्त्र उसकी झोली में डाल दिया. और भिक्षु उसे मस्तक से लगाकर बोल पड़ा—धन्य हो देवी, तुम्हारा दान सर्वश्रेष्ठ है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गर्दिश के दिन

(पृष्ठ ५९ से आगे)

कहते हैं— एक अतृप्त आकांक्षा...

और इस विचार से घबरा कर जैसे वह खुद-बखुद ठिठक गया— कहीं सचमुच ही तो ऐसा नहीं है कि किसी बम, किसी संगीन या किसी भारी चीज की मार से उसका शरीर पहले ही छूट चुका हो, और सिर्फ एक अशरीरी आकांक्षा बन कर भागा चला जा रहा हो?... या जिसे वह गुड्डी समझ कर छाती से समेटे है, वह केवल गुड्डी के होने का एहसास ही हो?... इस तरह की आकस्मिक मृत्यु वाले लोग कब शरीर छोड़ कर इस अशरीरी दुनिया में पहुंच जाते हैं, शायद खुद भी नहीं जानते! भयंकर आशंका से उसने सामने बंधी गुड्डी को छू कर, दबा कर देखा, फट कर तार-तार हो गये अपने कपड़ों को टटोला, अभी-अभी लगे घुटने के घाव से निकले खून की चिपचिपाहट महसूस की... लेकिन इससे सिद्ध कहां होता है कि यह 'शरीर' होने के पुराने अभ्यास की भावना नहीं, साक्षात् शरीर है? तभी, तभी... उसने जैसे हताश हो कर अपने आपसे कहा, तभी तो वह 'बचता' चला आ रहा है! दरअसल जिसे वह 'बचना' समझ रहा है, वह उसका 'न होना' ही है... किसी को वह दीखता ही नहीं होगा. वह अपने आपको जो चाहे समझे, किसी और को क्या पता कि सामने ही एक 'शरीरी आकांक्षा' भी भटक रही है! जरूर यही बात है... यह बात न होती तो कैसे वह उस भूकंप और तूफान से गुजर आया होता... अब?... अब क्या हो?

अचानक उसे बहुत बेचैनी होने लगी कि कैसे वह अपने 'होने' को प्रमाणित करे? कम-से-कम खुद को तो पता चलना चाहिए कि आप हैं भी या नहीं? अगर नहीं हैं, तो इस भाग-दौड़ से कोई फायदा? फिर आपका कोई क्या बिगाड़ सकता है? तब तो किसी हमले, किसी चोट का कोई डर ही नहीं है! सचमुच यह स्थिति कैसी मजेदार है कि हमला करने वाले संगीनें, बंदूकें, छुरे, तलवारें लिये आपके सामने खड़े हैं और आप निडर हो कर उनके सामने घूम रहे हैं, उन्हें मुंह चिढ़ा रहे हैं और हंस रहे हैं, क्योंकि उनके लिए आप हैं ही नहीं—सिर्फ एक पारदर्शी हवा है, जिसके आर-पार सब कुछ देखा जाता है!...

और क्यों जी, अगर आप हैं और यह समझ कर उनके सामने पहुंच जाते हैं कि 'हैं ही नहीं', तो? लेकिन यह तय कैसे हो कि आप हैं या नहीं? नहीं, यह खुद तय नहीं हो सकता... किसी के सामने पहुंच कर, किसी को छू कर, (यानी फिर दूसरों से जुड़ कर?) या किसी से बात करके ही यह तय होगा... लेकिन ऐसा कोई भी तो नहीं दीखता, जिससे 'बात' की जा सके, जिसके सामने जा कर खड़े हुआ जा सके और उसकी प्रतिक्रियाओं से जांचा जा सके कि हां, आप हैं! और उसने पलट कर हमला कर दिया तो?... या उसके पास घातक हथियार हुआ तो? अभी तो सिर्फ शक है, फिर तो सचमुच शरीर छोड़ने की नौबत आ जायेगी... बड़ी मुसीबत है. करूं क्या! बौखला कर उसने लगातार गुड्डी को आवाजें दीं... गुड्डी, गुड्डी... जागो बेटा, देखो, अम्मा आ गयी... और जब अपनी आवाज खुद कानों में पहुंची, तो चौंक कर चुप हो गया... इस तरह आवाजें दे कर खुद खतरे को क्यों बुला रहा है? उसने दांत पीसे... अम्मा... पता नहीं साली कहां जा मरी... मेरी जान को यह मुसीबत छोड़ कर... अब मैं न भाग सकता हूं, न छोड़ सकता हूं, न आसानी से मर सकता हूं, और तो और, इसके सिवा और कुछ सोच भी नहीं पाता... और वह फिर घिसट-घिसट कर भागने लगा... साथ ही उसे यह भी लगता रहा जैसे वह किसी हेलिकॉप्टर में बैठा है... नीचे इस भुनगे जैसी चीज को तटस्थ भाव से भागते और घिसटते 'देख' रहा है... पूरा न सही, उसका कोई हिस्सा जरूर 'प्रेत' हो गया है, वरना वह इस तरह 'तटस्थ ऊंचाई' से अपने इस छटपटाते 'व्यक्ति' को ऐसे साफ-साफ देख कैसे लेता...?

* *

उसने दोनों मुट्ठियों में रेत ले कर अपने मुंह, गरदन और बांहों पर मली. एक तो घावों, खरोंचों और चोटों में इससे आराम मिलता है, पसीना बह-बह कर, गले या पिंडलियों में चींटी रेंगने जैसी अनुभूति नहीं देता— और सबसे बड़ी बात, आपको कोई पहचान नहीं सकता... अगर अपने आपको शीशे में देखूं तो आंखों के दो सूराखों वाला मिट्टी का ढूह लगूं—यह सोच कर उसे कहीं हलका-सा आश्वासन मिला कि अब शायद कोई विशेष रूप से 'उसे' पहचान नहीं पायेगा. हां, इतना ही जानेगा कि कोई है— पता नहीं शत्रु या मित्र... पूरी रोशनी न हो तो शायद मिट्टी का ढेर, या मेंड़ जैसी ही कोई चीज समझे. उसने अपने आपसे कहा, हो सकता है प्रेत की तरह एकदम 'अशरीरी' या अदृश्य न हुआ होऊं, लेकिन 'मेरी अपनी पहचान' तो निश्चय ही अब नहीं रह गयी—कीचड़ में लथपथ कोई भी एक आदमी! सचमुच गौर से देखने पर भी कोई आदमी उसे नहीं पहचान पायेगा? बहुत-बहुत मन हुआ कि शीशा होता तो देखता कैसा लगता है. या गुड्डी ही होश में होती तो उसकी प्रतिक्रिया देख कर वह तय कर लेता कि उसकी 'पहचान' बाकी है या नहीं? हां, आवाज से शायद पकड़ लेती. उसने गला खंखार कर आवाज निकालने की कोशिश की— सपाट और व्यक्तित्वहीन. अपनी इस कोशिश पर खुद उसे हंसी आयी. आदमी का बाहरी रूप-रंग कैसे उसकी चाल, ढाल, व्यवहार और बोली को तय कर देता है! आप एक बार यह मान लीजिए कि आप, आप नहीं— दुष्यंत हैं, सिद्धार्थ हैं— आपका सारा रंग-ढंग, बोली-लहजा, यहां तक कि सोचना तक वैसा ही हो जायेगा! इस क्षण वह एक 'बे-पहचान' आदमी का रूप बनाये है, इसलिए उसका सारा व्यवहार वैसा ही होने लगा है : कल मान लो वह बंदर या भालू का वेश बना ले तो क्या ठीक है, वैसा ही व्यवहार नहीं करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगेगा! उसी तरह चलने या गले से आवाजें निकालने लगेगा?. . .

लेकिन उसे सचमुच पहचानता कौन है? बाप, भाई, पति, दोस्त, या एक शहरी आदमी— क्या अलग-अलग लोगों के सामने उसके अलग-अलग रूप नहीं हैं? अच्छा या बुरा, सब लोग उसे उतना ही तो पहचानते हैं, जितने से उनका संबंध है. इस क्षण जान बचा कर, सिर छिपा कर भागता हुआ एक आदमी. . . इन सब में 'वह' खुद कहां है? इन सबसे हट कर क्या आदमी की अपनी कोई ऐसी 'पहचान' होती है जो कि सिर्फ उसकी 'अपनी' होती है, और किसी दूसरे की नहीं होती? अगर वह पकड़ा जाये तो लोग किसी के 'बाप', किसी के पति, किसी दफ्तर के नौकर, किसी के भाई, किसी शहर, मोहल्ले या मकान के 'रहने वाले' को ही मारेंगे—'उसे' कहां पहचान पायेंगे, मारने से पहले या बाद? —— इन सारे 'नामों' के लबादों के नीचे वह तो अभी तक एक गुमनाम व्यक्ति ही रह कर मर जायेगा. शायद कहीं कुछ कीमती बचाने के लिए, यूं भागते हुए गोली या भाला खा कर मर जाना इतनी बड़ी ट्रेजेडी नहीं है, जितनी बड़ी ट्रेजेडी यह है कि आप मर जायें और कोई जान ही न पाये कि जो मारा गया है, वह है कौन. खुद आपको यह बताने का मौका ही न मिले. . . बाद में रह जाये सिर्फ एक लावारिस, गुमनाम, बेपहचान लाश. . .

* *

इस क्षण एक भयानक संभ्रम के साथ उसे महसूस हुआ कि वह सिर्फ सामने वाली झाड़ी की ही तरफ नहीं भाग रहा. . . पीछे खून की होली खेलते, लूटते, चीखते, चिल्लाते लोगों की तरफ भी भाग रहा है! . . . उसकी यह सारी दौड़, अपनी पहचान खो कर अदृश्य, अशरीरी और आसपास की हवा-पानी जैसी चीज बन कर अपने को 'खो देने' की ही दौड़ नहीं है, बल्कि अपने को 'पहचाने' जाने की, अपनी इस पहचान को स्थापित करने की—युद्धक्षेत्र में जा कर अपने होने की सूचना देने की, भी दौड़ है. . . चाहे इस पहचाने जाने के एकदम बाद ही उसे क्यों न मर जाना पड़े—इस कीमत पर भी. . . उस क्षण सचमुच बेहद शिद्दत से उसे महसूस हुआ कि यह दौड़ इकहरी नहीं, हर पल दुहरी रही है—एक साथ दो धरातलों पर रही है और तब वह किसी भी तरह तय नहीं कर पाया कि वह मौत से बच कर भागता रहा है, या मौत की तरफ भागता रहा है. . . वह 'गुमनामियत' की तरफ भाग रहा है या अपनी 'पहचान' स्थापित करने की तरफ. . .

इस दुतरफा दौड़ के संभ्रम और कन्फ्यूजन को वह अपने लिए ही समझ सके, या आत्मसात् कर पाये, इससे पहले ही एक अजीब बात उसके मन में आयी : हो सकता है कि वह दौड़ ही न रहा हो, सिर्फ खड़ा हो, और उसे लग रहा हो कि वह यहां से वहां दौड़ रहा है. . . उसने पागल की तरह जोर से सिर झटका और नींद से जागे हुए आदमी की तरह इधर-उधर आगे-पीछे देखा. . . नहीं-नहीं, ऐसी बात नहीं है. काफी चीजें पीछे छूट गयी हैं, उसके और झाड़ी के बीच की दूरी निश्चय ही कम हुई है, अभी-अभी वह जलते हुए शहर के मकान, चौराहे, रास्ते और मोड़ छोड़ कर आया है. . बात इतनी ही है कि वह बेहद थक गया है, या यह भी हो सकता है कि ऐसे आतंक-प्रद नस-तोड़ अनुभव से गुजरा है कि 'बच निकलने' की उसकी इच्छा ही मर गयी है, और अभ्यास-वश ही झाड़ी की तरफ दौड़ रहा है, और जानता है कि इस दौड़ को वह कभी भी खत्म कर सकता है : उसके खड़े रहने या बैठने में अब कहीं कोई फर्क ही नहीं रह गया है! इसके साथ ही, अचानक और अकारण ही एक सपना उसे याद आने लगा. जान बचाने के लिए दौड़ते हुए इस सपने के याद आने की बात सोचते हुए उसे बेहद आश्चर्य और झल्लाहट भी महसूस हुई : यह भी कोई समय है, सपना याद आने का?. . .लेकिन लाख न चाहने पर भी सपने का एक-एक रंग कैसा चटख हो कर जागा है उसके भीतर! . . . एक टैक्सी की छत पर वह लेटा है, पीली छत, नीचे की काली बॉडी, चमकता हुआ बोनेट, टैक्सी का मीटर. . . टैक्सी पूरी स्पीड से भाग रही है, और नीचे ड्राइवर अपने साथी को कोई किस्सा सुना रहा है. आसमान भूरा काला है और वे लोग पुराने बने हुए भारी, नीची मेहराबों वाले पुलों में से गुजरते हैं. . .ऊपर लेटे होने के कारण वह धुआंरे-गेरुए भारी पुलों की छतों को एकदम साफ देखता है. टैक्सी एक बहुत बड़े, शायद अशोका, होटल पहुंच कर रुकती है. वहां उत्सव-समारोह जैसा कुछ हो रहा है. बहुत-सी झंडियां लगी हैं, द्वार बने हैं. . . चारों तरफ बहुत बड़े-बड़े बैंगनी, मखमल जैसे चमकदार गलीचे फैले हैं. . .पीले, लाल, बैंगनी गुब्बारों के गुच्छे और कतारें लटकी हैं. लोग बढ़िया सूटों और औरतें रंग-बिरंगी साड़ियों, स्कर्टों और कोटों में आ रही हैं. पता नहीं, कब और कैसे वह, बैंगनी कालीन बिछी ऊंची-सी छत के एकदम किनारे पर जा बैठा है और नीचे, खुले में होते समारोह को देख रहा है. . .यहां टैरेस सिर्फ इतनी ऊंची है कि नीचे के लोग हाथ बढ़ायें तो वह छू सकता है. . .वह उनकी सारी बातें, बहसें, कहकहे और मजाक सुन सकता है. . .सबके हाथों में कोई प्लेट या गिलास है. शायद उन्हें पता भी नहीं है कि 'ऊपर' से उन्हें कोई देख रहा है. वह इतने किनारे बैठा है कि हर क्षण हाथों का सहारा दे कर नीचे फिसलने से अपने आपको रोके हुए है. फिसल कर वह उनमें शामिल हो सकता है, लेकिन वह वहीं रहना चाहता है, ऊपर. . उसे हर क्षण खयाल है कि बाहर टैक्सी उसकी राह देख रही है. फिर कुछ बदलता है और गहरे चॉकलेट के रंग वाली साड़ी पहने एक औरत के साथ वहीं खुली छत के किनारे पर वह अपने को संभोग करते हुए देखता है. .औरत का चेहरा नहीं दीखता. हां, खुशबू की लपट उसके नथुनों तक आती महसूस होती है. यह बात उसे काफी मजेदार लगती है कि नीचे लोग हंस-खा रहे हैं, और उनसे हाथ भर की ऊंचाई पर ही वह ऐसी निश्चिंतता से औरत को भोग रहा है और इस बात का किसी को आभास भी नहीं है. . .फिर भी सावधानी के तौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर दोनों ने अपने शरीर से कोई भी कपड़ा नहीं उतारा है. . .छत के किनारे से फिसल कर वह नीचे गिरने-गिरने को होता है कि उसकी आंख खुल जाती है. .

जिस रात उसने यह सपना देखा था, तब भी सोचता रहा था कि इसका क्या अर्थ है, इसमें मन के भीतर की क्या चीज अभिव्यक्त होती है? लेकिन इस समय तो उसे बेहद खीझ और झुंझलाहट हो रही थी. . . कोई मौका है इस सपने के याद आने का? और देखो, न सिर्फ याद आ रहा है, बल्कि एक-एक रंग कितना साफ और चमकीला हो कर दीख रहा है! . . . जैसे रंगीन फिल्म का कोई दृश्य हो. . .वह औरत कौन हो सकती है? गुड्डी की मां तो नहीं थी. उसके हाथ, कोमल पकड़, चुंबन, सभी कुछ याद है––सिर्फ चेहरा सामने नहीं आता. . .अगर बच गया तो जरूर किसी मनोविज्ञान-वेत्ता से इसका अर्थ पूछेगा. . .ताज्जुब की बात है, इस सारे समारोह या सपने में न कहीं गुड्डी है, न गुड्डी की मां. . .

गुड्डी की मां होगी कहां इस समय. . .? लगता है जैसे कहीं बहुत-बहुत दूर चली गयी है और शायद कभी वापस लौट कर नहीं आयेगी. . .लेकिन इस 'बला' का मैं क्या करूं? 'पापा, देखिए, हमने आपके नेल-पॉलिश लगायी. आप सो रहे थे, आपको तो पता भी नहीं. . ' यह वाक्य इस समय कहां से उछल कर आ गया? 'हम पापा को दूध पिलायेंगे. . .' और फिर पापा की तस्वीर के मुंह में दूध की बोतल लगाना. क्यों ये सब उसे इस बेमौके याद आ रहा है? . . .अरे कमबख्त, यह समय इस सब में 'डूबने' का नहीं, इस सबको भविष्य के लिए बचा लेने का है. . .अंधेरी सुरंग के दूसरे सिरे पर दीखती रोशनी तक भाग लेने का है. . .भागो-भागो. . .खूंखार और खौफनाक, भूखे भेड़ियों की लपलपाती जीभों और गुर्राती आंखों वाले इस चारों तरफ से दबोचते अंधेरे के पार निकल जाओ, जैसे भी हो, अपने लिए नहीं, इसके लिए. . .

★ ★

मगर जरा-सा रुक कर, बार-बार उभरते मन के संदेह को मिटा क्यों नहीं लेता? वहां पहुंच कर बंडल में भरी हुई गुड्डी को पानी के धक्के से अभी ही छुटकारा क्यों नहीं पा लेता? इस समय उसमें सब कुछ बर्दाश्त कर लेने की ताकत है. . .अगर मर ही गयी है तो एक तरफ फेंक-फांक कर इस बचाव की लड़ाई से छुट्टी पाओ. . .फिर तुम भी एक बंदूक, एक भाला, एक तलवार या कोई भी चीज उठा कर इन हमलावरों में शामिल नहीं हो सकते? सचमुच उसे लगा कि इस गुड्डी के नाम पर वह अपने भीतर की कायरता को कब तक पालता रहेगा? ये खून के प्यासे, जल्लादों जैसे दीखने वाले हमलावर भी तो भीतर से डरे हुए, अपनी ही कायरता के दंश से खाये हुए उस जैसे लोग हैं! वह भी अंधाधुंध गोलियां चलाये, लूट-पाट मचाये और जो सामने आये, उस पर संगीन ले कर झपट पड़े. . .उन्हें तो शायद पता भी नहीं चलेगा कि कब उनमें एक और आदमी आ शामिल हुआ है! इस डर और खतरे से बचने का सिर्फ एक ही उपाय है! तब वह खुद औरों के लिए एक खतरा हो जायेगा. . .अपने जैसे कमजोर, मुलायम और डरे हुए लोगों को दौड़ा-दौड़ा कर मारने वाला एक आतंक. . . सिर्फ बच-बच कर भागते, अपने को इस-उस आड़ में छिपाते लोगों की इस माहौल में कोई जगह नहीं है. . .और अगर उसे यही जीवन जीना है, तो किसी गिरती छत, किसी गोली, किसी संगीन या किसी उड़ते पत्थर-भाले का निशाना बन कर मर ही जाना चाहिए. . . मर भी गया तो दुनिया में कहां क्या रुक जायेगा. . .?

नहीं-नहीं, गुड्डी का बहाना झूठ है. वह अच्छी तरह जानता है कि गुड्डी बेहोश नहीं है, मर गयी है. वह तभी मर गयी थी, जब अपने घर की ही चौखट उस पर गिरी थी, भरपूर और बेरहम. . .इस भाग-दौड़ के बावजूद क्या उसे एक क्षण का भी समय नहीं मिला कि वह कंबल खोल कर देख लेता, उसकी सांस को महसूस करके समझ लेता कि उसमें कुछ बचा भी है या नहीं? लेकिन नहीं, उसने जान-बूझ कर ऐसा नहीं किया. वरना हो सकता है, इतनी देर से अपने बचाव की इस दौड़ का सारा भ्रम, इस कायरता की सारी गरिमा चूर-चूर हो जाती. जिन बातों और जिन भावनाओं को भीतर जगा-जगा कर वह अपने आपको दौड़ाये जा रहा है, वे सब कहां से आतीं? फिर तो निश्चय ही हो जाता कि वह लाश को लिये-लिये भाग रहा है. और तब इसे फेंकने के सिवा कोई रास्ता नहीं रहता. . .या कहना चाहिए, निर्णय लेने की अनिवार्य मजबूरी से बच निकलना असंभव हो जाता. . . उसकी यह सारी दौड़ किसी भी निर्णय से बचते जाने की दौड़ के सिवा और क्या है? तब हो सकता है कि उसे हमलावरों में शामिल हो जाने का ही निर्णय ले लेना पड़ता. . . वह भी उछल-उछल कर लोगों को मारता. . .जरूरत-बेजरूरत की चीजें छीनता. . .औरतों-बच्चों के नाजुक शरीर में घप् से संगीन घोपने का मजा लेता. . .सुनते हैं निरंकुश क्रूरता, और बे-लगाम हिंसा का भी अपना एक नशा और आनंद है, एक शब्दातीत थ्रिल है–– अगर यह सब न होता तो आदमी में इतना जोश, यह उत्साह और शक्ति-सामर्थ्य कहां से आते? कम-से-कम एक बार हिंसा के इस सुख को जान लेने में बुराई क्या है?

अभी तक इन लोगों में शामिल हो जाने की बात उसके मन में क्यों नहीं आयी? इतना तो उसे भी पता ही था कि उसके आस-पास ही कुछ लोग हैं जो चुप-चाप इस तरह की ट्रेनिंग ले रहे हैं. कुछ स्थानों की सूचना भी उसके पास थी, जहां मारने, लूट लेने, आग लगाने या पीछा करके दबोच लेने की शिक्षा दी जाती है. सुना था कि सबसे पहले व्यक्ति, देश, मानवता और जाने किस-किसके भविष्य की सुरक्षा वाले बौद्धिक विमर्श होते हैं––व्यक्ति को मानसिक रूप से ऐसे सिद्धांतों के आदर्श और लक्ष्य समझाये जाते हैं, जहां ये सारे कार्य गलत न लगें. व्यक्तिगत रूप से की गयी हत्या आदमी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की आत्मा पर बोझ बनी रहती है, सिद्धांत और आदर्श के लिए की गयी हत्या उसे आध्यात्मिक शक्ति देती है. इसमें दोनों तरफ से व्यक्ति की अपनी पहचान को निकाल देना होता है. न आप व्यक्ति हैं, न वह जो मरता है. वह आपका नहीं, आपके आदर्शों का दुश्मन है. अतः उसे हटा देना हत्या करना नहीं, महान लक्ष्य को प्राप्त करने का एक प्रयास है. अगर इस ट्रेनिंग का वह शुरू से ही एक हिस्सा बन जाता तो शायद आज यह परेशानी न होती.'

उसके दफ्तर और घर के पास-पड़ोस के जाने कितने लोग चुप-चुप वहां जाते थे; इसकी जानकारी उसे थी. कुछ ने उससे कहा भी कि अगर वह चाहे तो चल सकता है, मगर लापरवाही से उसने टाल दिया. हुंह, हमें उस सबसे क्या! हमारी तो यही शांत जिंदगी ठीक है, जहां एक बच्ची से सारा घर जगमगाया रहता है. उसके साथ बिताने को चाहे समय न मिल पाता हो, लेकिन हर पल, जाने-अनजाने नसों के भीतर कोई घुटनों चलता रहता है, किलक कर हंसता है, गोद में आने को मचलता है, दूध न पीने की जिद करता है और बाजार घूमने के लिए हाथ-पांव मारता है. सोती हुई बच्ची कैसी नन्हीं देव-शिशु-सी लगती है! सोचता था कि उसी की मुसकराहटों में जिंदगी का कुछ समय निकल जायेगा, हमें छुरे-तलवारों के खेल या ट्रेनिंग से क्या करना है! ताज्जुब होता था कि इस बच्ची के होने ने उसकी सारी बनावट में कितना बदलाव पैदा कर दिया था. वह कहीं भी कुछ क्रूर, गलत या झूठ करने को होता तो भीतर धुंधलके में एक निराकार हाथ उसकी कलाई पकड़ लेता. वह अपने आपको इतना शांत, भरा, व्यस्त और उल्लसित-सा अनुभव करता रहता कि कभी खयाल भी न आता कि कहीं कुछ लोग आसपास ही लूट-पाट और मार-पीट की ट्रेनिंग ले रहे हैं. कभी-कभी किसी दोस्त से हंसी-मजाक या बहस करते हुए उसे अचानक ध्यान आता : हो सकता है, यह भी वैसी ही ट्रेनिंग ले रहा हो. इस खयाल के साथ ही वह झटके से चुप हो जाता. फिर अपने आपको समझाता कि यह उसका भ्रम है. अगर यह वैसी ट्रेनिंग ले रहा होता तो शायद मुझसे ऐसे मुक्त भाव से न मिलता. और यह भी हो सकता है कि मेरा संपर्क ही इसके भीतर के किसी कोमल और मानवीय भाव को जगाये रखे. . .अब तो अफसोस ही होता है कि आसपास को भूल कर मुग्ध भाव से जीते चले जाने की कितनी भारी कीमत उसे चुकानी पड़ रही है. गुड्डी जिंदगी को आनंद-उल्लास से भरने का स्रोत हो सकती है, जिंदगी को बचाने का हथियार तो नहीं हो सकती. बच्चा सिर्फ सार्थकता दे सकता है, सुरक्षा नहीं. और यह क्षण तो अपने सबसे मूल्यवान और सार्थक को बचा लेने का है. चूंकि अपने सार्थक और मूल्यवान को बचाना असंभव और नामुमकिन हो गया है, इसलिए हमलावरों में शामिल हो कर हरेक के सार्थक और मूल्यवान को समाप्त कर देना चाहिए—यह उससे नहीं हो पा रहा है. . .कमजोर, कायर, बुज-दिल कुछ भी सही, इस स्थिति में आ कर वह 'उनका' हिस्सा नहीं ही हो पायेगा. . .उसके प्रारब्ध में सिर्फ बचाव की लड़ाई ही रह गयी है. . .

★ ★

उसे अकसर आश्चर्य होता है कि क्या सचमुच इन लोगों के पास कुछ भी मूल्यवान और सार्थक ऐसा नहीं रह गया है, जिसे बचाने की बात मन में आये? तभी तो ये लोग दल-के-दल दूसरों के सार्थक और मूल्यवान को तहस-नहस करते, लूट-पाट मचाते इधर से उधर दौड़ रहे हैं. हाथों में न सही, क्या मन में भी इनके कोई 'गुड्डी' नहीं है? रही तो जरूर होगी, लेकिन या तो इन्होंने उसे कहीं फेंक-फांक दिया है, या अपने भीतर ही उसकी लाश को दफना कर अब बनैली चिंघाड़ों के साथ संगीनें ले कर निकल आये हैं. जब अपनी ही गुड्डी नहीं रहती तो वे किसी की भी गुड्डी को जीवित और साबुत नहीं छोड़ेंगे. . .यानी इनका लक्ष्य मैं नहीं, मेरे हाथों का यह बंडल है—यानी सारी आफत की जड़ यही है, वरना मुझे मार कर इन्हें क्या मिलेगा? ओहो! कितनी सीधी-सी बात है! इन्हें कुछ लेना थोड़े ही है! ये तो संगीनों की रोशनी में सिर्फ उस संतोष को तलाश कर रहे हैं कि जो कुछ इनके अपने पास नहीं है, उसे कहीं भी किसी दूसरे के पास क्यों छोड़ा जाये?. . . उसे ही, आखिर, इस बंडल से इतना मोह क्यों है? क्यों नहीं दोनों हाथ बढ़ा कर कह देता, लो दोस्तो, जिस चीज की तुम्हें तलाश है, वह यह है. इसे कोंचो, मारो, रौंदो, कुचलो, और मुझे चारों ओर से ठोकर खाती फुटबाल की नियति से छुटकारा दिलाओ. . .यह न हो तो मैं भी तुममें एक हूं? फर्क कहां है? मगर इतने से वे मान जायेंगे? उन्हें कुछ भी चाहिए कहां?. . . उन्हें तो आखेट का सुख चाहिए. . . .

लेकिन नियति को चुन सकना, या यूं झटके से बदल सकना क्या अब सचमुच उसके हाथ में रह गया है? गुड्डी मर गयी है या जिंदा है, नहीं जानता. उसके मर जाने की सचाई का सामना न कर पाने की कायरता ही, हो सकता है, उसे दौड़ा रही हो. हो सकता है, उसकी यह दौड़ उसे कहीं न ले जा रही हो, और यह भी सच हो कि वह सिर्फ अपनी जान बचाने के लिए, जादुई तावीज की तरह गुड्डी को लिये-लिये भाग रहा हो, और तावीज का जादू एक चुटकी राख से ज्यादा कुछ न रह गया हो. . . इस सबको न वह अलग-अलग करके सोच सकता है, न कोई निर्णय ले सकता है. . . सिर्फ इतना साफ है कि इसी बंडल ने अब तक की इस सारी दौड़ को सार्थकता दी है. . .

और वह तो अपनी एक बहुत भीतरी सतह पर सिर्फ इतना जानता है कि ज़रा सांस लेने का मौका, सुस्ता लेने की सुरक्षा मिल जाये तो गुड्डी के शरीर की हलकी-सी बची गरमाहट को भी वह जीवन में बदल सकता है. . . उसका मर जाना असंभव है और तब यह सारी यात्रा, अंगारों से नंगे पांव गुजरने की सारी यातना सिर्फ एक बीता हुआ दुःस्वप्न बन कर रह जायेगी.

लेकिन पहले उस झाड़ी तक तो पहुंचे. . .□□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीदी के आने की खबर सुन कर जहां सारे घर में खुशी की एक लहर दौड़ गयी थी, वहां थोड़ी ही देर बाद सब के चेहरे पर उदासी का एक सैलाब-सा उतर आया था. यह सैलाब पापा के चेहरे से होता हुआ सबके चेहरे पर फैलता चला गया था.

—पत्र दोबारा तो पढ़ना. अचानक ही यहां चले आने का प्रोग्राम कैसे बन गया? ममी का एक-एक शब्द जैसे किसी कब्र के नीचे से निकल रहा हो. क्षण भर में पापा के चेहरे पर उदासी की जगह क्रोध की रेखाएं खिच आयीं. पत्र को पटकते हुए बोले थे, क्या अनपढ़ समझ रखा है मुझे?

—मैंने यह कब कहा? ममी कुछ गुस्से में कह कर एकदम सहज हो उठी थीं. कुछ क्षण रुक कर बोलीं, सुधीर भी साथ ही आ रहा है?

—नहीं, अकेली बच्चों को ले कर आ रही है. पापा जैसे न चाहते हुए भी ममी की बात का उत्तर दे गये थे.

—शुक्र करो, वह साथ नहीं आ रहा वर्ना. . . .

—क्या रज्जो कुछ न पूछेगी?

—तो पहले सोचना था इस बात का. . . . मैं न कहती थी सोच-समझ कर पैसा खर्च करो.

न चाहते हुए

—विकेश निझावन

—क्या सब कुछ मैंने अपने लिए ही किया है?

—अपने लिए किया है या दूसरों के लिए, किया तो तुम्हीं ने ही है. ममी का गला पूरी तरह भर्रा आया था. पापा असहाय-सी दृष्टि से भैया के चेहरे की ओर देखने लगे.

भैया, जो अब तक खामोश खड़े थे, फट से पड़े —इसमें परेशान होने की क्या बात है! पैसा ही है न, कर देंगे वापिस. और सर फटकते हुए वे तेजी से बाहर चले गये थे.

दरवाजे को भीतर से बंद कर मैं अलमारी में से पास-बुक निकाल कर देखने लगा था. जानता था, पास-बुक में तीन हजार रुपया रह गया है, लेकिन इस सच्चाई को जैसे झुठला देना चाहता था. इस बार तीन हजार के अक्षर, लिखे होने की बजाय खुदे हुए-से महसूस होने लगे थे. और उन अक्षरों के बीच एक प्रश्न उभर आया था— बाकी का तीस हजार रुपया? चार वर्षों में तीस हजार रुपया खर्च हो गया. दीदी सुनेगी तो क्या कहेगी?

दीदी को देहली से ले आने के बारे में ममी ने भैया से बात की तो भैया बोले— शील को भी जा कर लाना है. वह अकेली कैसे आयेगी? मन में आया था कह दूं, दीदी इतनी दूर से आ सकती है तो भाभी नहीं आ सकती. लेकिन यह सब कह पाना क्या इतना आसान था? तभी पापा भीतर आते हुए बोले थे— देहली तो मैं चला जाऊंगा, तुम बहू को जा कर ले आना.

अगले रोज शाम को भैया फरीदाबाद और पापा देहली चले गये थे. उन दोनों के चले जाने से घर में छा गये मौन के साथ उदासी जैसे और बढ़ गयी थी. ममी रह-रह कर एक उसांस-सी भरतीं— हाय राम, अब क्या होगा. और इधर-उधर पड़ी चीजों को एकटक घूरने-सी लगतीं.

—ममी, दीदी परायी थोड़ी ही है. हमने जो कुछ खरीदा है, उन्हें देख कर दीदी प्रसन्न ही होगी.

—तू नहीं जानता, जहां पैसे की बात आ जाये, वहां अपने भी पराये हो जाते हैं. और लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे?

लोग सुनेंगे? उन्हें कैसे पता चलेगा? कौन बतलायेगा? दीदी नहीं-नहीं, यह भला कैसे हो सकता है. और उस रोज न जाने क्या-क्या सोचता चला गया था मैं.

अगले दिन शाम की गाड़ी से पापा, दीदी, बिंदु और टिंकू आ गये थे.

—अरे, तुम तो बहुत बड़े हो गये हो. मुझे गले से लगाते हुए दीदी बोली थी. कुछ क्षण दीदी के सीने पर चेहरा गड़ाये खड़ा रहा. जी चाहा था, फूट-फूट कर रो दूं. लेकिन अपने को संभालते हुए बोला था— हां दीदी, हर कोई बड़ा हो जाता है. देखो न, टिंकू भी तो कितना बड़ा हो गया है. मेरी इस साधारण-सी बात पर दीदी इस तरह हंस पड़ीं, मानो मैंने कोई बहुत बड़ी बात कह दी हो.

—भैया नजर नहीं आ रहे? उधर-उधर नजर दौड़ाते हुए दीदी बोली थी.

—बहू को लेने गया हुआ है. आज आ तो जाना चाहिए था. शायद रात को गाड़ी से आ जाये.

न जाने क्यों मन ही मन ममी की बात पर मुस्करा दिया था. तभी मन में एक विचार उठा था, हंसी का एक ठहाका लगा कर कहूं, दीदी, भैया तुम्हारे डर से रुक गये होंगे.

—ममी, भैया की शादी पर हम कुछ न भेज सके. भाभी के लिए दो साड़ियां और भैया के लिए घड़ी इन्होंने ले कर भी रखी थी. लेकिन उस समय कोई लानेवाला ही नहीं था. बॉय पोस्ट भेजना तो और भी मुश्किल है. इतने की चीज नहीं होतीं जितनी ऊपर ड्यूटी लग जाती है.

तभी टिंकू ने दीदी के गले में बाहें डालते हुए कुछ कहा था.

—ममी, बच्चों को भूख लगी है.

—क्या खायेंगे ये?

—एग्ज.

ममी की बात का जवाब टिंकू ने दिया था.

—अंडे तो फ्रिज में रखे होंगे. डाईनिंग रूम की ओर नजर दौड़ाते हुए पापा बोले थे.

—पापा, फ्रिज कब लिया? पापा इधर-उधर देखने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगे थे, मानो फ्रिज का नाम ले कर कोई बहुत बड़ी भूल कर बैठे हों.

—अभी पिछले साल ही तो लिया है. तुम्हारी भाभी की बहुत इच्छा थी कि फ्रिज ले लिया जाये.

—हां, होनी भी क्यों नहीं चाहिए. बहुत आराम रहता है इन चीजों से. वहां पर तो इन सबके बिना गुजारा ही नहीं.

—सुधीर का काम-काज कैसा चल रहा है? पापा ने शायद विषय बदलने के लिए ही यह बात पूछी थी.

—पापा, काम तो ठीक है. मेहनत बहुत करनी पड़ती है. सुबह आठ बजे जाते हैं और रात आठ बजे के बाद ही लौटते हैं. कई बार तो बच्चे पूछ बैठते हैं, ममी, पापा कहां गये हुए हैं?

—पिछले दिनों तूने लिखा था कि सुधीर बीमार भी रहा.

—हां पापा, वहां का क्लाईमेट भी इन्हें सूट नहीं किया. डाक्टर ने तो यह भी कहा था, इन्हें सर्दियों में इंडिया आ जाना चाहिए. लेकिन ये नहीं माने. कहने लगे. पहले तुम चली जाओ. पापा और भैया से राय लेकर लिखना, तब मैं आ जाऊंगा.

—वह ठीक कहता है. आजकल यहां नौकरी मिलना भी तो आसान नहीं.

—नौकरी तो अब ये करना भी नहीं चाहते. कह रहे थे, इंडिया में ही कोई अच्छा-सा बिजनस शुरू कर लें. तीस-पैंतीस हजार रुपया यहां जमा हैं ही. कुछ ये वहां से आती दफा ले ही आयेंगे.

—लेकिन बिजनेस चलना भी तो आसान नहीं.

—हां, यही तो अभी सोचना है.

—अब बिजनस की बातें ही करते रहोगे या इन्हें कुछ खाने भी दोगे, ममी पास आते हुए बोली थीं.

दीदी उठ कर किचन में चली गयी.

रात खाना खाने के बाद दीदी काफी देर तक वहां के बारे में बताती रहीं. रह-रह कर ममी की आंखें विस्मय से फैल-सी जाती थी.

अभी बातें चल ही रही थी तो भैया और भाभी आ गये.

जिस आदर और स्नेह से भैया और भाभी ने दीदी का स्वागत किया था, वह चंद ही दिनों तक रहा.

एक रोज दीदी छत पर थीं तो भैया कह रहे थे—इतनी तो हम लोगों की कमाई नहीं जितना इन लोगों के आने से खर्च बढ़ गया है. अंडे और मीट के बिना इनका गुजारा नहीं, तभी सीढ़ियों पर हलकी-सी पदचाप से भैया खामोश हो गये थे.

अगले रोज अपने कमरे में बैठा पढ़ रहा था तो दीदी भीतर आयी. न जाने क्यों दीदी से नजर मिला पाने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी.

—अगले वर्ष क्या करने का इरादा है? कुर्सी के कंधे पर हाथ रखते हुए दीदी बोली थीं.

—प्री-मेडिकल तो नहीं करूंगा. इतने मुश्किल सब्जेक्टस मुझसे नहीं पढ़े जाते.

—सुन!

—हूं. मैंने नजर उठायी. महसूस किया कि दीदी कुछ और कहना चाहती हैं. यह सब तो शायद. . . .

—पास-बुक कहां है?

लगा, जैसे पैरों तले से जमीन खिसक गयी है. यह बात मुझसे ही क्यों पूछती दीदी ने. . . .? जाती दफा पास-बुक मुझे ही रखने को कह गयी थीं, शायद इसलिए.

—पापा के पास है? मेरे चेहरे पर उतर आयी घबराहट को देखते हुए ही शायद दीदी ने कहा था.

—नहीं तो. अनायास ही जैसे मुंह से निकल आया. पास-बुक पापा को ही दे दी होती तो अच्छा था. अपने आप सामना करते इस स्थिति का.

—तो कहां है?

—अलमारी में रखी है. उठने को हुआ तो दीदी ने मेरा कंधा दबा दिया, तू बैठ, मैं उठा लाती हूं.

एक तिरछी नजर दीदी की ओर डाली. अल्मारी खोल वह इधर-उधर देखने लगी थीं.

—यही है न? दीदी पास आते हुए बोलीं.

बिना कुछ कहे-सिर हिला दिया था. दीदी पास-बुक खोलने लगीं. लगा था, अभी कोई विस्फोट होगा.

—पैसा किसी को दिया हुआ है?

—नहीं. चाहते हुए भी दीदी के चेहरे की ओर देख न पाया. दीदी सामनेवाली कुर्सी पर बैठ गयी थीं.

—कुछ लिया है इनका?

क्षण भर को दीदी के चेहरे की ओर देखा और फिर गर्दन झुका ली.

—बोलते क्यों नहीं? इस बार दीदी का स्वर कुछ कठोर था. सहसा ममी की बात 'पैसे की बात आ जाये तो अपने भी पराये हो जाते हैं' मस्तिष्क में दौड़ गयी थी.

—पिछले साल. . . . स्कूटर का नंबर आ गया था तो भैया ने. . . . कुछ दबे हुए स्वर में इतना ही कह पाया था.

—स्कूटर पर कितने लगे होंगे, चार हजार. बाकी का पैसा कहां गया?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक बार फिर असहाय-सी दृष्टि दीदी की ओर डाली.

—घर में स्कूटर आ गया है. . . . फ्रिज. . . . कूलर. . . . बड़ी अलमारी. . . .क्या ये भी उन्हीं पैसों से नहीं लिये?

दीदी सब समझ गयी हैं. मैं बुत-सा बना बैठा रहा.

—मैं तो आते ही समझ गयी थी. जिन चीजों को पापा बीस वर्षों में न खरीद सके, वो सब चार वर्षों में खरीद लेना इतना आसान था? भाभी दहेज में कुछ लायी नहीं. . . .और पम्मी को सब कुछ दिया गया था . आखिर कहां से आ गया था वह सब. . . . ? बिट्टू, ये मत सोचो मुझे इस बात से दुख हो रहा है कि ये सब क्यों हो गया. लेकिन मेरा भी तो कुछ सोचा होता. . . . अगर ये साथ आ जाते तो?

मेरे भीतर भर आयी घुटन, आंसुओं में बदल चुकी थी. रुआंसे-से स्वर में दीदी पुनः बोली— न जाने मैं सब कुछ तुम्हीं से ही क्यों कह गयी. जिनसे कहना चाहिए, उनके आगे जबान नहीं खुलती. अब इन्हें क्या लिखूं! कल वाले पत्र में भी इन्होंने यही लिखा था कि पापा और विजय से बिजनेस के बारे में बात करूं. आखिर क्या बात करूं? पापा इतना पैसा जुटा पायेंगे अब? क्या इन सब चीजों को बेच सकते हैं?

★ ★

उस रोज से दीदी के सामने बहुत कम गया था. रात काफी देर तक करवटें बदलता रहा. नींद आयी तो एक अजीब-सा ख्वाब आंखों में तिर आया. मम्मी और दीदी का किसी बात पर झगड़ा हो रहा है. पापा उन्हें समझा रहे हैं. तभी भैया ने जीजाजी के बारे में कुछ अपशब्द कहे हैं और दीदी चिल्ला-सी पड़ी हैं. उन्हें दोष देने की बजाय जरा अपनी ओर भी देखा होता. कुछ भी शर्म होती तो मेरे आने से पहले ही चीजों को बेच दिया होता.

—दीदी! तभी एक हल्की-सी चीख के साथ. . . . मैं उठ बैठा था.

—क्या बात है? पास वाले पलंग पर दीदी करवट बदलते हुए बोलीं. ऐसा लगा जैसे दीदी पहले से ही जाग रही हैं.

—कुछ नहीं! और मैं फिर लेट गया.

—तबीयत तो ठीक है न? मेरे माथे पर हाथ रखते हुए दीदी बोलीं.

—हां, बस यूं ही.

—स्वप्न आ रहा होगा.

मैं निरुत्तर-सा आकाश की ओर देखने लगा था. तभी एक तारा टूटा और मैंने आंखें बंद कर लीं. फिर एक के बाद एक ना जाने कितने तारे टूटने लगे थे.

सुबह नींद कुछ देर से उघड़ी. दीदी उठ गयी थीं. टिंकू और बिंदू एक दूसरे के सीने पर हाथ रखे सो रहे थे. उनका भोला-सा चेहरा देख मन में प्यार उमड़ आया था.तभी दीदी चाय का प्याला लिये भीतर आयीं.

—लो, चाय पियो.

—मैं खुद ही. . . .

—आज हमारे हाथ की चाय पियो. सारी उमर दूसरों की सेवा कर के कभी-कभी यह जी नहीं चाहता कि कोई हमें भी पूछे? मैंने महसूस किया कि दीदी यह मुझे नहीं कह रही, बल्कि यह उसका अपना ही आक्रोश है जिसे वह किसी भी रूप में जता देना चाहती है. तभी वह हंसते हुए बोली थीं— सुबह-सुबह कहां की फिलासफी ले बैठी. मैं न चाहते हुए भी फीका-सा मुस्करा दिया. दीदी एक टक मेरे चेहरे की ओर देखने लगी.

—बहुत जल्दी घबरा जाते हो. जिंदगी में जो भी मुश्किल सामने आती है, उसका कोई न कोई हल भी अवश्य होता है. दीदी ने जिस आश्वासन से कहा, लगा था, जैसे दीदी को भी अपनी समस्या का कोई हल मिल गया है. मैंने एक प्रश्नवाचक दृष्टि दीदी पर डाली.

—तुम पढ़-लिख जाओ, अच्छे सेटल हो जाओ, मुझे और कुछ नहीं चाहिए.

आज दीदी के चेहरे पर उदासी की कोई झलक नहीं थी. बल्कि पहले की अपेक्षा अधिक प्रसन्न नजर आने लगी थीं.

—सुनो, आज बैंक से तीन सौ रुपया निकलवा लाना. किसी से बतलाना नहीं. हां, यह भी नहीं कहना कि मैंने पास-बुक देखी है.

—अगर पास-बुक पापा ने मांगी तो?

मैंने जिस दृढ़ता से प्रश्न किया, दीदी उसी दृढ़ता से बोली थीं—तो बतला देना कि मेरे पास है.

कल तक मैं अपने को जितना कमजोर महसूस करने लगा था, आज मेरे भीतर उतनी ही दृढ़ता समा गयी थी.

शाम की डाक से जीजाजी का एक और पत्र आया.

—क्या लिखा है? दीदी पत्र पढ़ चुकीं तो पापा बोले थे. मम्मी और भैया भी पास ही खड़े थे.

—कुछ भी तो नहीं, बस ठीक-ठाक ही लिखा है.

—कुछ आने के बारे में? भैया बोले थे.

दीदी ने बिना कुछ कहे पत्र भैया की ओर बढ़ा दिया. सभी की नजर भैया की ओर उठ गयी थी.

—न जाने जीजाजी ने यहां आने की रट क्यों लगा रखी है. पत्र पढ़ने के बाद भैया बोले.

—मैं भी यही सोचती हूं. . . .बिजनेस चलाना कोई आसान थोड़े ही है. और फिर बच्चे भी यहां एडजस्ट नहीं हो पा रहे हैं. जब से आये हैं, बिंदु बीमार रहने लगी है. पिंकू की पढ़ाई में भी हर्जा होगा. यहां और वहां की पढ़ाई में भी तो कितना फर्क है.

दीदी कह रही थीं तो मैंने देखा, मम्मी पापा एक दूसरे के चेहरे की तरफ देखने लगे हैं.

—अप्रैल में पिंकू की क्लासें शुरू होनी हैं. एक महीना रह गया है. सीट बुक करवाने के लिए अभी देहली जाना पड़ेगा, नहीं तो बाद में मुश्किल पड़ती है.

—टिकट पर कितना पैसा लगेगा? मुझे अगले सप्ताह देहली जाना ही है, करवाता आऊंगा, भैया बोले.

—यहां तो टिकट बनने में देर लगती है. इन्हें लिख दूंगी, ये वहीं से बनवा कर भेज देंगे. तुम सीट का पता कर आना ताकि टिकट पर डेट लिखवायी जा सके.

—रज्जो, तुम्हारा वो पैसा. . . .

—पापा, अभी उसे यहीं जमा रहने दो. दीदी ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झट से पापा की बात काट दी थी, आखिर हमें आना तो यहां है. जब तक ये वहां काम कर सकते हैं, ठीक हैं, उसके बाद इंडिया आ कर कोई काम शुरू कर देंगे.

—लेकिन. . . .

पापा कुछ कहने लगे. तो ममी ने उनका हाथ दबा दिया था. पापा खामोश हो गये.

दीदी एकटक खिड़की से बाहर देखे जा रही थीं.

—पापा, सोचती हूं, एक-दो रोज के लिए निम्मो आंटी के पास हो आऊं. पता नहीं फिर कब आना हो.

—हां-हां, क्यों नहीं. बेशक कल ही चली जाओ.

अगले दिन सुबह ही दीदी ने निम्मो आंटी के पास जाने का प्रोग्राम बना लिया था.

स्टेशन तक मैं ही छोड़ने गया था दीदी को. रास्ते में दीदी बोली थीं—इनका कोई पत्र आये तो मुझे 'रिडायरेक्ट' कर देना. हो सकता है मैं कुछ दिन यहां रुक. . .

—लेकिन. . . . .

—पापा से तो यों ही दो-चार रोज के लिए बोल दिया था. . . . बिट्टू, सच कहूं, वहां से आते हुए सोचा था जितने दिन भी यहां रहूंगी, इस घर की दीवारों के भीतर ही रहूंगी. तुम नहीं जानते, इन दीवारों को देखने के लिए भी कैसा मोह-सा बना रहता था.

. . . . लेकिन अब यहां एक अजीब-सी चुभन महसूस होने लगी है. शुरू-शुरू में मेरे लिए सभी की भाग-दौड़ लगता था, जैसे मेरे आने की खुशी में हैं. लेकिन अब लगता है, जैसे वे मेरा कर्ज उतार रहे थे. वर्ना अब इतना बदलाव क्यों आ गया होता. . .

रिक्शा ने मोड़ लिया. स्टेशन सामने ही था.

—जाते ही वहां से पत्र डालूंगी. तुम आ जाना, कुछ घूम-फिर लेंगे.

रिक्शा से उतरे तो गाड़ी की आवाज सुनायी दी.

—मैं टिकट लेती हूं, तू अटैची ले कर भीतर चल. बच्चों को भी ले जा.

गाड़ी ने पहली व्हिसल लगायी तो दीदी भीतर आ गयी थीं.

—हां, मैं तो भूली ही जा रही थी. ये तीन सौ रुपया ले, पास-बुक में जमा करवा देना. आज ही.

—लेकिन तुम्हारे पास. . . .

—सुबह ममी से कुछ पैसे मांग लिये थे. यदि उन्हें तीन सौ का पता चलता तो. . . . ?

तभी गाड़ी ने दूसरी व्हिसल बजायी.

—अच्छा तू चल. मैं जाते ही पत्र लिख दूंगी. . . .

मैं फुदकता हुआ-सा नीचे उतर आया. मन में आया था, भाग कर दीदी के पास जाऊं और रुपये उसके हाथ में रख कर कहूं—दीदी, उन्हें पता चलना ही चाहिए.

लेकिन, गाड़ी छकछक करती हुई आगे बढ़ गयी थी. . . . और पीछे धुएं का एक धुंधलका-सा फैलता चला गया था. □□□

द्वारा—डा. एस. एस. निझावन, रेलवे रोड,
अंबाला शहर.

लघुकथा

प्रायश्चित

● जगदीशनारायण वर्मा

कालेज का जीवन. क्लासों में प्रोफेसरों को परेशान करने के नित नये तरीके भरे दिन और बाहर धमा-चौकड़ी, मौज-मस्ती, सिनेमा-नाटक.

कालेज जीवन का एक और पहलू. धीर-गंभीर विद्यार्थी क्लासों में सामने की बेंचों पर बैठकर ध्यानपूर्वक लेक्चर सुनते, विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में शांतिपूर्वक किताबें पढ़ते, नोट्स लेते और आपस में केवल पढ़ाई की ही बातें करते. उसी समय मैं एक ऐसे विद्यार्थी से प्रभावित हुआ जिसे ठाटबाट की दुनिया की कोई खबर, परवाह न थी. अपनी धीर-गंभीर मुद्रा में, नाक की सीध में वह क्लास में आता; न किसी से हंसना, बात करना और न मिलना-जुलना.

हमारा परिचय पढ़ा और मित्रता गहराई. वह अक्सर मेरे डेरे पर आने-जाने लगा. उसके पिता साधारण किसान थे. उसकी फीस का खर्च मुश्किल से निकलता. पर था वह कुशाग्र बुद्धि, अध्ययन-मनन में रत और सदा प्रथम.

मैं था अक्सर टाई-सूट में लैस. मैं अपनी जैसी आर्थिक स्थितिवाले मित्रों की संगति में सिनेमा देखता और रेस्त्रां वगैरह में जलपान करता. मैं उसे अक्सर रेस्त्रां में अपने साथ ले जाता और पैसे दिया करता. इससे मेरे अहंभाव की तुष्टि ही होती, परंतु वह बाद में मुझे पूरे पैसे चुका जाता.

कालेज में सोशल गैदरिंग के दिन थे. मेरा मित्र कई दिनों से कालेज में दिखाई न दे रहा था और मैं उसे भूल ही गया. ऐसे ही में एक रात को वह मेरे डेरे पर आया. वह कुछ परेशान था. पूछने पर उसने मुझे हंसते हुए बताया कि वह कालेज छोड़कर नौकरी कर लेगा क्योंकि वह अपने पिता पर पढ़ाई का और अधिक बोझ नहीं डाल सकता. बात यह थी कि फीस न जमा करने पर उसका नाम कालेज से कट जाता. मेरे पास काफी रुपये थे पर मैं इंकार कर गया.

सोशल गैदरिंग के उपलक्ष्य में उन रुपयों से मैंने एक ऊनी सूट सिलवाया और जाड़े की एक शाम गैदरिंग के किसी अतिथि को लेने रिक्शे पर स्टेशन जा रहा था कि देखा मेरे मित्र जैसा ही कोई सिर पर गमछा लपेटे, किसी यात्री का सामान लिये चला जा रहा है. मुझे ऐसा लगा मानों मेरे नये ऊनी सूट में आग लग गयी हो.

दूसरे दिन कालेज खुलते ही मैंने मित्र की फीस भर दी और उसे लेने उसके डेरे पर जा पहुंचा. परंतु मुझे पता चला कि वह अपनी फीस पूरी करने के लिए कई दिनों से कुली का काम कर रहा है. उसी दिन से मैंने कीमती वस्त्र त्याग दिये. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे भी हैं मेहमाँ कैसे-कैसे

—प्रभाकर माचवे

भूतपूर्व क्रांतिकारी भरतरामजी आये तो उनके साथ में एक ऊंची-सी सांवली लड़की भी थी. बड़ा-सा कुंकुम लगाये, ऊंचा जूड़ा पहने, चेहरे पर सारी दुनिया को तुच्छता से देखने का भाव. मैंने कहा—नमस्कार, भरतरामजी, 'जेल की दीवार' पढ़ी थी, उसके बाद तो कई बरस दर्शन नहीं हुए. और आपकी तारिफ?

भरतरामजी कुछ लजाते हुए बोले-मालती है. इसी साल हिंदी में पी. एच डी. किया है. जरा दिखाना तो अपना थीसिस. साथ के झोले से एक पांच सेर का मोटा टाइप किया हुआ ग्रंथ निकल पड़ा. 'भारतीय भाषाओं में कृष्ण और राधा के प्रेम की तुलना में ब्रजभाषा का मर्म रस' जैसा कुछ विषय था. मैंने मन में कहा धन्य है आपकी विद्वत्ता! फिर भरतरामजी लजाकर बोले——दो वर्ष के भीतर मालू ने यह साधना की. मैंने भी कुछ सहायता कर दी थी.

फिर पता चला कि मालती को दिल्ली में कहीं कोई काम मिल रहा है और सबसे बड़ी कठिनाई आवास की थी. मेरे पास भी कोई अधिक स्थान नहीं था. दो-ढाई कमरे थे. यह यहीं कुछ दिनों के लिए रह जायगी. सवाल एक, डेढ़ हफ्ते का है. बाद में तो उसे श्री गगनेंद्रजी ने एक अच्छी जगह देने के लिए कह दिया है. अब यह परदेश है. और आप जानते हैं कि मालती के लिए अकेले रहना कैसे संभव है, वह छोटी जो है. मालतीजी के आकार-प्रकार से वे ३५ से कम की नहीं होंगी. प्रौढ़ कुमारिका थीं. पता नहीं विवाह क्यों नहीं हुआ था?

मैंने जब घर आ कर पत्नी से कहा कि 'बेचारे मुसीबत में हैं. थोड़े से दिन रह लेंगे तो क्या होगा?' तो श्रीमती, जिनका इन व्यावहारिक मामलों में हमसे कहीं अधिक सही दृष्टिकोण होता है, खूब भिन्नायीं——कहां-कहां के चपड़कनाती आप घर पर ले आते हैं! यह आपका हिंदी साहित्य-प्रेम और यह साहित्यकारों के प्रति दया-करुणा हमें कहीं का नहीं रहने देगी!

मैंने कहा——ऐसा नहीं कहते! ब्रिटिश जमाने में भरतरामजी ने बम बनाये थे और सशक्त क्रांतिकारियों के साथ थे.

——तब जो होगा सो होगा. अब तो ट्यूशन करते हैं और वह भी लड़कियों के! सारी क्रांति अब कहीं लुप्त हो गयी है!

——अब मैं क्या करूं, वचन दे चुका हूं. लड़की बहुत सुशील और विनम्र जान पड़ती है.

——तुम्हें तो सभी लड़कियां अच्छी जान पड़ती हैं.

——खैर, तुम्हीं देख लेना. . .

दूसरे दिन वे दाखिल हो गयीं. उन दिनों मेरी पत्नी का स्वास्थ्य अच्छा नहीं था. मेरी बच्ची की उम्र ११ बरस की थी. और घर में मैंने सोचा, चलो एक पढ़ी-लिखी और सहेली आ जाने से पत्नी का जी भी बहल जायेगा और थोड़ी बहुत मदद भी हो जायेगी. उन्हीं दिनों हमारा पहाड़ी नौकर भी गायब हो गया था.

अब डॉ. मालती अपना रूप धीरे-धीरे दिखाने लगीं. वे हर जरा-जरा-सी चीज के लिए मेरी बेटी को हुक्म देतीं——जा एक गिलास पानी ला. . . मेरी कंघी उठा ला. . . मेरी वो किताबें उधर रख देना. खुद काम करने से इस भद्र अर्द्ध-शिक्षिता महिला को नफरत थी. हर शनीचर-इतवार को यह दिल्ली से चली जातीं. भरतरामजी मेरठ रहते थे. फिर उनके काम के घंटे भी और थे. सबेरे उन्हें विशेष प्रकार का नाश्ता ही लगता था. चाय वे पीती नहीं थीं तो उन्हें गिलासभर दूध चाहिए. फिर वे दोपहर को कालज से पढ़ा कर लौटतीं तो भोजन. उनकी रुचि विशेष थी. हम जो कुछ जैसा खाते थे, उससे उनकी जीभ का समझौता नहीं हो पाता था. फिर शाम को वे फिर बाहर कहीं दोस्त महिलाओं के साथ चली जातीं. कभी-कभी ये मित्राएं भी आतीं और उन सब का चायपानी होता. मेरी पत्नी सब बरतन समेटतीं और धोतीं. यह विदुषी कभी इतना भी मुंह से नहीं कहती——मदद करने आऊं?

हमारी बेटी ने एक मजाक उनके बारे में प्रचलित कर दिया था——आंटीजी हर बार कहती हैं, मैं तुम्हें सिनेमा दिखाने ले जाऊंगी पर वे बहुत कंजूस हैं. बस के पैसे भी तो वे मांग कर ले जाती हैं.

मेरी पत्नी ने सोचा कि इस भलीमानुस की समस्या आवास की है न? तो चलो पड़ौस के एक पंजाबी की पहचान से करौल बाग में एक कमरा इन्हें किराये दिलवा दिया. पहले मालती ने बहुत नाक-भौं सिकोड़ीं, फिर सामान वहां जा कर रख दिया. हर सप्ताहांत पर वह कालेज से हमारे ही यहां आतीं. कहतीं——भाभी, भूख लगी है, कुछ खाने को दीजिए. मेरठ की बस फिर चली जायेगी. और हर सोमवार को सबेरे फिर आ धमकतीं. असल में मालती को अपना काम खुद करने की न आदत थी, न चाह. वह सदा निर्भर रहती आयी थी.

एक सप्ताह बाद पंजाबी पड़ोसिन के यहां वह मकान मालकिन आयी——भाभी, आपने भी अच्छी किरायेदार मेरे लिए खोज कर दी है! वह हमारे ही घर पर अक्सर खाना खाती है. कभी कहती है, राशन नहीं है. कभी कहती है, स्टोव में किरासीन नहीं है. कभी कहती है, बल्व फ्यूज हो गया है. घर में बहुत कम रहती है.

तीन महीने बीत गये. डॉ. मालती ने किराया नहीं दिया. जब मेरी पत्नी ने उन्हें पूछा तो बोलीं——प्राइवेट कालेज है. अभी तनखा नहीं मिली. दूसरी बार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

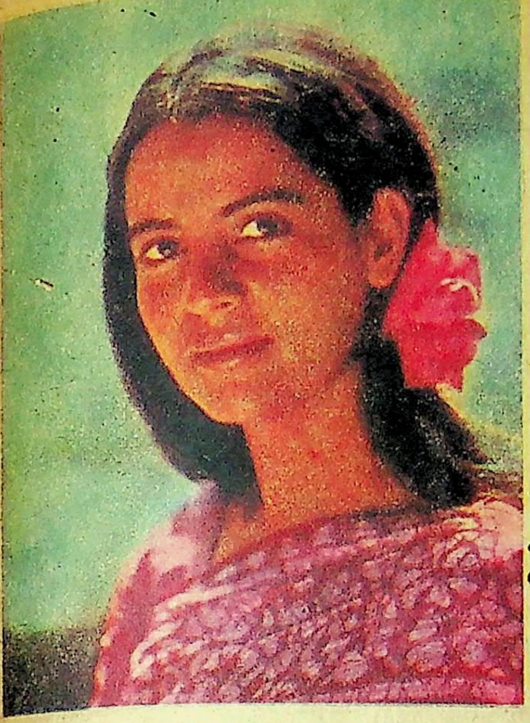

• गिरीश शुक्ला

कहा— इस महीने मेरे पैसे ज्यादा खर्च हो गये. वह रेशमी साड़ी मैंने खरीद ली थी न? फिर मकान-मालकिन से वह खूब झगड़ा कर बैठीं. बोलीं— किराये का मतलब किराया है. उसी में बिजली-पानी सब शामिल समझिये. मैं अलग से पैसे नहीं देनेवाली हूं.

धीरे-धीरे पता चला कि डा. मालती अपने वंश में अकेली पढ़ी-लिखी औरत हैं. बाप की बड़ी जमींदारी थी. पर शराब और दूसरे व्यसनों में सब खत्म कर दिया. उनकी इच्छा अपनी बेटी की अच्छी जगह शादी कर देने की थी. पर ये क्रांतिकारी साहब उनके जीवन में आ गये और डा. मालती को पिता से घृणा हो गयी, पिता को डा. मालती से.

पिता, मित्र, गुरु, अभिभावक सबका स्थान भरतरामजी ने ले लिया. भरतरामजी ने उसके जीवन में क्रांति पैदा कर दी. रातदिन उसकी स्तुति कर के उसे सिर चढ़ा लिया—ओ हो, साहित्य की समझ जैसी मालू की है, और किसी लड़की की नहीं.

—युनिवर्सिटी का मुंह देखने की जरूरत क्या है? प्रभाकर पास कर लो, फिर अंग्रेजी का एक पर्चा ले कर बी. ए. फिर एम. ए. और पी. एच डी. . अब तो रास्ता सीधा है. कई लोअर डिवीजन क्लर्क, बिना कालेज का मुंह देखे, यों डाक्टर हो गये. फिर मालू में तो जन्मजात प्रतिमा है.

—श्यामवर्ण हैं तो क्या हुआ? राधा का वर्ण क्या था?

—मालू की रंगों की 'च्वाइस'. अरे साहब क्या कहने हैं!

क्रांतिकारीजी की पढ़ाई वैसे अपने बल पर ही हुई थी. जब-जब उन्हें शब्द कम जान पड़ते, वे संस्कृत के भारी भरकम शब्दों का सहारा लेते, या फिर अंग्रेजी के उलटे-सीधे शब्दों का. उनका यह खयाल था कि वे और मालू अंग्रेजी में भी बहुत अच्छी कविता कर लेते हैं!

सबसे खराब बात दोनों की यह थी कि दोनों ही घोर स्वार्थी थे. न तो मालू को वे मेरे घर लाये, उससे पहले उनसे कोई घनिष्टता थी, न अंतिम बार जब उन्हें मुझे डांटना ही पड़ा तब तक या बाद में उन्होंने एक अक्षर से भी हमारे प्रति कृतज्ञता व्यक्त की. उन्हें न इस बात का खयाल था कि मेरी पत्नी बीमार है तो घर में कुछ मदद करें; न इस बात का विचार था कि मेरे पास आनेवाले लोगों में सब तरह के लोग होते हैं तो उसमें क्यों पड़ें? पर मालतीजी का गुणगान यह भरतरामजी की मुख्य टेक थी.

एक बार एक विदेशी सज्जन मेरे घर पर आये. भाषावैज्ञानिक थे और मैं उन्हें हिंदी के व्याकरणों की पुस्तकों में क्या-क्या दोष है, यह बतला रहा था कि भरतरामजी डॉ. मालती के साथ टपक पड़े. बिना संदर्भ के उन्होंने अंग्रेजी में फरमाना शुरू किया—ग्रामा? अजी उसमें क्या रक्खा है? डा. मालती ने तो दस दिन में हर 'फ़ारेनर' की समझ में आये, ऐसी हिंदी की 'ऑर्थोनोग्राफी. . .' मैं ऊपर बता चुका हूं कि लंबे-लंबे शब्द बिना आगे-पीछे का विचार किये, प्रयोग में लाने का उन्हें 'मेनिया' था.

विदेशी सज्जन पहले तो इस बात को गंभीरता से सही समझे. बाद में जब उन्होंने उनकी थोड़ी और बातें सुनीं तो वे जान गये कि ये दोनों यों ही बातें बनाते हैं. पर इन मेहमानों के मारे मेरी हालत बहुत खराब होती गयी. मैं और लोगों के सामने यह भी नहीं कह सकता था कि ये दोनों यों ही गपोड़िये हैं.

मुझे चित्रकला से शौक है. और उसके बारे में काफी पढ़ा है, देखा है, कुछ पेंटिंग सीखा भी हूं. एक दिन मेरे एक पुराने चित्रकार मित्र आ गये और हम बड़े मजे से पुराने दिनों की बातें कर रहे थे कि क्रांतिकारी श्री भरतरामजी और उनकी परमप्रिय शिष्या, हिंदी साहित्य की डाक्टर, मालतीजी पधारीं.

मैंने परिचय करा दिया—ये प्रसिद्ध चित्रकार जोशी हैं. हमारे साथ हैं और स्कूल आफ आर्ट्स में थे. और ये हैं भूतपूर्व क्रांतिकारी भरतरामजी और हिंदी की डाक्टरनी मालतीजी. लेखक-लेखिका हैं.

जोशीजी ने अपनी दाढ़ी खुजलाई और जैसे किसी से परिचय न हुआ हो, वैसे आराम से चर्चा आगे चलायी—तो ऐसा हुआ कि अपने साथ वह पागल भास्कर नहीं था—वह मुझे मिल गया, राजस्थान में. अब मजे में है—शादी कर ली है, अब तक उसका ब्रह्मचर्य का व्रत बदल गया था. अब तो वह अच्छी तरह चाय-कॉफी ही नहीं, सिगरेटें और शराब भी पीने लगा था. शादी के बाद वह सब चित्रकारी भूल गया. . .

भरतरामजी ने बीच में टोका—कुछ लोग सिद्धांत छोड़ कर अवसरवादी हो जाते हैं. मगर हमारी डा. मालती ठीक मेरी ही तरह आदर्शवादी हैं. एक बार प्रतीज्ञा की तो देखिये दो साल में १००० पृष्ठों का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थीसिस लिख डाला. साधारण आदमी नहीं है. उसमें कितने ग्रंथों का निचोड़ है. और देखिये साहब यह चित्रकला की बात जो है न, मैं बता दूं, मालू. . .

मालती लजाई. भरतरामजी लजाये—अब बता ही देता हूं. मालू ने बड़े-बड़े चित्र बचपन में बनाये थे. चादरों पर. तकिये के गिलाफों पर, दीवारों पर—वह ग्रामकला में लोकधर्मी वर्ण-भंगिमा का चमत्कार था.

जोशी से रहा नहीं गया—तो आपने चित्रकला कहां सीखी?

मालती चुप! भरतरामजी ने तुरंत उत्तर दिया—जन्मजात प्रतिभाओं को कहीं सीखने जाना पड़ता है? क्रोचे ने कहा है कि 'जीनियस इज बार्न.'

आखिर डा. मालती ने वह कमरा भी छोड़ा और किराया भी नहीं दिया. हमें वह पंजाबी पड़ोसिन को देना पड़ा. फिर मालतीजी हमारे घर पर आकर बिराजमान हो गयीं. वे घर में इस तरह रहती थीं कि मेहमान न हो कर घर की स्वामिनी हों. वह अक्सर पुरुषों की बैठक में ही जमी रहतीं. मैं कहीं साहित्यगोष्ठी में जाने को होता, तो डा. मालती सबसे आगे.

हम गरीब लोग थे और तिल का तेल खाते थे. वे अपनी अमीरी जताते हुए कहतीं—हम तो घी के बिना कोई चीज नहीं खा सकते.

डा. मालती हमारी प्रादेशिक संस्कृति की काफी आलोचना करती थीं. अपनी थीसिस में सारे भारत की चर्चा करने का दंभ भरनेवाली यह भद्र महिला ठीक तरह से न बोल सकती थीं, न लिख सकती थीं. मेरी बेटी कहती—पता नहीं कैसे पढ़ाती होंगी!

और उसकी बात सच निकली. डा. मालती जिस कालेज में काम करती थी, वहां ज्यादा चल नहीं सकीं. और एक दिन वे गयीं हमने छुट्टी की सांस ली.

इसके बाद न उन्होंने एक चिट्ठी लिखी, न हमें याद किया. दो वर्ष बाद एक दिन शाम को जब हमारे घर में बहुत से मेहमान थे, दरवाजे पर घंटी बजी. विनम्र भाव से भरतरामजी लजाते हुए खड़े थे—आप बहुत व्यस्त हैं क्या?

—नहीं तो! मैंने कहा.

—एक रात आपके यहां रुक सकेंगे? एक कमरा हमें मिल जाता. . .

—आइये! आपको असुविधा हो सकती है.

—कोई बात नहीं, कोई बात नहीं. मैं अभी आया. वे अपने साथ सामान ले आये—दो बिस्तरे, एक बड़ा संदूक, कुछ टोकनियां. और फिर लजाकर बोले—मालू भी साथ में है. उसे रात में एक्सीडेंट हो गया. पैर को चोट आयी है.

—कहां है?

—बाहर खड़ी है.

फिर मेरी श्रीमतीजी उनकी सेवा के लिए पुल्टिस बनाने में लग गयीं. फिर से भोजन बनाया गया. भरतरामजी ने कहा—मालू को अब की बार यहीं दिल्ली में एक और कालेज में काम मिल गया है. □□□

१२०. रवींद्र नगर, नयी दिल्ली-११

विविधा

अखिल भारतीय परिचर्चा

साहित्य और संस्कृति में दक्षिणपंथी प्रतिक्रियावाद के विरुद्ध संघर्ष

दक्षिणपंथी प्रतिक्रियावाद अपने मूल चरित्र में बहुरूपिया होता है; वह जाति, धर्म संप्रदाय, वर्ण, भाषा आदि के अनेक मुखौटे धारण कर साहित्य और संस्कृति के क्षेत्रों में प्रवेश करता है और अपनी काली छाया डाल कर आम आदमी और पाठक-दर्शक वर्ग को प्रगति के मार्ग से विरत कर उसकी मानसिकता को कुंठित और कलुषित बनाता है, उनके अंदर अनास्था और हताशा उत्पन्न करता है और इस प्रकार वह प्रत्येक देश में फासिस्ट तंत्र स्थापित करने का धरातल निर्मित करता है. प्रतिक्रियावाद अपनी यह जीवनघाती भूमिका केवल साहित्य के क्षेत्र में ही नहीं, वरन कला, संस्कृति, दर्शन, राजनीति, इतिहास आदि के क्षेत्रों में बड़े सुगठित और सुनियोजित ढंग से पूरी करता है ताकि फासिस्ट तंत्र के लिए समग्र वातावरण बन सके. . .इसलिए प्रतिक्रियावाद के विरुद्ध संघर्ष एक अनिवार्य संघर्ष है; यह प्रगति, मानवता और जीवन की रक्षा का संघर्ष है; यह एक बहुमुखी एवं अनवरत संघर्ष है जिसके अनेक मोर्चे हैं. प्रतिक्रियावाद को परास्त करने के लिए सबसे पहले उसके मजबूत मोर्चे और गढ़ पर आक्रमण करना नितांत आवश्यक होता है—यह मोर्चा साहित्य का मोर्चा है, जहां वह कथ्य के साथ-साथ शिल्प के क्षेत्र में भी सक्रिय रहता है. . .

यही वे कुछ वैचारिक निष्कर्ष हैं जो विगत १३ अगस्त, १९७५ को नयी दिल्ली के विठ्ठलभाई पटेल हाउस में 'राष्ट्रीय प्रगतिशील लेखक महासंघ' के तत्वावधान में साहित्य और संस्कृति में दक्षिणपंथी प्रतिक्रियावाद के विरुद्ध संघर्ष विषय पर आयोजित साहित्यकारों के एक 'अखिल भारतीय सेमीनार' से उभर कर सामने आये. सर्वश्री कालिंदीचरण पाणिग्रही, प्रोफेसर मोहन सिंह, गुलाम रब्बानी तावां, डा. भगवतशरण उपाध्याय और केदारनाथ अग्रवाल के अध्यक्ष-मंडल ने इस राष्ट्रीय सेमीनार की अध्यक्षता ग्रहण की थी. पूर्वाह्न-अधिवेशन में परिचर्चा में भाग लेने वाले वक्ता थे—सर्वश्री →

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सतीश कालसेकर, कुलबीरसिंह कांग, शमशेरबहादुर सिंह, रमेश उपाध्याय, नारायण सुर्वे, कामतानाथ, प्रो. मोहनसिंह, ललित मोहन अवस्थी, मोहन श्रोत्रिय और डा. खगेंद्र ठाकुर. सायंकालीन अधिवेशन में मुख्य वक्ता डॉ.भगवतशरण उपाध्याय के अतिरिक्त परिचर्चा में सर्वश्री अली सरदार जाफरी, तरुण सान्याल, हबीब तनवीर, कैफी आजमी और करनजीत सिंह ने भाग लिया. दोनों अधिवेशनों में देश के विभिन्न भागों से आये सौ से अधिक विभिन्न भाषाओं के साहित्यकार उपस्थित थे. विचार गोष्ठी का संचालन महासंघ के महामंत्री श्री भीष्म साहनी ने किया.

विषय-प्रवर्तन करते हुए डॉ. नामवर सिंह ने कहा--प्रतिक्रियावाद का पहला मोर्चा भाषा का क्षेत्र है. स्वातंत्र्योत्तर साहित्य में हिंदी भाषा व शब्दावली का पूरा ढांचा बिगड़ा है, भ्रष्ट हुआ है--और यह प्रतिक्रियावादियों के कारण हुआ है. एक ओर तो पश्चिमी विचारधारा के अंधाधुंध अनुवाद से, जिसे हिंदी पचा नहीं पाती, भाषा भ्रष्ट हुई है, और दूसरी ओर सांप्रदायिक एवं सामंतवादी दुष्प्रभावों ने हिंदी को भ्रष्ट किया है.

उन्होंने कहा कि प्रतिक्रियावाद का दूसरा मोर्चा सांप्रदायिक व जातिवादी प्रवृत्तियां रही हैं. दक्षिणपंथी शक्तियों ने साहित्य में इन दूषित प्रवृत्तियों को भरपूर समर्थन और प्रोत्साहन प्रदान किया है. इन वर्षों में हिंदी कहानी से मुसलमान चरित्र और पात्र एकदम गायब हो गये. वह हिंदू चरित्रों से भरी हुई है. शायद यह अनजाने हुआ है. किंतु यह एक सच्चाई है कि वह 'हिंदू दुनिया' का कथा-साहित्य बना है.

डॉ. नामवर सिंह ने आगे कहा कि गत वर्षों में हिंदी साहित्य में जो सबसे खतरनाक प्रवृत्ति उभरी है, वह है एक विशेष प्रकार के उग्रवादी-विरोधवादी साहित्य का सृजन. इन वर्षों में 'एस्टेब्लिशमेंट' के विरुद्ध 'प्रोटेस्ट' का साहित्य बहुत बड़ी मात्रा में लिखा गया है और उसे क्रांतिकारी साहित्य की संज्ञा दी गयी है. लेकिन हमें इस 'प्रोटेस्ट' के साहित्य को बारीकी से देखना है और यह समझना है कि वह कैसा 'प्रोटेस्ट' है जो नागार्जुन जैसे कवि को जे. पी. से जोड़ देता है. वस्तुतः हुआ यह है कि हर प्रकार का 'प्रोटेस्ट' का साहित्य एक होने लगा--अति उग्र, अति वाम और अति दक्षिण, सभी तत्व इस 'प्रोटेस्ट' में एक में मिल गये हैं. इस प्रकार जो 'टोटल प्रोटेस्ट' सामने आया है, वह जे. पी. के 'टोटल रेव्योल्यूशन' के अलावा कुछ नहीं है, वह नकारवाद है, 'निहिलिज्म' है.

इसी सिलसिले में 'न्यू लेफ्ट' या नव-वाम का उल्लेख करते हुए डा. नामवर सिंह ने कहा--न्यू लेफ्ट के पीछे इजारेदारों और साम्राज्यवादियों का हाथ है. नव-वाम साम्यवाद-विरोधी और मार्क्सवाद-विरोधी है.

डा. नामवर सिंह के बाद मराठी लेखक सतीश कालसेकर ने उनकी कई स्थापनाओं से असहमति व्यक्त करते हुए कहा--सारे विरोधी साहित्य और सभी विरोधी आंदोलनों को एक घेरे में समेट देना गलत है. हमें सही 'विरोध' को देखना और समझना होगा. एक 'प्रोटेस्ट' ऐसा भी है जो जे. पी. से कभी नहीं मिला, बल्कि जिसने जे. पी. का भी मजबूत विरोध किया. सतीश कालसेकर ने इसी संदर्भ में समांतर कथा-साहित्य और दलित साहित्य का विशेष रूप से और विस्तारपूर्वक उल्लेख किया और कहा कि इन दोनों ने सांप्रदायिकता के विरुद्ध, वर्ण-व्यवस्था के विरुद्ध, शिव सेना के विरुद्ध और पूंजीवादी-प्रतिक्रियावादी-अतिवादी शक्तियों के विरुद्ध सतत संघर्ष चलाया है. उनका कहना था प्रतिक्रियावाद की प्रवृत्तियां नहीं बदलतीं, उनका स्वरूप बदलता है.

पंजाबी-लेखक कुलबीरसिंह कांग ने संदेह जाहिर किया कि 'प्रोटेस्ट' का तेवर छोड़ देने से हम कहीं 'एस्टेब्लिशमेंट' के साथ न जुड़ जायें.

हिंदी के वरिष्ठ कवि शमशेर बहादुर सिंह ने आधुनिकतावाद के नाम पर पश्चिम के अंधानुकरण को खतरनाक प्रवृत्ति बताया और पश्चिम की जर्जर विचारधारा को प्रतिक्रियावाद-पोषक कहा. उन्होंने आंचलिक साहित्य की संघर्षशील परंपरा को स्पष्ट किये जाने का आग्रह किया.

मराठी कवि नारायण सुर्वे ने साहित्य और कला के क्षेत्रों में साम्राज्यवादी दुष्प्रभावों का जिक्र करते हुए कहा कि ऐसे संगठनों और फाउंडेशनों का भंडाफोड़ किया जाना चाहिए जो धन का प्रलोभन दे कर हमारे युवा लेखकों को गुमराह करते हैं.

हिंदी-कथाकार कामतानाथ ने साहित्य के क्षेत्र में प्रतिक्रियावाद के विरुद्ध संघर्ष में समांतर लेखन को कारगर अस्त्र बताया और समांतर वैचारिकता को आम आदमी की सामाजिक क्रांतिकारी चेतना का अभिन्न अंग बताते हुए कुछ समांतर कहानियों और कथाकारों का उल्लेख किया. उन्होंने ध्यान दिलाया कि हमें कथ्य के साथ-साथ शिल्प के क्षेत्र में भी प्रतिक्रियावादी साजिशों और हथकंडों पर नजर रखनी चाहिए.

पंजाबी के प्रो. मोहन सिंह ने दक्षिणपंथी प्रतिक्रियावाद को फासिस्टवाद का मुख्य आधार बताया और साहित्य में उपनिवेशवादी प्रवृत्तियों के विरुद्ध जम कर संघर्ष किये जाने की आवश्यकता पर जोर दिया.

हिंदी लेखक - समालोचक ललितमोहन अवस्थी ने कहा कि प्रतिक्रियावाद साहित्य में चार प्रकार से अपनी भूमिका निभाता है. वह साहित्य को राजनीति से अलग रखने की आवश्यकता पर जोर देता है, जो अपने आप में एक अत्यंत खतरनाक और जीवनघाती राजनीति है. साहित्य और कला की शुद्धता व पवित्रता का नारा घोर प्रतिक्रियावादी नारा है. इसके अतिरिक्त प्रतिक्रियावाद स्वस्थ मानवीय मूल्यों को नकारता है और उनके प्रति अनास्था को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रोत्साहन देता है. आधुनिकतावाद की आड़ में पश्चिम की जर्जर योगवादी-हिप्पीवादी विचारधारा का आयात और प्रचार इसी साजिश का अंग है तथा साहित्य और कलाओं में नग्नता, अपराध और हिंसा को अधिकाधिक प्रोत्साहन देना भी मानवीय मूल्यों की हत्या कर समाज में अराजकता फैलाने के तहत ही किया जाता है. साहित्य में गाली-गलौजवाद को प्रोत्साहन देना तथा लुंपेनवादी मानसिकता का प्रचार करना भी प्रतिक्रियावादी हथकंडा है. इनके अलावा वह साहित्य में रूपतत्व पर अधिक जोर देता है तथा अंतर्वस्तु, अभिव्यक्ति और प्रेषणीयता को हिकारत की नजर से देखता है. इसीलिए प्रतिक्रियावाद अमूर्ततावाद, प्रयोगवाद, बिंबवाद जैसे तमाम शिल्पगत नारों को उछालता है और दुरूहता, जटिलता व अस्पष्टता के जाल में कथ्य को फंसा कर अभिव्यक्ति एवं प्रेषणीयता की हत्या करता है.

राजस्थान के श्री मोहन श्रोत्रिय ने दक्षिणपंथी प्रतिक्रियावाद से बड़ा खतरा आधुनिक संशोधनवाद को बताया और इस संदर्भ में 'चिरंतन वाम' के विचार का उल्लेख किया, जिसे उन्होंने चिरंतन प्रतिपक्ष के रूप में व्याख्यायित किया.

बिहार के डॉ. खगेंद्र ठाकुर ने १९५२-५३ में जयप्रकाश नारायण की अध्यक्षता में बर्लिन में अमरीकी कांग्रेस फॉर कलचरल फ्रीडम के अधिवेशन का हवाला दिया, जिसमें संपूर्ण प्रतिबद्ध लेखन की निंदा करते हुए सामाजिक मसलों से वितृष्णा उत्पन्न करने वाले लेखन की अहमियत पर जोर दिया गया था.

सेमीनार के अपराह्न-अधिवेशन के मुख्य वक्ता विख्यात इतिहासकार और पुरातत्ववेत्ता डॉ. भगवतशरण उपाध्याय ने अपने एक घंटे के विद्वत्तापूर्ण भाषण में संस्कृति और इतिहास के क्षेत्र में प्रतिक्रियावादी साजिशों को विस्तार के साथ बेनकाब किया और कहा कि प्रतिक्रियावाद विज्ञान, इतिहास और संस्कृति के क्षेत्रों में अंध राष्ट्रीयतावाद के अस्त्र को इस्तेमाल करता है. वह कहता है विज्ञान में भारतीयता बरती जाये और इतिहास का भारतीयकरण किया जाये. यह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के हिंदूवादी दर्शन का ही प्रतिरूप है जो शुद्ध फासिस्ट दर्शन है. गणित और रसायन की भांति किसी राष्ट्र का मानव-इतिहास भी देशगत नहीं होता, वह सार्वभौमिक होता है. खेद है, अभी तक भारत का जन-इतिहास नहीं लिखा गया.

उर्दू के वरिष्ठ शायर अली सरदार जाफरी ने कहा कि फासिस्ट तंत्र और प्रतिक्रियावाद का सबसे मजबूत हथियार होता है झूठ और फरेब का प्रचार ताकि जनता को गुमराह किया जा सके. इसके उन्होंने कई उदाहरण दिये. उन्होंने इकबाल से ले कर आज तक की उर्दू शायरी में इनसान के तसव्वुर की भी विस्तार के साथ विवेचना की और पुरानी और मुर्दा परंपराओं को छोड़ने पर जोर दिया.

बंगाल के लेखक तरुण सान्याल ने जन-संचार साधनों की महत्वपूर्ण भूमिका पर जोर देते हुए खेद प्रकट किया कि इनमें प्रगतिशील लेखकों का नगण्य प्रभाव है और 'व्यवस्था से न जुड़ने' के ब्राह्मणवादी दृष्टिकोण का शिकार हो कर हमने उन्हें प्रतिक्रियावादियों के हाथों में सौंप दिया है.

नाट्यकर्मी हबीब तनवीर ने नाटक, रेडियो और टेलीविजन के क्षेत्र में अपने व्यावहारिक अनुभवों और प्रयोगों की चर्चा करते हुए कहा कि इनका उपयोग प्रतिबद्ध लेखकों और सांस्कृतिक कार्यकर्त्ताओं द्वारा आम जनता के हित में कारगर तरीके से किया जा सकता है. देश के प्रगतिशील रंगकर्मी हमेशा आम आदमी के साथ जुड़े रहे हैं, इसीलिए आज की रंगकला में जो कुछ सर्वोत्तम है, वह प्रगतिशीलता से जुड़ा हुआ है.

पंजाबी के करनजीत सिंह ने साहित्य और संस्कृति के अलावा शिक्षा और पत्रकारिता के क्षेत्रों में भी प्रतिक्रियावाद के विरुद्ध संघर्ष को तेज किये जाने की आवश्यकता पर जोर दिया.

प्रगतिशील शायर कैफी आजमी ने परिचर्चा को अपने जीवन की बहुत बड़ी उपलब्धि बताया और कहा कि उन्होंने इतना कुछ सीखा है, जिससे फासिस्ट और रजतपसंद ताकतों के खिलाफ जिंदगी की आखिरी सांस तक लड़ते रहने का जोश मुकम्मिल हुआ है.

अंत में परिचर्चा में भाग लेने वाले सभी वक्ताओं और श्रोताओं के प्रति आभार प्रदर्शित करते हुए अपने समापन भाषण में डॉ. नामवर सिंह ने कहा कि प्रतिक्रियावाद आज क्रांति के लिबास में आ रहा है और उसने आम जनता के नारे ग्रहण कर लिये हैं. इसलिए हमें यह भली भांति समझना होगा कि प्रतिपक्ष के दो धड़े हैं—एक सी. पी. आई. का और दूसरा गैर-सी. पी. आई. का. साहित्य में भी हमें यह विरोध दो धड़ों में देखना चाहिए. एक पॉजिटिव प्रतिपक्ष है, दूसरा निगेटिव. हमें प्रतिक्रियावाद के खिलाफ लड़ाई में उसके सबसे मजबूत व बड़े गढ़ पर हल्ला बोलना है और यह लड़ाई सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, साहित्यिक—सभी मोर्चों पर लड़ी जायेगी. हमें संयुक्त मोर्चे की नयी अवधारणा ग्रहण करनी है. यह कट्टरपंथी दृष्टिकोण अब पुराना पड़ गया है कि हम सरकार के साथ खड़े हो कर क्यों लड़ें? दूसरी चीज—हमें परंपरा की स्वस्थ सामाजिक व्याख्या करनी चाहिए. और तीसरी अहम बात यह है कि हम रचनात्मक कल्पनाशीलता से संपृक्त हों और हम इस लड़ाई को रचना के स्तर पर ही लड़ें तथा अपनी कृतियों में आम जनता की लड़ाकू प्रवृत्ति को ग्रहण करें.

☐ **ललित मोहन अवस्थी**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौथा समांतर लेखक सम्मेलन : एक रिपोर्ट (५)

गत २७, २८, २९ और ३० जनवरी को मद्रास तथा कालीकट में समांतर लेखकों का चौथा सम्मेलन हुआ, जिसमें हिंदी के अलावा डोगरी, गुजराती, मराठी, तमिल, तेलुगु तथा मलयालम के लेखकों ने भी भाग लिया. मद्रास में, तथा कालीकट में हुई तीन गोष्ठियों की रिपोर्ट आप पिछले अंकों में पढ़ चुके हैं. यहां पढ़िए इस रिपोर्ट की अंतिम किस्त.

२९ जनवरी की रात लोग फिर उसी कमरे जमा हुए और बातों का सिलसिला एक बार फिर शुरू हुआ. बात वैचारिक स्पष्टता को ले कर शुरू हुई, परंतु विषय लेखकीय संवेदना एवं उसकी अभिव्यक्ति के इर्द-गिर्द केंद्रित हो गया. यात्री ने कहा कि जहां एक ओर यह आवश्यक है कि लेखक अपनी राजनीतिक समझदारी में साफ हो और उसे साफ-साफ व्यक्त कर सके, वहीं यह भी आवश्यक है कि वह अपनी रचना में भी ईमानदार रहे, क्योंकि कभी-कभी होता यह है कि लेखक रचना से कुछ कहता है, और तात्कालिक जरूरत के लिए जुबान से कुछ. वैसे एक अच्छा लेखक एक अच्छा वक्ता हो और अपनी बात ईमानदारी से कह सके, तो यह एक आदर्श स्थिति होगी, हालांकि सभी ईमानदार लेखक अच्छे वक्ता हों, यह जरूरी नहीं है.

लेखक की इस कहने की शक्ति का जिक्र करते हुए दामोदर [illegible]दन ने कहा, यह कतई जरूरी नहीं है कि लेखक भाषण देना जाने. मैं खुद नहीं जानता, लेकिन एक बात जानता हूं कि इस देश में गलत निर्णय करने वाले लोग ज्यादातर सात-आठ पैंतरेबाज वक्ता थे. उन्होंने लेखकीय पैंतरेबाजी का जिक्र करते हुए कहा कि आज तमाम नव-प्रगतिशील लेखक बात-बात पर क्रांति की बातें करते हुए उछलने लगते हैं, मगर देश की प्रतिक्रियावादी ताकतों के खिलाफ मोर्चा लेना तो दूर, एक मामूली-सा निंदा-प्रस्ताव पास करने में हद से ज्यादा हिचकिचाते हैं, पीछे हटते हैं. वे इसे राजनीतिक या नागरिक सवाल मानते हैं. पर जब हम नागरिक और लेखक की सत्ता के बीच भेद नहीं करते तो लेखक के नाम पर नागरिक सवालों और नागरिक के नाम पर लेखन के सवालों से कैसे कतरा सकते हैं?

इस पर कामतानाथ ने कहा, सवाल मात्र बोलने और राजनीतिक बात करने का नहीं है. सवाल है, लेखक की अपनी नागरिक समझ और उसके अपने स्टैंड का, और इससे भी बढ़ कर अपनी समझ और स्टैंड को लेखन की गरिमा सहित स्पष्ट रूप से व्यक्त करने का. फिर चाहे यह काम बोल कर किया जाये, रचनात्मक साहित्य लिख कर किया जाये, अथवा टिप्पणी लिख कर. मगर यह कहते हुए अफसोस होता है कि लोग इन बातों से कतराते है और तभी लगता है कि कहीं कुछ गड़बड़ है. क्योंकि अब इसमें शक की गुंजाइश नहीं है कि लेखकीय ईमानदारी और लेखक का अपना कुल पक्ष (टोटल स्टेंड) राजनीतिक समझ के बगैर नहीं निर्मित हो सकता.

हिमांशु जोशी ने कामतानाथ की बात से सहमति प्रकट की. उन्होंने कहा कि इस देश, बल्कि पूरे विश्व, में एक विचित्र स्थिति व्यापी हुई है, इसलिए यह जरूरी है कि इन स्थितियों के लिए जिम्मेदार सारी सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थितियों की हमें जानकारी हो. उन्होंने कहा कि लेखक के लिए अब यह संभव नहीं है कि वह इन स्थितियों के प्रति तटस्थ रहे, क्योंकि अब इससे काम नहीं चल सकता. इस सबके साथ जरूरत इस बात की भी है कि हम समांतर लेखकों की यह समझ समान दिशा की ओर अग्रसर और सही हो, वरना हम लेखक विचारों और उसके लेखन में तालमेल नहीं बैठा पायेंगे.

हृदय लानी ने अपनी बात जरा दूसरे ढंग से रखी. उन्होंने इस देश की तमाम खामोश जनता की तरफ इशारा करते हुए कहा कि इस देश में हजारों लोग ऐसे हैं, जो अपनी तकलीफ कहना नहीं जानते, यहां तक कि वे यह भी नहीं समझ पाते कि जो तकलीफ वे भोग रहे हैं, वह कौन-सी तकलीफ है, तथा इसके लिए जिम्मेदार कौन है. ऐसी स्थिति में आज का लेखक भी अगर खामोश या तटस्थ रहना चाहता है, तो यह बात किसी के गले नहीं उतर सकती. तटस्थता और निस्संगता को आज का साहित्यिक मूल्य नहीं माना जा सकता.

★ ★

धीरे-धीरे बात कहानियों की तरफ मुड़ गयी. और यह गोष्ठी अविस्मरणीय इसलिए बन गयी कि सभी लेखकों ने समांतर लेखन की बेबाक और क्रूर समीक्षा शुरू की. कमलेश्वर ने कहा कि समांतर रचनात्मकता के विरोधी कतिपय लोगों के अपने मंतव्य हो सकते हैं, जिनके तहत वे हमारी रचनाओं पर आक्षेप करते हैं, पर हमें अपनी रचनाओं की गहरी खोजबीन करनी चाहिए, उनकी रचनात्मक क्षमता-अक्षमता की बेबाक परख करनी चाहिए और बिना लाग-लपेट के अपने लेखन की कमजोरियों को समझना चाहिए—स्वयं अपने सामने लाना चाहिए. और इसके बाद सैकड़ों कृतियों की जो समीक्षा शुरू हुई, वह सचमुच अद्वितीय थी. सारे लेखक अपनी रचनाओं की आसक्ति से अलग हट कर विशुद्ध पाठक के रूप में पूरे लेखन का जायजा ले रहे थे. . . हर कमी की ओर इशारा कर रहे थे. बड़ी निर्ममता और गहरी सूझ-बूझ से समांतर लेखकों ने अपने समस्त रच-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नात्मक परिदृश्य का विश्लेषण किया, अपनी कमियों को स्वीकारा और इन कमियों को रचनात्मक स्तर पर दूर करने के लिए कृत-संकल्प हुए. सचमुच यह एक अद्भुत अनुभव था. समांतर लेखन के पॉजिटिव पक्ष का विश्लेषण भी हुआ. आशीष ने श्रवणकुमार की कहानी **'नहीं, यह कोई कहानी नहीं'** का जिक्र करते हुए कहा कि कमलेश्वर की कहानी **'बयान'** के बाद श्रवण की यह कहानी बहुत झकझोरने वाली (डिस्टर्बिंग) कहानी है, जिसमें झुग्गी-झोपड़ी में रहने वाले बेजुबान इनसानों की इंतहाई तकलीफ का बहुत दर्दनाक वर्णन किया गया है.

वीरेंद्र सक्सेना ने से. रा. यात्री की कहानी **'अंधेरे का सैलाब'** को एक महत्वपूर्ण कहानी बताते हुए कहा कि इस कहानी में निम्न-मध्यवर्गीय परिवार के एक तरफ निरंतर टूटने और दूसरी तरफ नव-कुबेरों के निरंतर विकसित होने का बहुत अच्छा वर्णन प्रस्तुत किया गया है.

बात कहानियों पर हो रही थी, इसलिए बहुत-सी महत्वपूर्ण कहानियों की चर्चा हुई. लोगों ने यह महसूस किया कि कमलेश्वर की **'मानसरोवर के हंस'**, कामतानाथ की 'अंत्येष्टि', इब्राहीम शरीफ की **'मक्कार'**, जितेंद्र की **'शहादतनामा'**, आलमशाह खान की **'परायी प्यास का सफर'**, सुदीप की **'अंतहीन'**, लानी की **'दूसरा इसरार'**, राम सुरेश की **'तूती की आवाज'**, जवाहर सिंह की **'आषाढ़ का एक दिन'**, सुभाष पंत की **'गाय का दूध'**, मधुकर सिंह की **'पूरा सन्नाटा'**, हिमांशु जोशी की **'समुद्र और सूर्य के बीच'**, राम अरोड़ा की **'विदा-अलविदा'**, सुधा अरोड़ा की **'दमनचक्र'**, ओम गोस्वामी की **'बर्जुआ'**, सदन की **'हवा'**, मनीष की लघुकथाएं तथा मेहरुन्निसा परवेज, हृदयेश, हबीब कैफी, स्वदेश दीपक, राकेश वत्स, प्रदीप पंत, विमल, मणि मधुकर, सूर्यबाला, शिव शर्मा, प्रभु जोशी, अंजनी आदि की कहानियां पिछली कहानियों से एकदम अलग नजर आती हैं और इनमें निश्चय ही एक ताजगी है, फिर भी लोगों ने महसूस किया कि अभी बहुत सारी कहानियां मध्यवर्गीय चेतना से पूर्ण रूप से मुक्त नहीं हो पायी हैं, और आज जरूरत इस बात की है कि कहानियों में आदमी के संघर्ष, जीवन के विभिन्न क्षेत्रों और वर्ग-चेतना का सम्यक विश्लेषण मिले, कहानियों का परिदृश्य और व्यापक हो . . . ग्रामीण और औद्योगिक यथार्थ की रचनाएं सामने आयें. इसी संदर्भ में शौरिराजन ने आज के समांतर लेखन की शक्ति को स्पष्ट करते हुए कहा कि समांतर लेखक आज के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक प्रश्नों के ज्वलंत पक्षों को लेखन के द्वारा स्पष्ट करने में अपनी पूरी ताकत से जुटा हुआ है.

समांतर लेखन और कहानियों पर बात होते-होते अचानक किसी ने सवाल किया कि क्या एक गैर-जिम्मेदार लेखक की एक अच्छी कहानी को सही कहानी कहा जा सकता है? इस पर कामतानाथ ने कहा, पहली बात तो ऐसा संभव नहीं है, और अगर अपवाद स्वरूप ऐसा हो भी, तो इससे कहानी का महत्व, कुल महत्व या प्रभाव (टोटल इंम्पेक्ट) एकदम उलटा पड़ेगा. तभी किसी ने कमलेश्वर की उस बात की तरफ इशारा किया, जिसमें उन्होंने कहा था कि क्रांति के लिए उचित भूमिका तैयार करने में लेखक का पक्ष बहुत महत्वपूर्ण होता है. आज के लेखक को इस बात की जानकारी निश्चय ही होनी चाहिए कि कहानी या कहानियों द्वारा निर्मित जन की मानसिकता या क्रांति की उचित भूमिका का फायदा गलत लोग न उठाने पायें. यानी लेखक के लिए आज यह बहुत जरूरी हो गया है कि वह 'इस्तेमाल की राजनीति' से पूरी तरह परिचित रहे.

रात के दो बजे रहे थे. अंततः लेखक आज के महत्वपूर्ण मुद्दों पर आपस में बातचीत करते हुए अपने-अपने कमरों की ओर विश्राम करने के लिए चले गये.

दूसरे दिन, यानी ३० जनवरी की सुबह दस बजे सब लोग फिर उसी कमरे में एकत्र हुए और इस बात की जरूरत महसूस की गयी कि समांतर की पिछली गोष्ठियों (बंबई, कानपुर और मांडू) की रपट पढ़ी जाये, ताकि सभी गोष्ठियों में शामिल न हो पाये लोग उन गोष्ठियों के महत्वपूर्ण विचार-विमर्श से अवगत हो सकें. बंबई गोष्ठी की रपट ज्यादातर लोगों ने **'समांतर संकलन—१'** से पढ़ रखी थी. कानपुर गोष्ठी की रपट यात्री ने पढ़ी. और मांडू की कमलेश्वर ने.

रपट सुनने के बाद बातों का सिलसिला फिर शुरू हो गया. आम आदमी, मध्यवर्ग, प्रतिबद्धता, संबद्धता, क्रांति और क्रांति की उचित भूमिका, वर्ग-चेतना आदि विभिन्न पहलुओं पर बातें हुईं और लोगों ने स्वीकार किया कि समांतर सोच ने एक लंबा फासला तय किया है और समांतर-लेखकों में प्रतिबद्धता, संबद्धता और वर्ग-चेतना को ले कर कहीं कोई अस्पष्टता नहीं है.

★ ★

३० जनवरी की शाम अत्यंत महत्वपूर्ण थी. कालीकट में मलयालम के विख्यात लेखकों के साथ मिली-जुली वार्ता का आयोजन था. कालीकट विश्वविद्यालय से बस द्वारा लोग वहां पहुंचे, तो एम. टी. वासुदेवन नायर, एन. पी. मोहम्मद और कुंजब्दुल्ला जैसे लेखक वहां मौजूद थे. और मौजूद थी वहां की तमाम जनता. जिस हाल में आयोजन किया गया था, वह खचाखच भरा था. सबसे पहले इब्राहीम ने समांतर लेखकों का वहां की जनता और मलयालम लेखकों से परिचय कराया. फिर समांतर की मद्रास और कालीकट विश्वविद्यालय में हुई गोष्ठियों का संक्षिप्त परिचय देते हुए इब्राहीम ने कहा कि हम समांतर के लोग किसी भाषा में हमारी तरह सोचने और लिखने वाले लोगों का आदर करते हैं.

इसके बाद सुप्रसिद्ध मलयालम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचारक, संपादक एम.
देवन नायर ने समांतर
का केरल की जमीन पर
करते हुए कहा कि हमारे
मांतर को कोई भी लेखक
नहीं है, क्योंकि हम
लेखन से पूरी तरह परि-
ने का निरंतर प्रयत्न करते
लयालम में हिंदी का काफी
उपलब्ध है. इसीलिए हम
हानी की तमाम धाराओं
तर परिचित होते रहे हैं.
कहा कि दसेक वर्ष पहले हिंदी
में एक दुखद-सा दौर चला
के कहानियां विकृत सेक्स,
पन और व्यक्तिगत कुंठा
निधित्व करने लगी थीं. तब
त दुख होता था– यह जान
कहानी जमीन से उखड़ती
ही है, लेकिन फिर धीरे-धीरे
र लेखकों ने एक ऐसी सोच
हानियों का सृजन किया कि
कहानी प्रेमचंद की कहानी-
से जुड़ गयी है. खुशी होती
ब कहानी आज के आदमी
उसके जीवन के विविध पक्षों
संघर्षों का चित्रण करते हुए
आती है. उन्होंने कहा, यह
य ही एक ऐतिहासिक मौका
र गर्व का विषय है कि आज
कलीफों से जुड़े समांतर
की चौथी गोष्ठी केरल में
है. उन्होंने बताया कि मल-
में भी आज लेखकों की
चिंताएं वही हैं, जो समांतर
की हैं.

(बाद में एक अनौपचारिक
के दौरान एम. टी. वासुदेवन
ने कहा कि हमें समांतर
यों में सम्मिलित हो कर
खुशी होगी.)

न. पी. मोहम्मद ने बहुत
ल्लास भरी, किंतु संक्षिप्त
के दौरान कहा कि समांतर
अब केवल हिंदी का ही नहीं,
लयालम लेखकों का भी लेखन
म भी आप सब की तरह
की जीने की लड़ाई में पूरी
शामिल हैं और आप सबसे
कर, आपकी बात जान कर
स्त अनुभव कर रहे हैं.

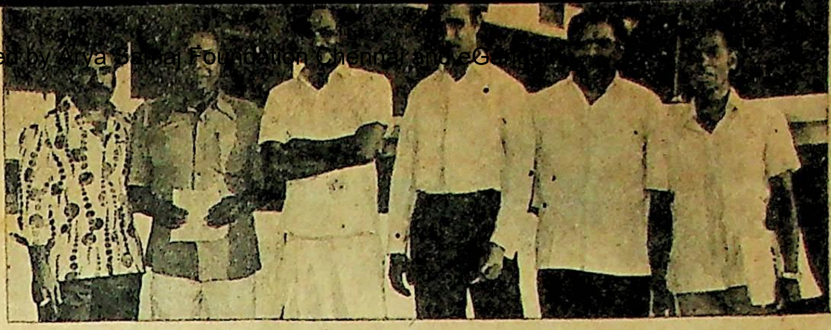

सम्मेलन में भाग लेने वाले कुछ लेखक—(बायें से) कुंजब्दुल्ला, कमलेश्वर, एम. टी. वासुदेवन नायर, इब्राहीम शरीफ, डा. मलिक मोहम्मद तथा एक अन्य लेखक

इसके बाद कुंजब्दुल्ला ने एक संक्षिप्त पेपर पढ़ा, जिसमें उन्होंने बताया कि आज के मलयालम लेखकों की सारी चिंताएं समांतर लेखकों की चिंताओं से अलग नहीं हैं, इसलिए हम मलयालम लेखक अब अपने को समांतर लेखक ही मानते हैं.

कुंजब्दुल्ला के बाद कमलेश्वर ने अपनी बात लोगों के सामने रखी. समांतर लेखन का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि पिछले कुछ वर्षों में भारतीय कहानी में एक अजीब मोड़ आ गया था. कहानी जीवन से कट कर अजनबीयत और शून्य की बात करने लगी थी. लेखक लिखता था, क्योंकि वह सिर्फ लेखक था, आदमी हो कर इस जमीन पर आना, उसकी निगाह में एक इत्तिफाक था, इस लिए आदमी, आदमी का संघर्ष और जीवन उसे या तो रहस्यमय लगता था, या फिर बकवास. उस दौर की तमाम कहानियां एक उलझाव से भरी रहती थीं, जिनमें जिंदगी की बजाय सब कुछ होता था.

उन्होंने उस दौर की कुछ कहानियों का जिक्र करते हुए बताया कि उस दौर की कहानियां बातों, बातों और बातों से भरी पड़ी थीं. नकारवाद उस दौर की कहानियों का मुख्य स्वर था. ऐसे में समांतर के कुछ ईमानदार और जीवन को जीवन मानने वाले लेखकों ने जीवन को जीवन की तरह माना. लोगों को बताया कि जीवन यह है और जीवन ऐसा है, और यह भी बताया कि इस तरह के जीवन को जन्म देने वाली शक्तियों की इस देश में जड़ें बहुत मजबूत हैं.

समांतर लेखकों का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि हममें से तमाम लोग विविध क्षेत्रों से आये हैं. कोई क्लर्क है, तो कोई अध्यापक, कोई खदान मजदूर, कोई डाक्टर, तो कोई इंजीनियर और बहुत-से लोग ऐसे हैं, जो बावजूद अपनी तमाम योग्यता के, अभी कुछ नहीं हैं और जीवन को पकड़ पाने की आपाधापी में लगे हुए निरंतर संघर्ष कर रहे हैं. इसीलिए हमारे लिए आदमी अजूबा नहीं है, उसके संघर्ष अजूबे नहीं हैं और इसलिए आज की पूरी जिंदगी भी अजूबा नहीं है. आम आदमी की जिंदगी के विविध पहलुओं को, चाहे वह किसी भी रूप में हो, हम अपनी कहानियों में निरूपित करते हैं, और इसके साथ ही जिंदगी को इस कदर सड़ा देने वाली पूंजीवादी और साम्राज्यवादी ताकतों के खिलाफ निरंतर जूझते रहना कर्तव्य मानते हैं.

कालीकट (शहर) की इस गोष्ठी के बाद समांतर की यह चौथी गोष्ठी एक नागरिक समारोह के बाद समाप्त हुई, हालांकि बातों, आपसी बातों, मलयालम लेखकों से बातों का सिलसिला बहुत देर तक चलता रहा.

अंत में अलग-अलग गाड़ियां उन्हें उनके शहरों की ओर ले जाने के लिए चल पड़ीं और समांतर का चौथा ऐतिहासिक सम्मेलन तमिल, तेलुगु, मलयालम, हिंदी, गुजराती, मराठी, डोगरी आदि के समकालीन समर्थ और युवा रचनाकारों का अभिनव संगम बन कर समाप्त हुआ. □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवल बिनाका टॉप टूथपेस्ट ही मुँह की पूरी रक्षा करता है

ARMS-CBT/80-608 HN

देखिये!
बिनाका टॉप का
विशेष फैलने वाला
तत्व किस प्रकार
काम करता है।

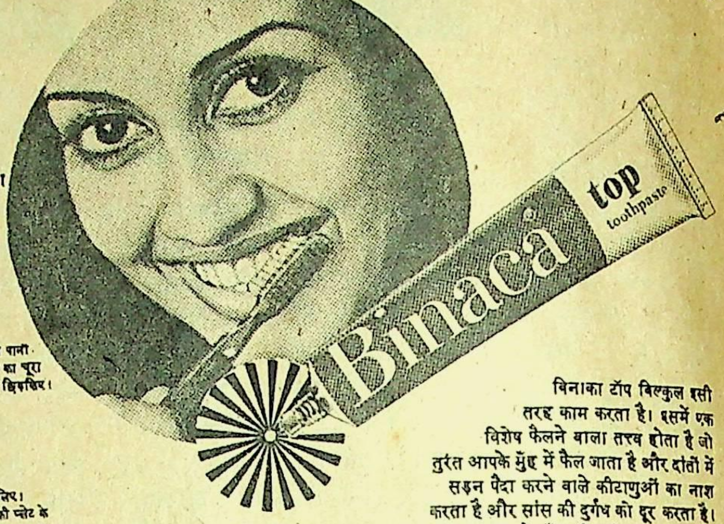

काँच की प्लेट में थोड़ा-सा पानी डालिए। थोड़ा-सा कोयले का चूरा या रंगीन पाउडर पानी पर छिड़किए।

पानी में बिनाका टॉप घोलिए। मिश्रण की एक बूंद काँच की प्लेट के बीचों-बीच डालिए।

अब देखिए कि बिनाका टॉप कितनी तेज़ी से चारों तरफ़ फैलता है... पानी की सतह पर फैले हुए मैल को काटता है और पानी कितना साफ़-सुथरा हो जाता है।

बिनाका टॉप बिल्कुल इसी तरह काम करता है। इसमें एक विशेष फैलने वाला तत्व होता है जो तुरंत आपके मुँह में फैल जाता है और दाँतों में सड़न पैदा करने वाले कीटाणुओं का नाश करता है और सांस की दुर्गंध को दूर करता है। यह आपके मुँह की पूरी रक्षा करता है।

बिनाका टॉप टूथपेस्ट
व बिनाका टूथब्रश मुँह की पूरी रक्षा के लिए

सीबा-गायगी

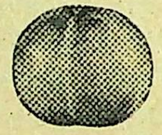

आमला आपके बालों के लिये फ़ायदेमंद है

ज़ुलामला
उस से भी अधिक फ़ायदेमंद है।

HD-3831 A1-H

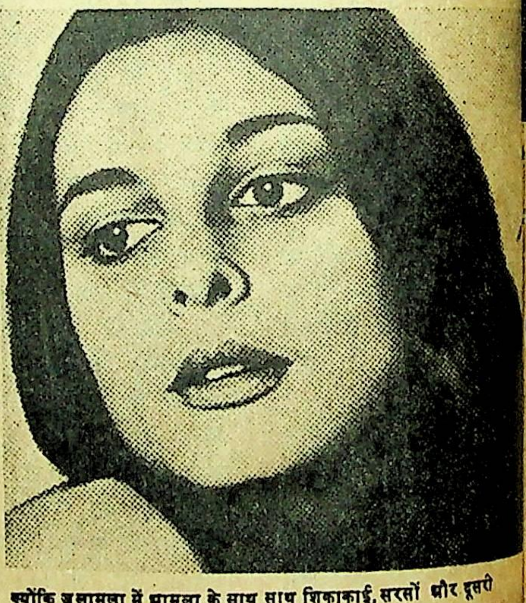

क्योंकि ज़ुलामला में आमला के साथ साथ शिकाकाई, सरसों और दूसरी जड़ी-बूटियां भी शामिल हैं।
ज़ुलामला बालों को धोता ही नहीं बल्कि बालों का पोषण भी करता है। ज़ुला[illegible] की जड़ों में प्राकृतिक चिकनाहट को कायम रखता है जिसे साधारण साबुन और कैमिकल शैम्पू ख़त्म कर देते हैं। यह आप के सिर की ख़ुश्की को दूर करता है, [illegible] गिरने से रोकता है और समय के पूर्व बालों को सफ़ेद होने से बचाता है।

ज़ुलामला बालों की हिफ़ाज़त के लिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जागिए ! जगाए रिचब्रू चाय

लिपटन रिचब्रू चाय से ताज़गी मिले, तबीयत खिले

तन जगाए, मन खिलाए...लिपटन रिचब्रू.
गहरा गाढ़ा रंग, जानदार शानदार स्वाद.
मन आगे आगे, तन में ताज़गी जागे...
जैसे आपको उमंगों में बहा ले जाय!

रिचब्रू...'जग जगाता' स्वाद

लिंटास - LPT.RB.3-140 HI

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेकार के खतरे क्यों उठाओ ?

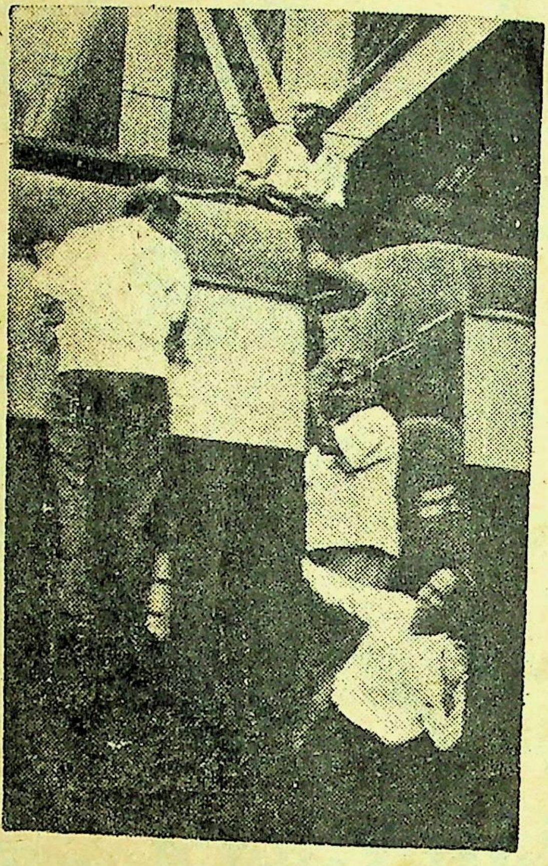

उपनगरीय गाड़ियों के डिब्बों की छतों,
बफरों और खिड़कियों की छड़ों पर चढ़कर
यात्रा न करें ।
इससे आप अपनी जान गवां बैठेंगे
या हाथ-पांव तुड़वा बैठेंगे ।
और फिर यह अपराध भी है ।

मध्य रेल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेनेट ,कोलमैन एंड कंपनी' लिमिटेड, स्वत्वाधिकारी के लिए श्रीकृष्ण गोविंद जोशी द्वारा टाइम्स आफ इंडिया प्रेस, बंबई में मुद्रित व प्रकाशित. पो बाक्स २१३, बंबई–१; दिल्ली आफिस : ७ बहादुरशाह जफर मार्ग, नयी दिल्ली–१; कलकत्ता आफिस : १३ १ और १३/२ गवर्नमेंट प्लेस ईस्ट. लंदन आफिस : ३०–ए, डिस्ट्रिक्ट रोड, सडबरी, वेम्बले, मिडिलसेक्स, यू. के.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1999-2000

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri